दरारें

[उपन्यास]

विनोद रस्तोगी

सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली-७

एक

सहसा आकाश मे बिजली चमकी।

बिजली की कडक से चौक कर चार वर्षीय मुन्ना अपनी बुआ सरला से सट गया। सरला सोती रही।

तभी वर्षा प्रारम्भ हो गयी। बौछार बरामदे मे आने लगी।

जब सरला के पैर भीगने लगे तब उसकी आँख खुली। उसने दरी ऊपर खिसका ली और फिर मुन्ना के ऊपर हाथ रखकर सोने का उपक्रम करने लगी।

"सो गये क्या?" सरला के कानो मे भाभी दया की धीमी आवाज आयी।

"ऊँह! क्या है?" ललित का उत्तर भी उसने सुना।

"बहन बनिये के ब्याज की तरह दिन दूनी रात चौगुनी बढ रही है और तुम हो कि आँखों पर काला चश्मा लगाये बैठे हो।" भाभी की इस बात ने सरला की नीद भगा दी। वह कान लगाकर भैया और भाभी की बात सुनने लगी। सुनती भी क्यों न, वार्ता का विषय भी तो वही थी।

सरला का भाई ललित पच्चीस वर्ष का युवक था। किसी तरह पिता ने बी० ए० तक पढाया था। उनका सपना था कि उनका होनहार

पुत्र डिप्टी कलक्टर बनेगा, जज बनेगा; किन्तु उनका सपना सपना ही रहा। बी० ए० का परीक्षा फल प्रकाशित होने के एक सप्ताह बाद ही वे इस संसार से चल बसे। ललित साल भर सड़कों की खाक छानता रहा, नौकरी दिलाने वाले दफ्तर के सैकड़ों चक्कर लगा डाले पर डिप्टी कलक्टरी और जजी तो दूर किसी ने साधारण क्लर्की भी नहीं दी। घर मे उपवासो की स्थिति आ गयी। सौभाग्य से एक दिन उसे मार्ग मे शकुन मिल गयी। वह उसकी सहपाठिनी रह चुकी थी और वह रायबहादुर मनोहरलाल की पुत्री थी। बातो-बातों मे उसने ललित की वास्तविक स्थिति जान ली। करुणा से उसका हृदय भर आया। उसने अपने पिताजी से कह कर ललित को सौ रुपये मासिक की नौकरी दिला दी। तब से वह रायबहादुर मनोहरलाल के मनोहर जूट मिल मे क्लर्क था। किसी प्रकार गृहस्थी का छकड़ा लचर-पचर आगे बढ़ रहा था।

यद्यपि ललित के परिवार मे केवल पाँच प्राणी ही थे तद्यपि आज के इस मँहगाई के युग में सौ रुपयों मे होता ही क्या है। बीस रुपये का मकान था। मकान भी बस गुजर-बसर योग्य ही था। कमरा नाम की वस्तु एक ही था। उसी मे घर गृहस्थी का सामान रहता था और वही रात को ललित अपनी पत्नी दया और दो वर्ष की मुन्नी के साथ सोता था। कमरे के आगे एक छोटा सा बरामदा था। उसी बरामदे के एक कोने मे चुल्हा था। रात को सरला अपने भाई ललित के चार वर्ष के पुत्र मुन्ना के साथ वही सोती थी। घर में केवल दो चारपाइयाँ थी जो कमरे में रहती थी। सरला और मुन्ना फर्श पर ही सोते थे। बीस रुपये मकान के देकर जो अस्सी रुपये शेष रहते थे उन्ही मे किसी प्रकार घर का खर्च चलता था।

ललित को अगर कोई चिन्ता थी तो वह थी सरला के ब्याह की। वह अठारह वर्ष की पूर्ण युवती हो चुकी थी। उसके हाथ पीले करने की चिन्ता मे ही बिचारा ललित दिन-रात परेशान रहता था। दो-चार

जगह उसने बात भी चलायी थी पर लड़के वालों की माँग हजारों मे थी जिसे पूरा करने की शक्ति उसमें न थी। फलस्वरूप वह मन मसोस कर रह गया था। उसने अपनी पत्नी दया को इस विषय मे कुछ भी न बताया था। दया समझती थी कि उसे सरला की फिकर नही है। इसीलिए वह जब-तब चर्चा छेड़ देती थी। ललित हर बार मौन धारण कर लेता था।

उस रात को भी जब दया ने बात चलायी तो ललित मौन रहा। उसने कोई उत्तर नही दिया दया की बात का।

दया ललित के मौन से चिढ़ गयी। पति के मौन को उसने पत्नी की उपेक्षा और बहन के प्रति उदासीनता ही समझा।

"सुना नही क्या?" दया कुछ जोर से बोली।

"मै बहरा नही हूँ जो चीख रही हो।" ललित ने कहा और फिर करवट बदल ली।

"अभी तुम्हारे कान मे जूँ नही रेंगती। जब कुछ ऊँच नीच हो जायगा तब आटा-दाल का भाव मालुम होगा। दया बोली और फिर वह उठकर बैठ गयी।

ललित फिर भी मौन रहा।

दया उसके हृदय की पीड़ा को न समझ सकी और न वह उसकी आँखों की कोरो मे छलकने वाली आँसू की बूँदों को ही देख सकी।

"मोहल्ले-टोले वाले तो उँगली उठाने ही लगे है।" दया ने फिर प्रहार किया।

इस बार ललित तिलमिला गया। वह उठकर बैठ गया।

"क्या कहते है मोहल्ले-टोले वाले?" उसने कम्पित स्वर में पूछा।

"कहने वाले की जीभ किसी ने पकड़ी है कि तुम्ही पकड़ोगे!"

"मै पूछता हूँ, क्या कहते है मोहल्ले वाले?" ललित के स्वर में तेजी आ गयी।

"कहेंगे नही! घर में सयानी बहन बैठा रक्खी है।" दया ने तेज स्वर में कहा।

सरला ललित और दया की बातें सुन रही थी। उसके हृदय में एक कसक उठी और आँखे छलछला आयी। 'भैया-भाभी के कष्टो की जड में ही हूँ' उसने सोचा। उसके मुख से एक दीर्घ नि:श्वास निकल गया।

"मोहल्ले वालो को बहुत चिन्ता है तो दे क्यों नही देते दस-पाँच हजार! पल भर मे हाथ पीले कर दूँ सरला के। है कोई माई का लाल ऐसा कि सब उँगलियाँ उठाने वाले ही है।" ललित का क्रुद्ध स्वर गूँज गया। आवेश के कारण वह काँपने लगा। उसकी साँसों की गति तीव्र हो गयी।

तभी मुन्नी रोने लगी। दया उसे थपथपाने लगी। वह फिर सो गयी।

"मै कहती हूँ चीखते क्यो हो?" दया धीमे स्वर मे बोली। "क्या सरला को भी जगाने का विचार है?"

ललित कुछ बोला नही।

"रही लेने-देने की बात सो कौन किसे दे देता है। जो कुछ करना है, हमे ही करना है।" दया के स्वर में कोमलता थी।

"तुम समझती हो कि मुझे कुछ चिन्ता नही है।" इस बार ललित का स्वर धीमा था। "तुम क्या जानो कि दिन-रात मै इसी चिन्ता की आग में जलता रहता हूँ। जहाँ-जहाँ बात चलायी वही हजारो की माँग रक्खी गयी। अब तुम्ही बताओ मै कहाँ से लाऊँ इतनी रकम?"

दया को लगा, ललित रो पड़ेगा। उसे आत्मग्लानि हुई कि व्यर्थ ही आधी रात को यह चर्चा चलायी।

"मुझे मालूम न था यह सब।" दया ने गीले स्वर में कहा। "तुमने मुझे बताया भी नही कभी, नही तो मै हमेशा तुम्हे क्यो कुरेदती रहती।"

ललित मौन रहा। बेबसी के आसू पीकर वह लेट गया।

"आखिर फिर क्या सोचा है?" दया ने मीठे स्वर मे पूछा।

"कुछ समझ मे नही आता।" नि:श्वास छोडकर ललित बोला। "अपनी सरला सुन्दर है, घर-गृहस्थी के कामों मे होशियार है, पढी-लिखी भी है। सोचा था, कोई तो लडका ऐसा मिलेगा जिसका संकल्प पैसा नहीं, लड़की ब्याहने का होगा।"

"आजकल लड़की कौन देखता है," दया दार्शनिक भाव से बोली, "सब पैसे के भूखें है, पैसे के !"

"तुम ठीक कहती हो, दया, तुम ठीक कहती हो।" ललित बुदबुदाया।

"न हो तो शकुन से ही.........?"

"यह क्या कह रही हो तुम ?" ललित उचक कर बैठता हुआ बोला। "बहन के ब्याह के लिए शकुन के आगे हाथ फैलाऊँ। नही, मुझसे यह न हो सकेगा। उसने नौकरी दिला दी यही क्या कम है।"

"तब फिर क्या बहन को जीवन भर क्वॉरी ही रक्खोगे ?"

"ब्याह होना न होना भाग्य की बात है।" ललित फिर लेट गया। "लगता है उसके हाथ मे ब्याह की रेखा है ही नही।"

"यह तो कायरो जैसी बात कह रहे हो तुम। ब्याह तो करना ही पड़ेगा, चाहे आज करो चाहे कल। कौन जीवन भर अपनी बहन या बेटी को घर में रख सका है ?" दया ने व्यवहारिक बात कही।

ललित ने करवट बदल ली।

दया ललित की चारपाई पर जाकर उसके पैर दाबने लगी।

"अब सो जाओ। आधी रात हो गयी है।"

"जल्दी क्या है ?" दया पैर दाबती रही। "कल तो इतबार है।"

"इतबार है तो क्या हुआ ! कल भी काम पर जाना है।"

"क्या मिल बन्द नहीं है कल ?" दया ने आश्चर्य से पूछा।

"मिल तो बन्द है, मगर शैलजा की वर्ष गाँठ है कल। रायबहादुर ने सुबह ही घर पर बुलाया है।" ललित ने कहा और फिर वह अपने पैर खीचने लगा।

"रोज चार मील पैदल आते-जाते हो। थक जाते होगे। रोज तो पैर दाब नही पाती, आज ही दाब लेने दो।" दया के स्वर में याचना थी।

"तुम कौन दिन भर आराम करती रहती हो ? सो जाओ, दया। अगर तुम पैर दाबती रहोगी तो मुझे नींद नही आयेगी।"

दया भारी मन लिए अपनी चारपाई पर आ गयी। मुन्नी के पास

लेट कर सजल दृष्टि से पति की ओर देखती रही।

ललित करवटें बदलता रहा। उसे नींद नही आ रही थी।

दूर किसी रईस के चौकीदार ने एक का घन्टा बजाया।

ललित ने करवट नही बदली। वह सो गया।

दया ने गन्दे आँचल से अपने आँसू पोछे और फिर वह भी सोने की चेष्टा करने लगी।

× × ×

सरला की आँखों की नीद उड गयी। उसने ललित और दया की बातचीत का हर शब्द सुना था। वह पहले से ही यह अनुभव करती थी कि भैया की चिन्ता और उदासी का कारण वही है। वह कई बार भगवान से शिकायत कर चुकी थी कि उसने उसे लडकी क्यों बनाया और यदि लड़की ही बनाया था तो उसके भाई को धन क्यों नही दिया। वह एकान्त में कई बार अपने भाग्य को कोस चुकी थी, रो चुकी थी, मृत्यु की कामना कर चुकी थी। उसे लगता था कि जैसे लडकी होना ही पाप है। वह दिन रात इसी उधेड़बुन मे रहती थी कि किस प्रकार भाई की चिन्ता दूर हो।

यही समस्या उस रात को भी विशाल रूप धारण कर उसके सामने आ खडी हुई। अँधेरी, काली रात मे वह और भी भयानक लग रही थी। यदि वह लड़का होती तो वह भाई को चिन्ता, व्यथा और उदासी देने के बजाय हर्ष, उत्साह और सहायता देती। पचास-साठ रुपये महीने वह भी कमाती और तब न तो मुन्ना को छोटी-छोटी चीज़ों के लिए रोना पडता, न भाभी को फटी और गन्दी धोतियाँ पहननी पड़ती और न भैया को ही हर रोज अपने कपडे घर मे धोने पडते। लड़की होकर वह कुछ नहीं कर सकती। वह तो भैया-भाभी के ऊपर भार है। कितना अच्छा होता यदि वह जन्म लेते ही मर गयी होती।

तभी एक विचार उसके मस्तिष्क मे बिजली की तरह कौंध गया। दो दिन पहले वह परोस मे गयी थी। तब उसने अखबार में पढ़ा था कि एक युवती ने अपने निर्धन पिता को चिन्ता के भार से मुक्त करने के लिए

आत्म-हत्या का आश्रय लिया था। उसने गले मे फांसी का फन्दा लगा लिया था। सरला ने विचार किया कि वह भी आत्म-हत्या द्वारा ही भैया को चिन्ता, उदासी और दुख से मुक्त कर सकती है। आत्म-हत्या के लिए कई रास्ते उसके सामने है। वह नदी में डूब सकती है, अफीम खा सकती है, फाँसी लगा सकती है, रेल की पटरी पर लेट सकती है। उसे लगा कि आत्म-हत्या के अतिरिक्त और कोई मार्ग उसके सामने नही है।

सहसा मुन्ना ने उसके ऊपर पैर रख दिया। उसकी विचार-धारा भंग हो गयी। मुन्ना का पैर धीरे से हटाकर उसने करवट बदली और वह फिर सोचने लगी।

आत्महत्या? हाँ, वह कल ही आत्म-हत्या करेगी। कल? हाँ, कल! और परसों ही अखबार में उसका नाम आयेगा। अखबार वाले लिखेगे कि ललित की बहन सरला ने आत्म-हत्या की। नही! इससे तो भैया की बदनामी भी होगी; वे कही मुंह दिखाने लायक नही रहेगे। तब तो कोई और उपाय सोचना होगा! आत्म-हत्या करके तो वह भैया को और दुख ही दे जायेगी। दुखः से पागल होकर वे भी कहीं कुछ ऊँच-नीच न कर बैठे! तब भाभी, मुन्ना, मुन्नी का क्या हाल होगा! नही, वह आत्म-हत्या नही करेगी, नही करेगी।

कोई सपना देखते-देखते मुन्ना चौक पड़ा। वह डरकर घिघियाने लगा। सरला ने तुरन्त करवट बदल कर उसे हृदय से सटा लिया।

"क्यो डरता है तू? मै तेरे पास हूँ।" सरला ने धीमे स्वर में कहा और फिर वह मुन्ना को थपथपाने लगी।

मुन्ना का डर दूर हो गया। वह नीद में ही मुस्करा पडा।

"मै आत्म-हत्या नही करूँगी, नहीं ही करूंगी।" सरला दृढता से बुदबुदायी।

वर्षा थम गयी। हवा मे तेजी आ गयी। बादल छट गये और आकाश मे तारे निकल आये।

दूर के चौकीदार ने दो घन्टे बजाये।

सरला की आँखे खुली रही। वह निर्निमेष दृष्टि से एक तारे को देख रही थी जो सबसे अधिक चमक रहा था।

"आत्म-हत्या समस्या का समाधान नही है।" वह फिर बुदबुदायी। "वह स्वयं एक समस्या है। समस्या से समस्या का समाधान नही हो सकता।"

बाहर का तूफान थम गया था पर सरला के हृदय और मस्तिष्क में भावो और विचारो की जो भयंकर आँधी चल रही थी उसका कोई अन्त नही था।

ऊपर आकाश मे तारे खिले थे मानो तम की लता में ज्योति के फूल हों और नीचे सरला की आँखो में आँसू की बूंदें थी मानों सीपो में दो अनमोल मोती कैद हो।

दो

"अभी तक ललित नहीं आया क्या ?" रायबहादुर मनोहरलाल ने बरामदे मे आकर शकुन से पूछा।

"अभी तो नही आये, पिता जी ! आते ही होगे।" शकुन ने हाथ का समाचार-पत्र सामने पडी छोटी मेज पर रखकर कहा।

रायबहादुर अन्दर चले गये।

रायबहादुर मनोहरलाल नगर के प्रतिष्ठित और धनी व्यक्तियों में थे। कई कम्पनियो के शेयर्स उनके पास थे। मनोहर जूट मिल्स कम्पनी लिमिटेड के तो वे मैनेजिग डायरेक्टर ही थे। नगर मे उनकी काफी इमारते थी जिनसे अच्छा-खासा किराया आता था। उनके रहने की कोठी काफी बडी और सुन्दर थी। बम्बई की एक कम्पनी से कोठी के लिए बहुमूल्य फर्नीचर मंगाया गया था। फर्श पर बिछे हुए कालीन राय-बहादुर स्वय ईरान से लाये थे।

लाखों की सम्पदा के स्वामी थे रायबहादुर मनोहरलाल, किन्तु उस सम्पदा को भोगने वाला कोई न था। दो पुत्रियाँ थीं। मगर पुत्रियों की क्या ? वे तो परायी अमानत होती है। पुत्र का अभाव उनके मन मे रह रहकर कसक उठता था।

उनकी पत्नी का देहान्त तभी हो गया था जब उनकी बडी पुत्री शकुन बारह और छोटी पुत्री शैलजा दस वर्ष की थी। तब से शकुन और शैलजा आठ बसन्त देख चुकीं थीं। शकुन बी० ए० कर चुकी थी और शैलजा बी० ए० प्रीयवियस मे पढ़ रही थी।]

राम और लक्ष्मण एक पिता के पुत्र थे पर उनकी मातायें भिन्न थी। अत. यदि उनके स्वभाव मे आकाश-पाताल का अन्तर था तो कोई विशेष आश्चर्य की बात नही है। शकुन और शैलजा एक ही माँ के गर्भ से उत्पन्न हुई थीं और एक ही पिता की पुत्री थी, फिर भी उनके स्वभाव मे पूर्व-पश्चिम की विभिन्नता थी। शकुन सरल, सीधी और भारतीय परम्पराओं मे विश्वास रखने वाली मृदुभाषिणी युवती थी; शैलजा चपल, पाश्चात्य सभ्यता की पुजारिणी तथा दिन रात फैशन मे डूबी रहने वाली कटुभाषिणी थी। माँ का अतुल सौन्दर्य दोनो के भाग मे आया था। अन्तर इतना था कि शकुन का सौन्दर्य मर्यादाबद्ध सागर की भाति गंभीर था और शैलजा का सौन्दर्य मर्यादा के बन्धन को तोडकर चंचल गति से बहने वाली पहाड़ी सरिता की भाति था।

शकुन समाज-शास्त्र मे रुचि लेती थी। उसका विचार समाज-शास्त्र में एम० ए० करने का था। शैलजा की रुचि काव्य मे थी। वह स्वयं भी गीत लिखा करती थी और कवि सम्मेलनों तथा गोष्ठियों मे जाकर अपना सिक्का जमाती थी। उसका रग कुछ तो इसलिए जम जाता था कि वह मधुर स्वर मे हाव-भाव के साथ गाती थी और कुछ इसलिए कि वह सुन्दर और युवा थी।

शैलजा ने अपनी अठारहवी वर्ष-गाँठ के उपलक्ष मे अपनी जिद से ही कवि गोष्ठी का आयोजन किया था। इस आयोजन के मूल में काव्य-प्रेम की भावना इतनी नही थी जितना कमल के समीप आने और उसकी रचनायें सुनने का लोभ। कमल कानपुर के लिए नया ही था। पहले वह फरुर्खाबाद मे रहता था। परिस्थितियो ने उसे गत वर्ष वहाँ से लाकर कानपुर पटक दिया था। वह पच्चीस वर्ष का दुबला-पतला

युवक था। पहली बार शैलजा ने जब उसे एक कवि सम्मेलन में देखा था तभी वह उस खोये-खोये से रहने वाले युवक की ओर आकर्षित हो गयी थी। उसके दर्दीले गीत सुनकर तो वह सुध-बुध ही खो बैठी थी। उससे बातचीत करके उसने इतना ज्ञात कर लिया था कि वह इस ससार मे अकेला ही है और बेकारी की चक्की मे पिसकर, नगा-भूखा रहकर भी वह अपनी साहित्यिक साधना मे लगा हुआ है। किसी एक मित्र के यहाँ रहता है और उन्ही की दया से पेट भर जाता है। सात महीने बीत गये थे उस प्रथम भेट को हुए। तब वैसे वह बहुधा पत्र-पत्रिकाओं मे तो उसके गीत पढ लेती थी पर सुनने का अवसर कभी नही मिला था। अपनी वर्ष-गाँठ पर कवि-गोष्ठी का आयोजन उसने इसीलिए किया था कि वह कमल के गीत सुन सके, उसके समीप आ सके। कवियों को निमत्रण-पत्र बाँटने का कार्य ललित को सौपा गया था और इसीलिए उसे इतवार के दिन भी बुलाया गया था।

ठीक आठ बजे ललित रायबहादुर की कोठी में पहुँच गया। शकुन बरामदे मे बैठी थी।

"आ गये तुम! अभी-अभी पिता जी पूछ रहे थे।" कुर्सी से उठकर शकुन ने कहा।

"मुझे कुछ देर हो गयी। माफी चाहता हूँ।" ललित ने नीची दृष्टि करके कहा।

"तुम कितना बदल गये हो ललित!" कह कर शकुन फिर बैठ गयी।

"मै नही बदला, समय बदल गया है।" ललित ने धीमे स्वर मे कहा और वह अन्दर जाने लगा।

"रुको तो?" शकुन बोली। "माफी पिताजी से माँगा करो, मुझसे नही। मैं अब भी तुम्हारी पूर्व सहपाठिनी शकुन ही हूँ।"

"मगर मै तो अब आपका नौकर हूँ।"

"अगर फिर कभी ऐसी बात कही तो ठीक नही होगा।" कुर्सी से उठकर ललित के पास आती हुई शकुन बोली। "नौकर तुम पिताजी

के हो सकते हो, मेरे नही।"

"मगर आप . . ।" ललित हकलाया।

"और यह 'आप' भी मै नही सुनना चाहती तुम्हारे मुह से। समझे ?" कह कर शकुन मुस्करा पड़ी।

तभी अन्दर से साज शृगार किये बैग लटकाये आ गयी शैलजा। उसके लिए ललित एक नौकर के अतिरिक्त और कुछ नही था।

"तुम्हे सात बजे बुलाया गया था और तुमने आठ बजा दिये।" वह डपट कर बोली।

"जी. . . . . देर हो गयी। माफी चाहता हूँ।" ललित ने हकला कर कहा।

"कितनी देर से यहाँ खड़े हो ? आते ही अन्दर क्यों नही आये मेरे कमरे में ?" शैलजा लाल-पीली होकर बोली।

"अभी-अभी आ रहा हूँ।"

"आयन्दा अगर काम मे लापरवाही हुई तो डैडी से कहकर एक दिन में निकलवा दूंगी। फिर सिसी भी नही बचा सकेगी तुम्हे।" कहकर उसने तिरछी दृष्टि से शकुन की ओर देखा और फिर वह अपना बैग खोलने लगी।

ललित ने शकुन की ओर देखा। शकुन की दृष्टि में क्षमा याचना थी।

"यह लो लिस्ट ! सब कवियों को कार्ड दे आना।" ललित के हाथ मे लिस्ट देकर शैलजा बोली। "कार्ड डैडी के कमरे मे रक्खे है। जाओ।"

ललित रायबहादुर के कमरे की ओर बढा।

"ठहरो।" कहकर शैलजा उसके समीप पहुँच गयी। "देखो ! लिस्ट मे एक नाम के आगे लाल निशान लगा है। और कोई चाहे आये या न आये मगर उस लाल निशान वाले कवि को जरूर आना चाहिए।" वह धीमे स्वर मे बोली। उसे डर था कि कही शकुन सुन न ले।

"जी, समझ गया।" कहकर ललित आगे बढ गया।

बैग झुलाती हुई शैलजा बरामदे मे आ गयी।

"सुनो तो शैल।" शकुन ने पुकारा।

"क्या है ?". शैलजा के स्वर मे रूखापन था।

"तुमको इस तरह बात नहीं करनी चाहिए थी उससे।" शकुन ने मन्द स्वर मे कहा।

"और क्या मै पूछ सकती हूँ कि क्यो ?" हाथ नचाकर, मुँह बनाकर, अभिनेत्रियों की मुद्रा मे शैलजा बोली।

"क्योकि .. ..।"

"क्योकि वह तुम्हारा क्लास फेलो था।" बीच मे ही शैलजा बोल पड़ी। "क्लास फेलो जब होगा तब होगा, अब तो वह नौकर है हमारा ।"

"नौकर भी मनुष्य होते है, शैल।" शान्त स्वर मे शकुन ने कहा।

"तुम नौकरो को सिर पर बिठा कर नाचो, सिसी, मै नही नाच सकती। मै अपनी नेचर से मजबूर हूँ। आई एम सॉरी। आई कान्ट डू इट।" कहकर शैलजा पोर्टिको मे खडी कार पर जाकर बैठ गयी। इससे पहले कि शकुन कुछ कहे, उसने कार स्टार्ट कर दी और कार एक झटके के साथ कोठी से बाहर निकल गयी।

शकुन को जीवन मे प्रथम बार क्रोध आया; वह भी किसी दूसरे पर नहीं, स्वय अपने पर। वह आराम कुर्सी पर लेट गयी।

रायबहादुर के कमरे से कार्ड का बन्डल लेकर जब ललित बाहर आया तब उसने शकुन को उदास मुद्रा मे आँखे बन्द किये हुए पाया। वह उसकी ओर बढ़ा। उसकी आहट पाकर शकुन ने आँखे खोल दी।

"शैलजा की तरफ से मै माफी माँगती हूँ, ललित !" कुर्सी से उठकर शकुन ने कहा।

"यह क्या कह रही हो तुम !" अनजान मे ही ललित के मुख से 'आप' के स्थान पर 'तुम' निकल गया। फिर उसने भूल-सुधार नहीं किया। "तुम दोनों मे धरती-आकाश का अन्तर देखकर मुझे हँसी आती है।"

"कौन धरती है और कौन आकाश ?" मुस्कराकर शकुन ने प्रश्न किया।

"जो हमसे दूर है, जिसे हम समझ नही पाते वही आकाश है और जो हमारे पास है, जिसके स्पन्दन मे हम अपने स्पन्दन का अनुभव करते है, वही धरती है।" ललित का क्लर्क कही जा छिपा था और उसका स्वतत्र व्यक्तित्व उभर रहा था। वह कहता गया—'शून्य के अतिरिक्त आकाश और कुछ नही है। धरती ठोस है, सत्य है। अब तुम्ही समझ लो कि कौन धरती है और कौन आकाश।"

"क्या मै आकाश हूँ ?" शकुन को शरारत सूझी।

"सम्भव है कुछ लोग चापलूसी करने के लिए तुम्हे आकाश बना दे, पर मेरे लिए तो आकाश कोई प्रशसा की वस्तु नहीं है। प्रशसनीय धरती है जो हमे जीवन देती है। तुम आकाश नही, धरती हो, शकुन। मेरी जीवनदात्री!" कहकर ललित जाने लगा।

"सुनो तो!" शकुन आगे बढ़कर बोली। "सरला का सम्बन्ध कही तय किया ?"

"बात चल रही है। जल्द ही हो जायेगा।" ललित झूँठ बोल गया। उसकी दृष्टि नीची थी। एक पल रुककर बोला—"अब चलता हूँ! कही शैल जी आ गयी तो लेने के देने पड़ जायेगे।"

"वह तो कार लेकर चली गयी है।"

"मगर आज तो कालेज बन्द होगा। आज इतबार है।" ललित समझता था कि कालेज के अतिरिक्त शैलजा और कही जा ही नही सकती।

"वह कालेज नही, कालेज के मित्र के यहाँ गयी होगी।" शकुन ने कहा।

ललित उसका मुह देखने लगा।

"उसका एक सहपाठी है कामेश्वर! दोनो की खूब पटती है। उसी के यहाँ गयी होगी।" शकुन ने बात स्पष्ट की और वह फिर बोली—"मुझे तो लफगा सा लगता है। शैलजा ने उसमे न जाने क्या विशेषता देखी है।"

"अपनी-अपनी पसन्द की बात है।" कहकर ललित तीव्र गति से फाटक की ओर चल दिया।

"शाम को सरला को भी ले आना।" शकुन ने ऊँचे स्वर मे कहा।

ललित रुक गया। मुडकर बोला :

"वर्ष गाँठ तुम्हारी तो है नही।"

"तो क्या हुआ? भूलना मत!" शकुन ने आग्रह किया।

"चेष्टा करूँगा।" कहकर ललित बाहर चला गया।

शकुन बरामदे मे खडी रही। वह सोचने लगी कि ललित ने ठीक ही कहा है। अपनी-अपनी पसन्द की बात है। उसके स्मृति-पटल पर अतीत के वे दिन उभर आये जब वह ललित के साथ पढ़ती थी। वह ललित को पसन्द करती थी; उसकी आँखो मे भविष्य का एक सुन्दर सपना था। पर उसका सपना चूर-चूर हो गया था क्योकि ललित ने उसका प्रेम-प्रस्ताव ठुकरा दिया था। उसने कहा था कि झोपड़ी और महल का कोई साथ नही। उसके प्यार को ललित ने कोरी भावुकता ही कहा था। और तभी ललित का ब्याह हो गया था। शकुन के प्यार का गला घुट गया था।

पर प्यार कभी मरता नही। प्यार तो अजर है, अमर है। प्यार का अन्त विवाह ही नही है। ललित का विवाह किसी दूसरे से हो चुका है, पर इससे क्या! उसको प्यार करने, उसके सुख-दुख मे शामिल होने का अधिकार तो शकुन को है ही।

"शकुन बेटी! जरा यहाँ तो आना!" रायबहादुर की आवाज ने शकुन की विचार-धारा भंग कर दी।

"आई पिता जी।" कहकर वह अन्दर चल दी।

तीन

"कामेश्वर बेटा! जरा यहाँ तो आना।" बाबू श्यामसुन्दर ने उपन्यास की पाण्डुलिपि मेज पर रखते हुए पुकारा।

"अभी आया, मामाजी, पाँच मिनट मे।" कामेश्वर ने अपने कमरे से उत्तर दिया।

बाबू श्यामसुन्दर फिर पाण्डुलिपि पढने लगे।

बाबू श्यामसुन्दर नगर के ही नहीं वरन् प्रान्त के सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक थे। उनके "सुन्दर प्रकाशन मन्दिर" की देश भर मे धाक थी। उत्तर प्रदेश के हाई स्कूल एवं इन्टरमीडियेट बोर्ड मे उनकी दर्जनों पुस्तकें चलती थी। उनका प्रकाशन क्षेत्र केवल हिन्दी तक ही सीमित न था। विश्वविद्यालय मे चलने वाली कई अँग्रेजी की पुस्तकें भी उन्होने प्रकाशित की थी। अन्य प्रकाशको का कहना तो यह था कि उन्होंने अपनी पुस्तके बोर्ड में घूस देकर लगवायी है पर बाबू श्यामसुन्दर हमेशा यही कहा करते थे कि किस्मत हमारे साथ है जलने वाले जला करे।

कोर्स की पुस्तकों के अतिरिक्त वे साहित्यिक पुस्तकें भी छापते थे। हिन्दी के कई प्रतिष्ठित लेखको तथा कवियो की कृतियों के कॉपीरायट खरीद कर वे लाखों कमा चुके थे। साहित्यकारों को कैसे उल्लू बनाया

जाता है यह वे खूब जानते थे। जब बड़े-बड़े महारथियो को वे दम भर में मात दे देते थे तब नये साहित्यकारो की गिनती ही क्या? प्रथम तो वे नौसिखिये लौडों को लिफ्ट देते ही न थे और यदि कभी किसी छोकरे मे प्रतिभा का आभास उन्हे मिल जाता था तो वे उससे कानूनी दाँव-पेच वाला ऐसा कान्ट्रैक्ट करते थे कि फिर वह बिचारा जीवन भर के लिए उनके हाथ बिक जाता था।

कोर्स की पुस्तकों तथा साहित्यिको के शोषण द्वारा उन्होने काफी रुपया एकत्र कर लिया था। आधुनिकतम यन्त्रो से युक्त उनका प्रेस दर्शनीय था। माल रोड पर पुस्तको की जो दूकान थी उसमे हर समय कम से कम पचास हजार का स्टाक रहता था। सिविल लाइन्स मे एक आलीशान बँगला—"सुन्दर-सदन" हाल ही मे बनवाया था। उसी में वे अपनी विधवा बहन गोमती और भानजे कामेश्वर के साथ रहते थे।

जब बाबू श्यामसुन्दर की नि सन्तान पत्नी की मृत्यु हो गयी थी तब उन्होने अपनी बहन गोमती के पुत्र कामेश्वर को अपने पास बुला लिया था। उस समय कामेश्वर सोलह वर्ष का था। तीन वर्ष बाद गोमती विधवा हो गयी और फिर वह भी अपने भाई के यहाँ आ गयी। तब से दोनो वही रह रहे थे। गत ६ वर्षो मे कामेश्वर ने अपने अध्ययन के साथ-साथ प्रेस का भी काफी काम सीख लिया था। बाबू श्यामसुन्दर ने मन ही-मन यह निश्चय कर लिया था कि वे अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति का उत्तराधिकारी कामेश्वर को ही बनायेंगे। गोमती भी यही समझती थी। वह प्रसन्न थी। वह सदैव इस बात का ध्यान रखती थी कि उसके भाई को कोई कष्ट न हो। वह यह नही चाहती थी कि बाबू श्यामसुन्दर दूसरी शादी करे क्योकि तब कामेश्वर के उज्जवल भविष्य का खटाई मे पड़ जाने का भय था।

समय के साथ धीरे-धीरे बाबू श्यामसुन्दर के अपनी समस्त सम्पत्ति का उत्तराधिकारी कामेश्वर को बनाने के निश्चय मे शिथिलता आ रही थी। इसके दो कारण थे। पहला कारण तो यह था कि उनके

कान मे कामेश्वर की कई शिकायते आयी थी। उसकी फिजूल खर्ची से तो वे परिचित थे ही पर जिस दिन उन्हे यह मालूम हुआ था कि वह बुरी सगत मे फँसकर धूम्रपान के साथ-साथ मदिरापान भी करने लगा है, उस दिन वे ठीक से भोजन भी नही कर सके थे। उनके हृदय पर भारी चोट पहुँची थी। उन्होने उसी रात को गोमती से भी इसका जिक्र किया था। गोमती ने उत्तर दिया था—"अभी बच्चा है, भैया। सिर पर जिम्मेदारी पडते ही ठीक हो जायेगा। आप दुखी न हो। मैं समझा दूँगी उसे।" उन्हें यह तो मालूम नही हो सका था कि गोमती ने उसे समझाया है या नही पर इतना वे अवश्य देख और सुन रहे थे कि कामेश्वर की हरकते बन्द नही हुई थी। उनका यह भय विश्वास में बदलने लगा था कि कामेश्वर बिगड चुका है और उनके मरने के बाद वह साल दो साल मे ही सारी सम्पदा फूँक देगा। इसकी कल्पना ही उन्हें कँपा देती थी। इतना वे पूर्ण रूप से समझ गये थे कि कामेश्वर उनका उत्तराधिकारी बनने के योग्य पात्र नही है।

दूसरे कारण का सम्बन्ध उनके हृदय से था। रहरहकर आत्मज का अभाव उनके मन मे काँटे की तरह चुभा करता था। वे सोचा करते थे कि आज अगर अपना बेटा होता तो तो क्यों दूसरे का मुह ताकना पडता। प्रारम्भ मे कामेश्वर को पुत्र रूप मे देखने की जो चेष्टायें उन्होने की थी वे अब निरर्थक सी जान पडती थी। अपना अपना ही होता है और पराया पराया... ..!

बाबू श्यामसुन्दर ने उपन्यास की पाण्डुलिपि फिर मेज पर रख दी और उन्होने फिर कामेश्वर को पुकारा।

"अभी आया, मामाजी!" कामेश्वर ने उत्तर दिया।

तभी दूध का गिलास लेकर गोमती आ गयी।

"दूध पी लीजिये, भैया।" उसने मीठे स्वर मे कहा।

"किसी नौकर से भेज देती। तुमने क्यों कष्ट किया?" गिलास लेकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"नौकरों का क्या भरोसा आजकल! न ठीक से नहाना न धोना! जाने जूठे हाथ भी ठीक से धोते है या नही।" कहकर गोमती कुर्सी पर बैठ गयी।

बाबू श्यामसुन्दर ने दूध पीकर गिलास मेज पर रख दिया।

"क्या कर रहा है कामेश्वर? दो बार बुला चुका हूँ।"

"कोई किताब पढ़ रहा है। आता ही होगा।" कहकर गोमती ने गिलास उठाया और वह बाहर चली गयी।

बाबू श्यामसुन्दर उठकर टहलने लगे।

तभी कामेश्वर ने कमरे मे प्रवेश किया। वह गोरा-चिट्टा सुन्दर जवान था। शार्क स्किन का सूट पहने था। कलाई मे रोमर घडी थी और सीधे हाथ की दो उँगलियो मे बहूमूल्य अँगूठियाँ। एक हीरे की थी; दूसरी मोती की। जेब मे शेफर्स कलम लगा था। काले, मुलायम बालो मे माँग बीच से निकाली गयी थी। मुह मे मगही पान के चार बीडे दबे थे जिससे अधर लाल हो रहे थे। पूरा अभिनेता लग रह था वह। बगल मे फिल्म फेयर की नयी कापी भी दबी थी।

"आ गये!" अपनी कुर्सी पर बैठकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"जी, मामाजी!" कहकर वह दूसरी कुर्सी पर बैठ गया।

"इस उपन्यास के दो-चार परिच्छेद पढ़कर बताओ कैसा है।" कहते हुए बाबू श्यामसुन्दर ने पाण्डुलिपि कामेश्वर को थमा दी।

"मै तो पढ़ भी नही सकूँगा, मामाजी। किसका है? रायटिंग बहुत गन्दा है।" कामेश्वर ने पहला पृष्ठ देखकर कहा।

"बडे लोगों की लिखावट ऐसी ही होती है। यह उपन्यास भारत प्रसिद्ध मधुपजी का है। कोड़ियो उपन्यास लिख चुके है।" बाबू श्याम सुन्दर ने बताया।

"आप न जाने क्यों बड़े लेखकों के वर्क्स लेते है। उनमें अब रह ही क्या गया है? राटन! ट्रैश!! नाम बड़े और दर्शन थोड़े। मैं कहता

हूं, नयी प्रतिभाओं को प्रकाश मे लाइये, मामाजी !" कामेश्वर ने पाण्डु-लिपि मेज पर रख कर कहा।

"मै उपन्यास पर तुम्हारा मत चाहता हूँ, अपनी प्रकाशन-नीति पर नही।" चिढकर बाबू श्याममुन्दर बोले।

"जी।" कहकर कामेश्वर ने पाण्डुलिपि उठा ली। वह पढ़ने लगा। उपन्यास गभीर और मनोविश्लेषणपूर्ण था। पहला पृष्ठ ही पढना। कठिन हो गया उसके लिए। उसकी रुचि सस्ते साहित्य के प्रति थी कामुकता पूर्ण अमेरिकन उपन्यास पढकर मानसिक भोग का आनन्द लेने वाले लाखो भारतीय युवकों मे से ही था वह भी। उसे हिन्दी का वह उपन्यास बोझिल लगा।

"मुझे तो बिल्कुल पसन्द नही है।" कहकर उसने पाण्डुलिपि फिर मेज पर रख दी।

"क्यो?" बाबू श्यामसुन्दर ने प्रश्न किया।

"क्यो? बस पसन्द नही है, और क्यो?" कहकर कामेश्वर उठ खड़ा हुआ।

"पसन्दी-नापसन्दी का कारण होता है, आधार होता है। मै कहता हूँ, अमेरिकन उपन्यास न पढ़ा करो। तुम्हारी रुचि विकृत कर दी है उन्होने।" बाबू श्यामसुन्दर कुछ कडे स्वर मे बोले। "और न यह फिल्म-फेयर ही उद्धार करेगा तुम्हारा।"

कामेश्वर ने सोचा कि बुरा फँसा। न जाने किस मनहूस का चेहरा देखकर उठा था। फिर उसे ध्यान आया कि उठते ही उसने दर्पण मे अपना ही चेहरा देखा था। यह सोच कर उसे हँसी आ गयी।

"मेरी बात पर आज हँस रहे हो तुम! मगर याद रखना.....।"

"जी, मै आपकी बात पर नही हँस रहा था, मामाजी। मैं....मैं... तो......।" कामेश्वर आगे न बोल सका।

'सुन्दर-सदन' के पोर्टिको मे कोई कार आकर रुकी।

कामेश्वर द्वार की ओर बढ़ा।

"ठहरो!" बाबू श्यामसुन्दर तेज स्वर मे बोले। "यह उपन्यास ले जाओ। पूरा पढ़कर मुझे इसकी कहानी संक्षेप में सुनाना।"

कामेश्वर पर बज्रपात हुआ। लौटकर उसने पाण्डुलिपि उठा ली। उसी समय माली अन्दर आया।

"शैलजा बिटिया आयी है।" उसने कामेश्वर से कहा ।

"शैलजा? कौन शैलजा?" बाबू श्यामसुन्दर ने कामेश्वर से प्रश्न किया।

"रायबहादुर मनोहरलाल की लड़की है। मेरे साथ पढ़ती है।" कहकर कामेश्वर बाहर जाने को उद्यत हुआ।

"यहीं भेज दो।" बाबू श्यामसुन्दर ने माली को आज्ञा दी।

माली चला गया।

मन मार कर कामेश्वर वहीं बैठ गया। पाण्डुलिपि मेज पर रखकर उसने शान्ति की साँस ली।

शैलजा ने कमरे मे प्रवेश किया।

बाबू श्यामसुन्दर को देखकर वह कुछ झिझकी। वह समझती थी कि कामेश्वर अकेला ही होगा।

"आओ बेटी! यहाँ बैठो।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने एक कुर्सी की ओर संकेत किया।

शैलजा सिकुडी सी बैठ गयी। विचित्र दशा थी उसकी।

"तुम कामेश्वर के साथ पढती हो?" बाबू श्यामसुन्दर ने पूछा।

शैलजा ने सिर हिला दिया।

"कैसे कष्ट किया?" उन्होने फिर पूछा।

कामेश्वर मन ही मन कुढ़ रहा था।

"आज मेरा जन्म-दिन है। उसी की दावत देने आयी थी।" शैलजा धीमे स्वर मे बोली।

कामेश्वर ने सोचा कि यदि वह मौन रहता है तो मामाजी न जाने क्या-क्या प्रश्न पूछ डालेगे। उसने बीच मे बोलना ही उचित समझा।

"यह मेरे मामाजी है, शैल !" वह बोला। "चोटी के प्रकाशक है। और यह रायबहादुर मनोहरलाल जी की सुपुत्री है, मामाजी ! बहुत अच्छी कविता लिखती है।"

"अच्छा ! तो तुम कविता भी लिखती हो ?" बाबू श्यामसुन्दर प्रसन्न होकर बोले। "यह तो बहुत अच्छी बात है। कभी सुनाना मुझे।"

बात का रुख बदलता देखकर कामेश्वर प्रसन्न हो उठा।

"कविता लिखती तो क्या, हाँ कोशिश जरूर करती हूँ।" शैलजा संकुचित होकर बोली। "आज कवि-गोष्ठी है मेरे यहाँ। शाम को सात बजे। आप भी आने का कष्ट करे।"

"जरूर आऊँगा।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"कार्ड लाना तो मै भूल ......।"

"जब तुम खुद ही कह रही हो तब कार्ड की क्या जरूरत है। मै जरूर आऊँगा। देखूँगा, हमारी नयी पीढी किधर जा रही है, क्या लिख-पढ़ रही है।" बीच मे ही बाबू श्यामसुन्दर बोल पड़े।

"गोष्ठी के बाद प्रीति-भोज भी है।" दृष्टि नीची करके धीमे स्वर मे शैलजा बोली।

"यह तो और भी अच्छी बात है।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर हँसने लगे।

"अब आज्ञा दीजिए।" कहकर वह खडी हो गयी। उसने कामेश्वर की ओर देखा।

उसकी आँखों का भाव समझकर वह भी उठ खड़ा हुआ।

"मुझे प्रोफेसर शर्मा के यहाँ जाना है, मामाजी।" उसने डरते-डरते धीमे स्वर मे कहा।

"अरे ! उधर तो मै भी जा रही हूँ। चलो, छोड़ दूँगी तुम्हें वहाँ।" शैलजा बोली।

"चलो।" कहकर कामेश्वर शैलजा के साथ चल दिया।

बाबू श्यामसुन्दर के अधरों पर एक मधुर मुस्कान खेल गयी।

बाहर से कार स्टार्ट होने की आवाज आयी। कार बाहर गयी और चौकीदार अन्दर आया। उसके पीछे 'राम ऐण्ड श्याम कं०' का मैनेजर था। बाबू श्यामसुन्दर समझ गये कि वह कामेश्वर के बिल वसूलने आया है।

"आइए, बैठिए।" उन्होंने पास वाली कुर्सी की ओर सकेत किया।

मैनेजर बैठ गया।

चौकीदार बाहर चला गया।

"कहिये, कैसे कष्ट किया?" बाबू श्यामसुन्दर ने पूछा।

"काफी लम्बा बिल हो गया है छोटे बाबू का। उसी सिलसिले में आया था।" मैनेजर ने कहा।

"मगर दो महिने पहले तो हिसाब साफ कर दिया गया था। करीब पाँच हजार रुपये दिये थे। अब कितना है?" बाबू श्यामसुन्दर ने आश्चर्य से पूछा।

"साढे सात हजार।" कहकर मैनेजर ने बिलो की कापियाँ उनकी ओर बढ़ा दी।

साढे सात हजार! बाबू श्यामसुन्दर का सिर चकरा गया। यह लडका तो रुपया बहाने पर तुला है। दो महीने मे साढ़े सात हजार का सामान!!

बिल देखकर वे चक्कर मे पड गये। एक-एक हजार की दो अँगूठियाँ! ढाई हजार का एक जड़ाऊ हार!! पाँच-पाँच सौ की दो जनानी घड़ियाँ!!! चार-चार सौ की पाँच साडियाँ!!! और यह सब सामान हवा मे उड गया। घर मे कोई भी चीज नही आयी।

"आप जानते है कि उसकी अभी शादी नही हुई है। फिर आप ऐसा सामान उसे देते क्यो है?" क्रुद्ध होकर बाबू श्यामसुन्दर बोले। उनका खून खौलने लगा था।

"जी.....।"

"मै आपको पहले भी मना कर चुका था। मैं कुछ नहीं जानता।

जो सामान लाया है उसी से दाम वसूल करो।" आवेश में आकर बाबू श्यामसुन्दर टहलने लगे।

"जी हम लोग तो मना करते हैं मगर छोटे बाबू लडने को तैयार हो जाते हैं।" मैनेजर विनम्र स्वर में बोला।

"आप जानते है यह सब सामान कहाँ जाता है ?"

"जी.....।"

"आवारा छोकरियों के घर। यह लडका मुझे मिटाने पर तुला है।" कहकर वे फिर बैठ गये। दोनों हाथों से वे अपना मस्तक दबाने लगे। उनके मस्तक की नसें फूल आयी थी।

मैनेजर चुपचाप बैठा रहा। उसे विश्वास था कि पैसा डूबेगा नहीं।

"कान खोल कर सुन लो," एक क्षण बाद बाबू श्यामसुन्दर बोले। "अगर अब आपने एक पाई का भी सामान उसे दिया तो मैं जिम्मेदार नहीं हूँ। समझे! अब जाइए आप! कल साढ़े सात हजार का चेक पहुँच जायेगा।

मैनेजर चला गया।

बाबू श्यामसुन्दर की बेचैनी बढती गयी। काश! आज अपनी सन्तान होती! एक टीस सी उठी उनके हृदय में! अब भी समय है। अभी कुछ नहीं बिगडा है। कुछ करना चाहिये। अपनी सन्तान! अपना बेटा!! अपना खून!!!

पलक मारते ही उन्होंने निश्चय कर लिया। अपनी सन्तान! अपना बेटा!! अपना खून!!!

उठकर वे उस कोने में गये जहाँ फोन रक्खा था। फोन उठाकर उन्होंने नम्बर मिलया।

"दैनिक विश्वमित्र कार्यालय।" उधर से स्वर आया।

"अवस्थी जी से बात कराओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

उनके स्वर में संकल्प की दृढ़ता थी।

चार

रायबहादुर की कोठी के बाहर आकर ललित ने रिक्शे के लिए इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी। उसे कहीं रिक्शा न दिखायी दिया। प्रतीक्षा करना व्यर्थ समझ वह पैदल ही चल दिया। उसके हाथ में कार्डों का बन्डल था, जेब मे शैलजा की दी हुई लिस्ट और रायबहादुर द्वारा दिये गये एक-एक रुपये के तीस नये नोटो की गड्डी थी, मस्तिष्क मे विचारों का बवंडर था। वह सोच रहा था शकुन के बारे में, बीते हुए विद्यार्थी जीवन के बारे में। विचारों के सागर मे डूबता-उतराता वह सिर झुकाये मन्द गति से चला जा रहा था।

रिक्शे की घटी सुनकर वह चोक पडा। एक खाली रिक्शा उसकी बगल से निकला। रिक्शा रोककर वह उस पर सवार हो गया। रिक्शा आगे बढ़ा।

ललित ने सोचा कि पहले उसी भाग्यशाली कवि के यहाँ चलना चाहिए जिसके नाम के आगे शैलजा ने लाल निशान लगाया है। जेब से लिस्ट निकाल कर उसने देखा। जिस नाम के आगे लाल निशान लगा था वह था—'कमल जी, द्वारा राममोहन मिश्र. ५५।८, राममोहन का हाता।'

"राममोहन के हाते चलो।" ललित ने रिक्श वाले को आदेश दिया।

"यह किधर है, मालिक ?" रिक्शे वाले ने पूछा।

"तुम्हे यह भी नही मालूम ! कैसा रिक्शा चलाते हो ?" हँसकर ललित बोला।

"अभी नया हूँ, मालिक।" कहकर रिक्शे वाले ने घटी बजादी।

"प्रयाग नरायन का शिवालय जानते हो ?" ललित ने पूछा।

"वही, जहाँ औरतो का बाजार है।"

रिक्शे वाले की बात सुनकर हँसी आ गयी ललित को। बोला—"हाँ भाई वही। बस उसी के आगे है राममोहन का हाता।"

"समझ गया, मालिक।" कहकर रिक्शे वाला तेजी से पैर चलाने लगा।

ललित फिर अपने विचारो मे डूब गया।

इस बार उसकी विचार-धारा अतीत और वर्तमान के तटों से टकराती हुई बह रही थी। अतीत की सुखद स्मृति को वर्तमान का वैषम्य रह रह कर झकझोर देता था।

अतीत की स्मृति का आधार थी शकुन और वर्तमान की विषमता, बेबसी और पीडा का आधार थी सरला।

शकुन और सरला !

सरला और शकुन !!

"अन्दर चलूँ, मालिक ?" रिक्शेवाले के प्रश्न से ललित चौक पड़ा।

रिक्शा राममोहन के हाते के फाटक पर खड़ा था।

ललित उतर पड़ा। उसने रिक्शेवाले को एक रुपये का नोट दिया।

"कितना लौटा दूँ, मालिक ?" रिक्शेवाले ने बंडी की जेब से रेजगारी निकालते हुए पूछा।

"अठन्नी।"

अठन्नी लेकर ललित हाते के अन्दर घुसा। जेब से लिस्ट निकाल

कर एक बार उसने फिर कमल का पता देखा और फिर मकानो के नम्बरो को देखता हुआ आगे बढने लगा।

पाँच मिनट बाद ही उसे अभीष्ट मकान मिल गया।

"कमल जी है क्या ?" उसने आवाज दी।

एक क्षण बाद एक नवयुवक बाहर आया।

"कमल जी आप ही है क्या ?" ललित ने पूछा।

"नही भाई !" नवयुवक बोला। "वे आपको खन्ना पार्क मे मिलेगे।"

ललित ने प्रश्न भरी दृष्टि से नवयुवक की ओर देखा।

"इस गली के छोर पर एक छोटा सा पार्क है। वही मिल जायेगे।" कह कर नवयुवक अन्दर जाने लगा।

"सुनिये तो।" ललित ने पुकारा। "मै उन्हे पहचानूँगा कैसे ? पार्क मे तो बहुत से लोग होगे।"

"आप उन्हे पहचान लेगे। तहमद और गंजी पहने है। बाल बडे-बडे है। किसी एकान्त कोने मे बैठे या लेटे कविता गुनगुना रहे होगे।" हँसकर नवयुवक ने कहा और फिर वह अन्दर चला गया।

ललित आगे बढ़ गया।

गली के छोर पर पार्क था। वह अन्दर गया। मोहल्ले के बच्चे वहाँ खेल रहे थे।

उसने चारों ओर दृष्टि दौडायी।

एक बेंच पर तहमद और गजी पहने, बडे-बड़े बालों वाला एक गौरवर्ण युवक आँखे बन्द किये बैठा था।

ललित उसकी ओर बढा।

"क्षमा कीजियेगा," ललित बेंच के समीप पहुँचकर बोला। "क्या आपका ही नाम कमल जी है ?"

"जी हाँ !" आँखे खोल कर ललित को ध्यान से देखता हुआ कमल बोला। "आपको कुछ आपत्ति है ?"

"मुझे क्या आपत्ति हो सकती है!" कहकर वह बेंच पर बैठ गया। उसने देखा कि कमल की गंजी फटी है और तहमद गन्दा है।

"आपका कार्ड है।" कहकर ललित ने कार्ड कमल की ओर बढ़ा दिया। कार्ड लेकर कमल ने पढ़ा। उसमें लिखा था :—

"प्रिय महोदय,

परमपिता परमेश्वर की अनुकम्पा से आज मेरी छोटी पुत्री शैलजा की अठारहवीं वर्षगाँठ है। इसी उपलक्ष में मैंने अपने निवास-स्थान, मनोहर विला, न्यू सिविल लाइन्स, में सन्ध्या को सात बजे एक कवि-गोष्ठी का आयोजन किया है। गोष्ठी के पश्चात् प्रीति-भोज होगा। आप सादर निमन्त्रित हैं। आशा है आप अपनी उपस्थिति से मुझे अनुग्रहित करेंगे।

भवदीय

रायबहादुर मनोहरलाल"

कार्ड पढ़कर कमल ने फिर आँखें बन्द कर लीं।

"आप आयेंगे न?" ललित ने पूछा।

कमल ने आँखें खोलकर ललित की ओर देखा; फिर तहमद की टेंट से बीड़ी का बन्डल और दियासलाई निकालकर एक बीड़ी जलायी। एक कश खींचकर धुआँ छोड़ता हुआ वह अनमने भाव से बोला:— "नहीं।"

"जी!" घबरा गया ललित।

"मैं नहीं आ सकूँगा।" कमल ने कहा और फिर एक कश खींचा।

"मगर... मगर आप कवि-सम्मेलनों में जाते तो हैं।"

"जाता तो हूँ, मगर उन्हीं में जो ढंग के होते हैं। शादी-व्याह, टीका, जनेऊ, जन्म-दिन आदि के उपलक्ष में आयोजित सम्मेलनों में मैं भाग नहीं लेता।" कमल ने कुछ तेज स्वर में कहा।

"मगर क्यों?" ललित ने प्रश्न किया।

"आप लोगों ने कवियों को भांड समझ रक्खा है क्या? घर में

कोई काम-काज हुआ और बुला लिया कवियों को। अगर मनोरजन ही करना है तो मुजरा क्यों नही कराते ?" आवेश मे आकर कमल का स्वर क्रुद्ध हो गया।

ललित को कोई उत्तर नही सूझा। वह चुपचाप सिर नीचा किये बैठा रहा।

"कह देना रायबहादुर से जाकर कि प्रीति-भोज के लालच में आने वाले लोगो मे मै नही हूँ। समझे! अब आप जा सकते है।" कहकर कमल ने फिर आँखे मूँद ली और वह कुछ गुनगुनाने लगा। बीडी उसने दूर फेंक दी।

ललित को पार्क घूमता सा दिखाई दिया। उसे लगा जैसे बेंच हिल रही है, बच्चे हवा मे उड रहे है। वह जानता था कि यदि कमल न गया तो शैलजा उसपर बहुत बिगडेगी और फलस्वरूप उसकी नौकरी खटाई मे पड जायेगी। एक ओर कमल को अवश्य लाने के लिये शैलजा की कठोर आज्ञा थी, तो दूसरी ओर वहाँ न जाने का कमल का दृढ सकल्प था। वह क्या, करे, क्या न करे!

"अगर आप न आये तो ..तो मुझे नोकरी से निकाल दिया जायेगा।" ललित ने कुछ सोचकर धीमे ओर उदास स्वर मे कहा।

कमल ने गुनगुनाना बन्द कर दिया। आँखें खोलकर उसने प्रश्न भरी दृष्टि ललित पर डाली।

"शैलजा जी चाहती है कि आप अवश्य आये। यह देखिये। उन्होंने आपके नाम के आगे लाल निशान भी लगा दिया है।" कह कर ललित ने लिस्ट कमल को थमा दी।

कमल ने लिस्ट बिना देखे ही लौटा दी। उसकी स्मृति-पट पर एक कवि सम्मेलन का वह दृश्य उभर आया जब उसका शैलजा से प्रथम परिचय हुआ था और जब प्रथम परिचय मे ही शैलजा ने उसके निकट—बहुत निकट आने की असफल चेष्टा की थी। उसी दिन वह समझ गया था कि शैलजा तितली है—चंचल, शोख और स्वच्छन्द!

"अगर आप न आये तो वे मुझे नौकरी से निकाल देगी। मै बेकार हो जाऊँगा; मेरे बाल-बच्चे भूखो मर जायेगे।" ललित का स्वर भावी की आशका से कॉप गया।

कमल ने ललित की ओर देखा और फिर कुछ देर तक देखता ही रहा।

ललित को आशा की किरण दिखाई दी।

"बेकारी और भूख की ज्वाला की तपन का अनुभव मुझे है।" रुक-रुक कर कमल बोला। "मै किसी को भी उस आग मे झोकने का अपराध नही कर सकता।"

"तो आप. ...।"

"मै आऊँगा! अवश्य आऊँगा!!" कहकर कमल ने दूसरी बीडी जलाई।

"बहुत-बहुत धन्यवाद।" कृतज्ञता के स्वर मे ललित बोला और फिर उठकर पूछाः—"आपके लिए कार भेज दूँ या आप रिक्शे-तॉगे से आयेगे?"

कमल ने दृष्टि उठायी।

"अगर रिक्शे-तॉगे से आये तो किराया दे दूँ।" कहकर ललित ने जेब से नोटो की गड्डी निकाल ली।

"गड्डी जेब मे रख लीजिये।" कमल का स्वर कठोर हो गया। "मै पैदल ही आऊँगा।"

"जी ....?"

"अब जाइये आप।" कमल ने कहा। वह फिर आँखे बन्द करके गुनगुनाने लगा।

ललित ने गड्डी जेब में रख ली। वह पार्क के फाटक की ओर चला।

फाटक पर पहुँच कर उसने मुड़कर देखा।

कमल तीसरी बीड़ी जला रहा था।

ललित को लगा जैसे वह गोष्ठी मे सम्मिलित होकर अपने आदर्शो और सिद्धान्तो का गला घोट रहा है। उसी की पीड़ा और व्यथा उसकी आत्मा को कोच रही है। और वह उस पीड़ा एव व्यथा को भस्म करने के लिये बीड़ी की आग का आश्रय ले रहा है।

कमल के प्रति अपार श्रद्धा लेकर ललित पार्क से बाहर निकल आया। 'गरीबी स्वाभिमान का गला नही घोट सकती।'' वह बडबड़ाया।

हाते से बाहर निकल कर उसने फिर रिक्शा किया और वह अन्य कवियो को कार्ड देने चल पडा। वैसे तो कानपुर के हर मोहल्ले मे दर्जनो युग प्रवर्तक-आचार्य और युग निर्माता कवि रहते है और यदि सबको आमत्रित किया जाये तो सख्या सैकडो पर पहुँचे, किन्तु शैलजा ने चुने-चुने कवियो को ही बुलाया था। कमल के अतिरिक्त लिस्ट मे दस नाम और थे। उन्हे कार्ड देने के लिए घन्टे भर का समय पर्याप्त था।

दस मे से प्रत्येक कवि ने पहले तो स्वाभाववश नखरे दिखाये पर बाद मे आने के लिए राजी हो गये। वास्तविकता तो यह थी कि वे रायबहादुर का निमत्रण पाकर प्रसन्न थे। रायबहादुर की कोठी में आयोजित कवि-गोष्ठी में सम्मिलित होना उनके लिये परम सौभाग्य की बात थी। कवि को सुनाने का रोग तो होता ही है। सुनने वाला चाहिए। फिर सुनने वाले के कान भले थक जायें मगर मजाल है कि कवि महोदय का मुह थके। हाँ, बीच-बीच मे दाद, चाहे वह झूठी ही क्यो न हो, मिलती रहनी चाहिए।

ललित ने सवारी के बारे मे पूछा तब हर एक ने रिक्शे-ताँगे से ही जाने की इच्छा प्रकट की। कार से जाने में किराये का ढग तो था नही। ललित ने हर एक को दो-दो रुपये दे दिये। ललित समझ गया कि इन दो रुपयो से लान्ड्री मे 'अरजेन्ट' कपड़े धुलाये जायेंगे, शेव कराया जायेगा, जूतों पर पालिश करायी जायेगी। गरज यह कि रायबहादुर के यहाँ जाने योग्य चोला बनाया जायेगा।

निर्मंत्रण-पत्र बाँटकर ललित ने सन्तोप की साँस ली। 'मेघ पुष्प' मे जाकर उसने एक प्याली चाय का आर्डर दिया और फिर एक खाली कुर्सी पर बैठकर कमल तथा अन्य कवियो के बारे में सोचने लगा। उसे लगा कि परिस्थितिओं की आँधी मे भी अडिग रहने वाला कमल ही है; अन्य कवि झुक गये है, वे अपने को समय के हाथो बेच चुके है। अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए हर एक ने किसी न किसी गुट से अपना नाता कर लिया है जब कि कमल गुटबाजी से दूर रहकर साधना कर रहा है। उसकी रचनाओ मे किसी वाद की मोहर नही है; वह भी वही लिखता है जो उसका हृदय अनुभव करता है।

वेटर चाय का प्याला मेज पर रख गया। गर्म चाय से धुए की नागिन बल खाती, इठलाती निकल रही थी।

"और सब तो धुये के बादल की तरह मिट जायेगे पर कमल जिन्दा रहेगा।" ललित के मुख से निकल गया।

चाय की प्याली उठाकर उसने मुख से लगा ली।

पाँच

जैसे ही कार बँगले से निकलकर सडक पर आयी, शैलजा बोली .—

"तुम्हारे मामा तो अजीब आदमी है।"

शैलजा कार चला रही थी। उसके काले-घुघराले बाल हवा मे लहरा रहे थे। हल्के धानी रग की रेशमी साडी मे वह परी सी लग रही थी। आँखों पर बहुमूल्य चश्मा लगा था। धूप के चश्मे का प्रयोग वह आँखों को धूप की तेजी से बचाने के लिए कम, अपने सौन्दर्य मे चार चाँद लगाने के लिए अधिक करती थी।

कामेश्वर उसके पास ही बैठा था। शैलजा की बात सुनकर बोला .—

"लाखो मे एक है मेरे मामाजी।"

"तभी तो उनपर फूलते हो तुम।" कहकर शैलजा हँस पड़ी।

शैलजा के व्यंग्य को कामेश्वर ने समझ तो लिया पर वह बात को घुमा कर बोला :—

"मै अगर फूलता हूँ तो सिर्फ एक चीज पर।"

शैलजा ने प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा।

"मै अपने दिल पर फूलता हूँ।" कामेश्वर अपने हृदय पर हाथ रखकर बोला। "प्यार को किसी सहारे की जरूरत नहीं होती। सहारा

तो सौन्दर्य लेता है।"

कामेश्वर ने अपना हाथ शैलजा के कन्धे पर रख दिया।

"प्यार किसी का सहारा नही लेता?"

"नही।" कामेश्वर के हाथ का दबाव बढ़ गया।

"माई गाड! क्या एक्सीडेन्ट कराने का इरादा है? हाथ तो हटाओ।" कहकर शैलजा ने हार्न बजाया।

कामेश्वर ने मुस्कराकर हाथ हटा लिया।

"और सौन्दर्य किसका सहारा लेता है?" शैलजा ने हँसकर पूछा।

"मेक-अप का। बिना पाउडर और लिप-स्टिक के रूप दो कदम भी नही चल सकता।"

शैलजा ने कार मे लगे हुए दर्पण मे अपना मुख देखा। पाउडर तो ठीक था पर लिप-स्टिक गहरी हो गयी थी। मुस्करा कर बोली:—

"जल्दी में थी इसी से लिप-स्टिक गहरी हो गयी।" और फिर कामेश्वर के बालों की ओर देखते हुए उसने कहा—"और तुम्हारे बालो में भी तो तेल बुरी तरह चमक रहा है।"

कामेश्वर ने बालो पर हाथ फेरा। हाथ मे तेल की स्निग्धता आ गयी। क्षण भर के लिए लज्जा से उसका मुख लाल हो गया। फिर हृदय पर हाथ रखकर, नि:श्वास छोडते हुए, अजब अन्दाज मे बोला:—

"शैल! यह तेल की चिकनाई नही, मेरे प्यार की चिकनाई है। तुम्हे पास पाकर मेरे दिल का प्यार बह चला है।"

"प्यार की इस बाढ मे कही दुनिया डूब न जाये।" कहकर शैलजा हॅस पडी।

कामेश्वर ने भी हँसने का प्रयास किया पर हँसी अधरों में उलझ कर रह गयी। अपनी पराजय पर वह खिन्न हो उठा।

कार तीव्र गति से माल रोड की ओर बढ़ी चली जा रही थी।

"कहाँ चलना है?" कामेश्वर ने कुछ देर बाद पूछा।

"रीगल?" कहकर शैलजा ने हार्न बजाया।

बीच सडक पर मस्ती से सायकिल चलाने वाले एक विद्यार्थी ने जैसे हार्न सुना ही न हो। वह अपनी धुन मे मग्न रहा।

पास आकर शैलजा ने इतनी जोर से हार्न बजाया कि विद्यार्थी चौक पडा और सायकिल किनारे ले जाने के बजाय हड़बड़ा कर गिर पड़ा। शैलजा ने हँसकर कार आगे बढा दी।

"अन्धे होकर चलते है लोग।" वह बोली।

"वे जान-बूझ कर मरना चाहते है।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी और फिर धुये का गोला बनाता हुआ बोला—"अगर मेरा बस चले तो मै लड़कियो और खास तौर से सुन्दर लडकियों को ड्राइविग-लायसेन्स ही न दूँ। लडकियो की कार के नीचे आकर मरने वालो की कमी नही है आजकल।"

"और मेरा बस चले तो लड़को को और खास तौर से रोमियो टायप के लड़कों को लायसेन्स कभी न दूँ।" शैलजा ने कृत्रिम गभीरता से कहा।

"क्यो ?"

"क्योकि वे चलाते तो कार है पर उनकी आँखे लगी रहती है सड़क पर चलने वाली लड़कियो की तरफ। इसीलिए सैकड़ों एक्सीडेन्ट रोज होते है।" कहकर शैलजा हँस पडी।

"और अगर कार पर रोमियो और जूलियट दोनों हुये तो?" शरारतपूर्ण मुस्कान के साथ शैलजा की ओर देखते हुये कामेश्वर ने प्रश्न किया।

"तो....तो मे गाड हेल्प दी पेडेस्ट्रियन्स।"

कार तब तक रीगल के सामने पहुँच चुकी थी। रविवार होने के कारण उसमे मार्निग-शो था। चित्र था—रोमन हालीडे।

"रोमन हालीडे अच्छा पिक्चर है। मैने इसका रिव्यू फिल्म-फेयर मे पढ़ा है।" कामेश्वर बोला।

शैलजा ने कार किनारे लगा दी।

कामेश्वर ने उतर कर बाल्कनी के दो टिकट ले लिये।

दोनो ऊपर पहुँचे और एक एकान्त कोने में जाकर बैठ गये।

चित्र प्रारम्भ होने मे देर थी।

"क्या प्रेजेन्ट दे रहे हो मुझे?" शैलजा ने पूछा।

"मेरे पास है ही क्या देने को?" हँसकर कामेश्वर बोला। "एक दिल था वह कभी का दे चुका हूँ।"

"अच्छा! मुझे तो मिला नही अब तक! क्या उसकी रसीद है तुम्हारे पास?" शैलजा के स्वर मे शरारत थी।

"रसीद पाने की ही आशा मे जी रहा हूँ।" कहकर कामेश्वर ने उसके हाथ पर अपना हाथ रख दिया।

शैलजा ने अपना हाथ नही खीचा।

तभी हाल की बत्तियाँ बुझ गयी और सामने वाले बड़े सफेद पर्दे पर काली-सफेद तस्वीरे आने-जाने लगी।

शैलजा पूरे मनोयोग से न्यूज-रील्स देख रही थी, किन्तु कामेश्वर का ध्यान कही और था। वह सोच रहा था अपने विषय में, शैलजा के विषय मे, उसके और अपने सम्बन्ध के विषय मे।

कामेश्वर प्रारम्भ से ही स्वच्छन्द प्रकृति का था। बन्धनों से उसे चिढ थी। और तो और, ब्याह को भी वह व्यर्थ का बन्धन और अनावश्यक उत्तरदायित्व समझता था। प्यार के क्षेत्र में भी वह स्वच्छन्दता का पक्षपाती था। वह अनेक युवतियों को प्यार के रगीन स्वप्न दिखाकर पथभ्रष्ट कर चुका था, शादी का प्रलोभन देकर उनका जीवन नष्ट कर चुका था। जहाँ प्यार की रगीनियाँ और शादी के प्रलोभन असफल रहे थे वहाँ उसने पैसे से काम लिया था। उसके लिए प्यार का अर्थ था वासना; नारी की उपयोगिता थी काम-तृप्ति।

शैलजा को जिस दिन प्रथम बार कालेज मे देखा था उसी दिन से वह उसकी ओर आकृष्ट हो गया था। जब उसे ज्ञात हुआ कि शैलजा भी आधुनिक विचारो की लड़की है तब उसे अपार हर्ष हुआ

था और उसने समझ लिया था कि उसपर विजय पाना अत्यन्त सरल है; किन्तु उसकी वह धारणा निर्मूल सिद्ध हुई थी। शैलजा स्वतंत्र विचारो की थी और इसीलिए वह उससे घुल-मिल भी गयी थी; परन्तु उसने कामेश्वर को सीमा का उल्लघन कभी नही करने दिया था। कामेश्वर इसे अपनी करारी हार मानता था। कालेज के अधिकॉश विद्यार्थी यही समझते थे कि उसने शैलजा को जीत लिया है; उसके कुछ अतरग मित्रो ने उसे बधाई भी दी थी और उसने मौन रहकर उनकी बधाइयों को स्वीकार भी कर लिया था, किन्तु वास्तव मे मित्रों की बधाइयॉ उसके गालो पर तमाचो की तरह थी।

कामेश्वर यदि कभी किसी लडकी से पराजित हुआ था तो शैलजा से। इस पराजय को जय मे परिवर्तित करने के लिए वह मन-ही-मन नाना योजनाये बनाया करता था; परन्तु शैलजा न जाने किस मिट्टी की बनी थी कि उसका कोई रंग उसपर चढता ही न था। वैसे वह उससे हँसती-बोलती थी; उसके साथ घूमती-फिरती थी; कभी-कभी प्यार की बाते भी कर लेती थी; परन्तु इससे आगे एक ऐसी लक्ष्मण-रेखा थी जिसे पार करने की न तो कभी उसी ने उत्सुकता दिखाई थी और न कामेश्वर को ही ऐसा प्रोत्साहन दिया था कि वह उस रेखा को पार करने का दुःसाहस कर सके। समीप की यह दूरी कामेश्वर की रग-रग मे विष बनकर समा चुकी थी और वह उसके प्रभाव से पागल सा हो उठा था। शैलजा को पाना, उसका मान-मर्दन करना ही उसके जीवन का ध्येय बन चुका था।

मध्यान्तर होने पर जब हाल पुनः प्रकाशित हो उठा तब कहीं जाकर कामेश्वर की विचार-धारा भग हुई।

"कैसा लग रहा है पिक्चर?"

शैलजा के प्रश्न से वह चौक सा पड़ा।

"बहुत अच्छा।" उसने धीमे स्वर मे उत्तर दिया। फिर एक क्षण रुक कर बोला—"बाहर चल रही हो?"

"नही ! तुम्हे जाना है क्या ?'

"यहाँ तो सिगरेट पी नही सकता।" कहकर उठ खडा हुआ और फिर मुस्कराने की चेष्टा करता हुआ बोला—"तुम्हारे लिए कोई कोल्ड-ड्रिंक भेज दूँ ?"

"कोल्ड-ड्रिंक्स तुम्हे ही मुबारक हों।" कहकर शैलजा हँस पड़ी।

कामेश्वर बाहर चला गया।

शैलजा उसके विषय मे सोचने लगी।

शैलजा प्रकृति से उतनी स्वतत्र नहीं थी जितनी फैशन से। स्वतंत्र होना, मित्रो के साथ हँसना-बोलना, घूमना-फिरना वह नये फैशन का एक प्रमुख अग समझती थी। इसीलिए वह अपनी ही जिद से ऐसे कालेज मे गयी थी जिसमे सहशिक्षा थी। कामेश्वर सुन्दर था, शिष्ट था, वाक्यपटु था। फलस्वरूप वह बहुत शीघ्र उसकी मित्र बन गयी थी। कामेश्वर जब प्यार की बाते करता था तब उसे बुरा लगता हो ऐसी बात नहीं थी। वह प्यार को जीवन का अनिवार्य अग मानती थी; परन्तु उसके लिए प्यार शरीर की भूख के लिए नहीं, मन की तुष्टि के लिए था। वह 'प्लेटोनिक लव' मे विश्वास करती थी। कभी-कभी जब कामेश्वर कोई अनाधिकार चेष्टा करता था तब वह क्रुद्ध होकर उसे डाँट देती थी। फिर भी वह उससे बिना मिले रह नही सकती थी। यही उसकी एक सबसे बडी दुर्बलता थी।

कामेश्वर आकर अपने स्थान पर बैठ गया। जो लोग धूम्रपान के विचार से बाहर चले गये थे वे धीरे-धीरे आने लगे। हाल की बत्तियाँ बुझ गयी और रंगीन स्लाइडें दिखाई जाने लगीं।

"तुम्हारा नाम किसी पंडित ने बहुत सोच-समझ कर रक्खा है।" शैलजा का हाथ अपने हाथ मे लेकर कामेश्वर बोला।

"अच्छा वह कैसे ?"

"तुम सचमुच पत्थर हो। कोई मरता है या जीता है, तुम्हे इसकी चिन्ता नही।" कामेश्वर ने भावुकता से कहा।

"कौन मर गया?" शैलजा के स्वर मे कृत्रिम आश्चर्य था।

"यह भी खूब रही। कोई तुम्हारे प्यार मे मरा जा रहा है और तुम्हें पता ही नही।" कामेश्वर बोला और फिर शैलजा का हाथ तनिक जोर से दबा कर कहा—"शैल! अब मै तुम्हारे बिना एक पल भी जिन्दा नही रह सकता।"

"यह तो कई बार कह चुके हो तुम।"

"मेरी बात को हँसी में न उड़ाओ, शैल। आज तुम्हारा बर्थ-डे है! क्यों न हम आज ही अपना एन्गेजमेन्ट भी अनाउन्स कर दे।" कामेश्वर के स्वर मे आग्रह था।

"माई गॉड! मैंने तो कभी सोचा ही नही था इस बारे में। आर यू सीरियस अबाउट दिस?" शैलजा ने अपना हाथ खींच कर पूछा।

"हाँ, डियर! बोलो, मेरा प्रपोजल मजूर है?"

"दिस इज अ सीरियस मैटर? सोचने के लिए टायम दो।" कुछ गंभीर होकर शैलजा बोली—"और फिर अभी जल्दी ही क्या है? लेट अस बी ग्रेजुयेट्स फर्स्ट।"

"ग्रेजुयेट होने मे महीनो की देर है और मेरे लिए एक-एक पल भारी है।" आतुर होकर कामेश्वर ने कहा।

"बट आई मस्ट थिक अबाउट इट। मुझे सोचने का मौका दो, कामेश्वर। मै जल्द ही अपना जवाब दे दूँगी।"

शैलजा का वाक्य समाप्त होते ही चित्र प्रारम्भ हो गया। फिर कामेश्वर कुछ नही बोला।

शैलजा का मन फिर चित्र देखने मे नही लगा। वह कामेश्वर के प्रस्ताव पर ही सोचती रही। उसने सोचा—प्रस्ताव बुरा नही है। कामेश्वर को वह पसन्द करती थी। उसे विश्वास था कि वह उसे सुखी और प्रसन्न रखने के लिए आकाश-पाताल एक कर देगा। तभी उसके हृदय ने शंका की। उसने कही पढ़ा था कि एक अच्छा प्रेमी अच्छा पति नही बन सकता। कामेश्वर अच्छा प्रेमी तो है पर अच्छा

पति....। और यह प्रश्न दीर्घ आकार का होकर उसकी आँखों के सामने घूमने लगा।

कामेश्वर की आँखे तो पर्दे पर थी पर वह अपनी समस्त चेतना शैलजा के मनोभावो को पढने मे लगाये था। उसे यह समझने मे देर नही लगी कि शैलजा का ध्यान चित्र ओर की नही है। विश्वास और आशा की लहर उसके अग-अंग मे दौड़ गयी। उसने सोचा—इस अमोघ अस्त्र की चोट शैलजा नही सह सकेगी। उसे झुकना पडेगा—बहुत शीघ्र झुकना पडेगा। और फिर.....। एक विचित्र मुस्कान उसके अधरो पर खेल गयी।

चित्र समाप्त हो गया। हाल की तरह कामेश्वर का मस्तिष्क भी प्रकाश से पूर्ण हो उठा। उसने शैलजा की ओर देखा। शैलजा के नेत्र स्वतः झुक गये।

कामेश्वर झूम उठा। मकडी के रेशमी जाल मे मक्खी आखिर फँस ही गयी, उसने मन-ही-मन सोचा।

कार जब फूल बाग को पीछे छोड़कर आगे बढने लगी तब कामेश्वर बोला—

"मुझे घर छोड दो।"

"वाह! यह कैसे हो सकता है। लच लेकर जाना।" शैलजा के स्वर मे आग्रह था।

"डिनर तो तुम्हारे यहाँ लेना ही है।"

"डिनर तो मेरे बर्थ-डे के सिलसिले मे है।"

"और लच?"

शैलजा कोई उत्तर न दे सकी। उसने अकारण ही हार्न बजा दिया।

"क्या....क्या मै समझूँ कि मेरे सवाल का जवाब मिल गया?" कहकर कामेश्वर ने उसके कन्धे पर हाथ रख दिया।

कार सिविल लाइन्स की ओर मुड गयी।

"नही, अभी नही।" झिझकते हुये शैलजा बोली। "मुझे अच्छी

तरह सोच लेने दो। मै बहुत जल्द ही जवाब दे दूँगी।"

"क्या मै आशा रक्खूँ ?"

"आशा पर दुनिया कायम है।" कहकर शैलजा मुस्करा पड़ी।

कामेश्वर को अपनी विजय मे कोई सन्देह नही रह गया।

कार 'मनोहर विला' के पोर्टिको मे पहुँचकर रुक गयी। चौकीदार ने द्वार खोला। दोनों उतर पड़े।

"ललित आया ?" शैलजा ने चौकीदार से पूछा।

"अभी तो नही आये, सरकार!" हाथ जोडकर चौकीदार बोला।

"जैसे ही आये उसे मेरे कमरे मे भेज देना।" कहकर शैलजा बैग झुलाती हुई अपने कमरे की ओर बढ गयी।

कामेश्वर पीछे-पीछे चल दिया।

कमरे मे पहुँचकर शैलजा ने बैग मेज पर पटक दिया और वह अपने गुदगुदे पलँग पर गिर सी पडी मानो वह बहुत—बहुत थक गयी हो। फिर वह पेट के बल लेट कर, पैर ऊँचे करके उन्हे हिलाने लगी।

कामेश्वर एक आराम कुर्सी पर बैठ गया।

"तुम्हारा यह पोज तो रीता हेवर्थ को भी मात दे रहा है।" कामेश्वर ने मीठे स्वर मे कहा।

शैलजा मौन रही। हाँ, उसने कामेश्वर की ओर अजीब दृष्टि से देखा।

नारी की सबसे बडी दुर्बलता यही है कि वह प्रशंसा की भूखी रहती है। उसकी चापलूसी करके उससे कोई भी काम लिया जा सकता है। कामेश्वर ने इसी दुर्बलता पर आघात करने के उद्देश्य से एक क्षण बाद फिर कहा—"तुम्हारा रियल चार्म मैं आज ही देख रहा हूँ।"

शैलजा ने आँखे बन्द कर ली।

कामेश्वर ने अपनी कुर्सी पलँग के समीप खिसका कर उसका हाथ अपने हाथ मे लेते हुये कहा—"वेरी लवली! वेरी चार्मिंग!!" और फिर उसने साहस करके उसके हाथ पर अपने जलते हुये अधर रख दिये।

शैलजा ने चौंककर आँखें खोल दीं और अपना हाथ खींच कर बोली—"बहुत लोभी हो तुम।"

"लोभी!" आश्चर्य से कामेश्वर ने पूछा।

"हाँ। और इम्पैशेन्ट भी!"

उसी समय द्वार पर कुछ आहट हुई।

शैलजा उठकर बैठ गयी।

कामेश्वर सिगरेट सुलगाने लगा।

छः

रिक्शे से उतरकर जैसे ही ललित कोठी के अन्दर पहुँचा वैसे ही चौकी-दार ने आगे बढकर उसे शैलजा का आदेश सुना दिया। वह तत्काल ही शैलजा के कमरे की ओर बढा। कमरे के द्वार पर पर्दा पडा था। पल भर के लिए वह ठिठका, फिर खासकर पर्दा हटाया और अन्दर चला गया। शैलजा पलँग पर बैठी रही और समीप ही कुर्सी पर एक नवयुवक बैठा हुआ दीखा वह सिगरेट पी रहा था। ललित तुरन्त समझ गया कि कामेश्वर ही हो सकता है।

"बहुत बदतमीज हो तुम।" शैलजा का तेज स्वर ललित के कानों मे गर्म सीसे की तरह उतरता चला गया। "आवाज देकर क्यों नही आये।"

ललित अपमान से तिलमिला उठा। इस प्रकार की बाते सुनने का वह अभ्यस्त नहीं था। शैलजा मालिक की बेटी है पर इसका यह अर्थ नही कि वह गाली दे, अपमान करे। आखिर नौकर भी मनुष्य ही होते है और उनसे भी बात तरीके से ही करनी चाहिए। ललित की इच्छा हुई कि वह लिस्ट फर्श पर पटक कर और ईंट का जवाब पत्थर से देकर तुरन्त बाहर चला जाये परन्तु तभी पत्नी की करुण आखों, बच्चों की मौन आकृतियों और बहन के उदास चेहरे ने उसके हाथों मे ताला जड़ दिया;

उसके अधरों को सी दिया। नौकरी छूट जाने के बाद बाल-बच्चों की जो दशा होगी उसकी कल्पना से ही वह कॉप उठा। खून का घूँट पीकर वह दृष्टि नीची करके बोला:—

"जी मुझे मालूम नही ....।"

"बकवास बन्द करो अब! कार्ड बॉट आये?"

"जी हॉ!" ललित का सिर झुका ही रहा।

"सब ?"

शैलजा का आशय समझ कर ललित ने सिर हिला दिया।

"सब लोग आयेगे?" शैलजा ने गूढ दृष्टि से ललित की ओर देखकर प्रश्न किया।

ललित ने फिर सिर हिला दिया।

"जाओ। मगर याद रखना अगर सब लोग न आये तो तुम्हें नौकरी से हाथ धोने पड़ेंगे। नाउ गेट आउट।" शैलजा तीव्र स्वर मे आदेश देकर फिर लेट गयी।

नाउ गेट आउट! ललित के गाल पर तमाचा सा पडा! 'समझ क्या रक्खा है अपने को छोकरो ने' वह मन मे भुनभुनाया और फिर सिर नीचा करके बाहर आ गया।

गैलरी में पहुँचते ही शैलजा और कामेश्वर की हँसी की आवाज उसके कानो मे पड़ी। वह तेज गति से रायबहादुर के कमरे की ओर बढ़ा।

रायबहादुर के कमरे का द्वार खुला था। ललित को देखते ही उन्होंने उसे अन्दर बुला लिया।

'कार्ड बॉट आये?" उन्होने पूछा।

"जी हॉ।" धीमे स्वर मे ललित ने उत्तर दिया और फिर जेब से बचे हुये आठ रुपये निकालकर उनकी ओर बढा कर कहा, "जी, आठ रुपये बचे है।"

"अभी रक्खे रहो।"

ललित ने रुपये जेब मे रख लिये। लिस्ट मेज पर रख कर वह द्वार

की ओर बढ़ा।

"सुनो।" रायबहादुर की आवाज सुनकर वह रुक गया और उनके पास जाकर सिर झुकाकर खडा हो गया।

"शैलजा की बातो का बुरा न मानना, ललित !" रायबहादुर धीमे स्वर मे बोले। "उसकी आदत ही ऐसी है ?"

"जी.. ..।" ललित हकलाया ।

"मुझे शकुन ने सब कुछ बता दिया है। बस, यही कहना था। अब जाओ ! और हाँ, दो-तीन बजे तक आ जाना। सब प्रबन्ध तुम्ही लोगो को करना है।"

"जी।" कहकर ललित बाहर आ गया।

उसे शकुन पर क्रोध आ रहा था। भला इसमें रायबहादुर से कहने की क्या बात थी ! शैलजा को मालूम होगा तो वह यही समझेगी कि उसी ने शिकायत की है। अभी नाराज रहती है, तब तो और भी आग बबूला हो जायेगी। उसके मस्तिष्क मे विचार आ-जा रहे थे। उसके पैर स्वतः शकुन के कमरे की ओर मुड गये। शकुन के द्वार पर पहुँच कर उसे होश आया।

द्वार बन्द था। कम्पित हाथ से उसने दस्तक दी ।

"कौन है ?" अन्दर से शकुन का स्वर आया।

"मै हूँ, ललित।" ललित का स्वर काँप रहा था।

"आ जाओ।"

द्वार खोलकर ललित अन्दर चला गया।

कमरे मे फरनीचर वैसा ही था जैसा शैलजा के कमरे में था। पर इस कमरे मे हर चीज व्यवस्थित ढग से रक्खी थी जब कि शैलजा के कमरे मे चीजे इधर-उधर बिखरी पड़ी थी। यह कमरा स्वच्छ था; शैलजा का कमरा गन्दा था। दोनो के कमरों से कोई भी दोनों बहनों के स्वभाव का अनुमान लगा सकता था। शैलजा का कमरा तो ललित को ऐसा लगा था मानो उसमे मनुष्य नही बन्दर रहता हो ।

शकुन आराम कुर्सी पर लेटी कोई पुस्तक पढ़ रही थी। जैसे ही ललित अन्दर पहुँचा, उसने पुस्तक मेज पर रख दी और उठकर सहज स्वर मे बोली :—

"आओ, बैठो!"

"मै बैठने नही आया हूँ।"

"तो फिर खडे रहो।" शकुन ने मुस्करा कर कहा।

"मै यह पूछने आया हूँ कि तुमने बाबूजी से शैलजा की शिकायत क्यो की?" ललित का स्वर रूखा था।

"और मै यह पूछना चाहती हूँ कि तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देना क्या मेरे लिए अनिवार्य है?" शकुन हँस रही थी।

शकुन की हँसी से ललित चिढ़ गया।

"तुम हँस रही हो और मेरी जान निकली जा रही है।" वह बोला। "तुम दोनों के बीच मे मै एक दिन निश्चय ही उसी तरह पिस जाऊँगा जैसे चक्की के पाटो के बीच मे बिचारा गेहूँ का दाना पिस जाता है।"

शकुन को तुलना कुछ बुरी नही लगी। कुर्सी पर बैठती हुई बोली :–

"बैठ जाओ। काफी थके हुये मालूम पडते हो।"

ललित आज्ञाकारी बालक की भाति बैठ गया।

"तो हम दोनो को पत्थर के टुकड़े समझते हो तुम?" शकुन ने मुस्करा कर पूछा।

"मेरा.. मेरा मतलब यह नही था।" ललित हकला कर बोला। "मगर सोचो तो कि तुम दोनो की नोक-झोक मे मेरा क्या हाल होगा। अगर नौकरी से निकाल दिया गया तो ..।" और उसने अपना वाक्य अपूर्ण ही छोड़ दिया।

"जब तक काम ठीक से करते रहोगे तब तक नौकरी छूटने का प्रश्न ही नहीं है। हाँ, अगर काम मे असावधानी करोगे तब दूसरी बात है।" शकुन ने इस ढंग से कहा कि मानो वही रायबहादुर हो।

ललित को हँसी आ गयी।

"चलो क्रोध के बादल हटे तो।" कहकर शकुन खिलाखिला कर हँस पड़ी।

"लेकिन तुम्हे बाबू जी से शिकायत नही करनी चाहिए थी।" ललित ने एक क्षण बाद फिर कहा। "नौकरी मे मानापमान तो होता ही रहता है। और फिर जितना अपमान छोटी बहन करती है उससे कही अधिक मान बड़ी बहन से मिल जाता है।"

शकुन कुछ बोली नही; उसकी ओर केवल देखती रही।

"अब चलता हूँ। खा-पीकर फिर आना है।" कहकर ललित खडा हो गया।

"दोपहर में इतनी दूर घर जाओगे और थोड़ी देर बाद फिर आओगे! यही क्यो नही खा लेते? मैंने भी अभी नही खाया है।" शकुन के स्वर मे आग्रह था।

"अत्यधिक मान कभी-कभी अपमान का कारण भी हो जाता है।"

"क्या मतलब?" शकुन उठकर खडी हो गयी।

"छोडो भी! मै घर जा रहा हूँ।" कहकर ललित द्वार की ओर बढा।

"तुम्हारी इच्छा। मगर हाँ, सरला से शाम को आने के लिए कह देना।" शकुन ने आगे बढ़कर कहा।

ललित रुक गया। मुडकर बोला :—

"क्या सरला का लाना जरूरी है?"

"मेरी इच्छा है उससे मिलने की।" शकुन बोली।

"कभी और मिल सकती हो।"

"आज क्या बाधा है?" शकुन ने उत्सुकता से पूछा।

"बात यह है कि सरला सीधी-सादी लड़की है। बड़े आदमियों के तौर-तरीकों से एकदम अपरिचित। यहाँ के वातावरण में वह शायद खुलकर साँस भी न ले सकेगी।" ललित ने साफ बात कहना ही उचित समझा। शकुन से कोई भेद-भाव तो था नहीं।

"तुम लाना तो! एक मिनट मे ही वह अभ्यस्त हो जायेगी। तुम नही जानते कि नारी मे परिस्थितियो के अनुसार अपने को परिवर्तित करने की कितनी अद्भुत क्षमता होती है।" शकुन ने आग्रह भरे स्वर मे कहा।

"और कही उसकी हँसी हुई तो? अगर शैलजा ने उसका अपमान किया तो? मै अपना अपमान सह सकता हूँ पर उसका नही।" ललित को वास्तव मे डर भी यही था। शैलजा मुहफट लडकी थी और उसके लिए ऐसी-वैसी बात मुह से निकाल देना कोई असम्भव बात नही थी।

शकुन भी इस सम्भावना के प्रति अन्धी नही थी, किन्तु वह जानती थी कि यदि वह सदैव सरला के साथ रहेगी तो कोई भी अप्रिय घटना न घट सकेगी।

"सरला का अपमान मेरा अपमान होगा। इससे अधिक और क्या आश्वासन दे सकती हूँ मै!" कहकर शकुन अपने दोनो हाथ मलने लगी।

ललित ने शकुन की ओर देखा। शकुन के दृगो की कोर कुछ भीगी सी लगीं।

"इससे बडा आश्वासन और हो ही क्या सकता है?" ललित शकुन की ओर बढ कर बोला। "सरला अवश्य आयेगी। मगर एक मुश्किल है। मै तो खा-पीकर अभी चला आऊँगा। फिर शाम को घर जाने का अवकाश मिले, न मिले। वह किसके साथ आयेगी शाम को?"

शकुन के लिए यह समस्या साधारण थी। तत्काल ही बोली :—

"तुम सरला से तैयार रहने के लिए कह आना। शाम को कार भेज दूँगी। उसी पर चली आयेगी।"

"अकेली?"

"क्या हुआ? मुन्ना को साथ ले लेगी।" शकुन बोली।

ललित चिन्ता मे पड़ गया। उसके संस्कार शकायें उठा रहे थे।

"कोई बात नहीं," शकुन उसकी परेशानी समझ कर बोली। "तुम चिन्ता न करो। मै स्वय जाकर ले आऊँगी। बस, अब तो ठीक है?"

"तुम जाओगी?" आश्चर्य भरे स्वर मे ललित ने पूछा।

"क्या हुआ! इसी बहाने तुम्हारी श्रीमती जी के भी दर्शन हो जायेगे।" कहकर शकुन मुस्कराने लगी।

उस मुस्कान के अचल मे छिपी अनन्त पीडाये ललित की तीव्र दृष्टि से छिपी न रह सकी। किसी अज्ञात वेदना से उसका भी मन भारी हो गया। वह उसी प्रकार मूर्तिवत खड़ा रहा।

ललित को देखकर शकुन धीमे स्वर मे बोली:—

"कोई आपत्ति है तुम्हे?"

"आपत्ति!" चौककर ललित बोला। "नही, नही! मै कह दूँगा सरला से।" कहकर वह तीव्र गति से बाहर निकल गया।

गैलरी मे पहुँचकर उसने आँसू की बूँदो को कमीज के कफ से पोछ डाला।

अन्दर शकुन के मुख से एक दीर्घ नि.श्वास निकल गया। अतीत की स्मृतियाँ जाग गयीं थी। वह तकिये में मुह छिपा कर पलँग पर लेट गयी।

सात

सबेरे से ही मुन्नी को ज्वर था। वह वैसे ही दुर्बल थी; ज्वर ने और भी तोड दिया था। दया उसे लिए हुये कमरे मे लेटी थी। मुन्ना खा-पी कर बाहर खेलने चला गया था। घर मे एक दम सन्नाटा था।

बरामदे मे कोयले की काली लकीर से घिरा हुआ छोटा से चौका था। चूल्हे के पास ही बैठी हुई सरला रात की समस्या पर सोच रही थीं। रात की चिन्ता और जागरण के चिन्ह उसके मुख और नेत्रों मे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे।

आँगन में एक कुत्ता घुस आया। सरला चौक पड़ी। 'हट' उसके मुख से जोर से निकल गया। कुत्ता भाग गया।

"क्या है, सरला?" दया ने कमरे के अन्दर से पूछा।

"कुछ नही, भाभी! कुत्ता था।" कहकर सरला ने सजग होकर अपने चारों ओर देखा। धूप काफी चढ आयी थी। सरला ने अनुमान लगाया कि बारह से कम का समय नही है।

"भैया तो न जाने कब तब आयेगे। तुम तब तक खा लो, भाभी!" सरला ने पुकारा।

"मुझे भूख नही है अभी। तुम रोटी सेक कर रख दो। कब तक आटा लिए बैठी रहोगी।" दया ने उत्तर दिया।

"सेक लूँगी। अभी जल्दी क्या है!" कहकर सरला मौन हो गयी। वह जानती थी कि ललित को ठडी रोटी अच्छी नही लगती।

"तो तुम तो खालो। सबेरे से लघन किये बैठो हो।" दया ने कुछ देर रुककर कहा। "मै आकर सेके देती हूँ।"

"तुम मुन्नी के पास ही रहो, भाभी! मुझे भी अभी भूख नही लगी है। भैया भी आते ही होगे।" सरला बोली।

दया जानती थी कि सरला के मुख से जो बात एक बार निकल गयी वह पत्थर की लकीर हो जाती है। इसलिए वह मौन हो गयी। फिर उसने जोर नही दिया।

सरला की थकान उसकी सजगता पर विजयी हो गयी। उसकी आँखें झपकने लगी। दीवार का सहारा लेकर वह ऊँघने लगी।

ललित जब घर पहुँचा तो उसने सरला को चौके मे सोते हुये पाया। दबे पाँव वह कमरे मे गया। मुन्नी को पास लिटाकर दया भी ऊँघ गयी थी। उसे हँसी आ गयी।

हँसी का स्वर सुनकर सरला और दया दोनो चौक पड़ी। दया हड़बडा कर उठ बैठी। सरला ने हुरसा-बेलन सँभाला।

"तुम लोग रात मे तो जागती हो और दिन मे सोती हो।" हँसकर ललित बोला। "अगर कोई घुस आता तो?"

"घर मे ऐसी कौन सी सम्पदा रक्खी है जिसे ले जाता।" दया ने चिढकर कहा और फिर वह मुन्नी को थपथपाने लगी।

"हमारे लिए ये दो-चार बर्तन ही कुबेर का कोष है। अगर इन्हीं को उठा ले जाता तो हमे करपात्री बनना पडता।" कहकर ललित नल के पास जाकर हाथ-मुह धोने लगा।

सरला चूल्हा फूँकने लगी। गीली लकडी का कडुआ धुआ उसकी आँखों में आँसू ले आया।

"धुआ के मारे तो नाक मे दम है।" बरामदे मे बैठकर ललित बोला।

"अभी कम हो जायेगा।" कहकर सरला और जोर से चूल्हा फूँकने लगी।

"यह धुआ कम होने वाला नही है, सरला। कन्ट्रोल की लकड़ियाँ गीली होती ही है और गीली लकडियों की रग-रग मे धुआ उसी प्रकार समाया होता है जैसे हम बेबसो के जीवन मे पीडा और आँसू।"

ललित की बात ने सरला के मन को कचोट लिया। उसने सघर्ष की आड़ी-तिरछी रेखाओ से युक्त ललित के मुख की ओर देखा और फिर वह दृष्टि नीची करके थाली परोसने लगी।

भोजन के बाद ललित ने सरला से कहा:—

"शकुन ने तुम्हे भी बुलाया है।"

"मुझे ?" चौंककर सरला बोली। वेदना और बेबसी के चिन्ह उसके मलीन मुख पर उभर आये। 'लेकिन ... लेकिन मै कैसे जा सकती हूँ ?"

'मैने कहा तो था मगर शकुन मानती ही नही। मुन्ना को भी तैयार कर लेना। शकुन शाम को तुम्हे लेने आयेगी।" ललित ने कहा और फिर वह कमरे के अन्दर चला गया।

सरला सोच मे पड़ गयी। साडी तो दूर, उसके पास कोई साफ इकलाई भी नहीं थी जिसे पहन कर वह वहाँ जा सकती।

तभी भाभी का स्वर उसके कानो मे पडा। दया ललित से कह रही थी:—"तुम्हारी समझ को न जाने क्या होता जा रहा है। शकुन से कह तो दिया है सरला को ले जाने के लिए, मगर यह भी सोचा है कि वह क्या पहनकर जायेगी!"

ललित मौन रहा।

"साल-दो साल से कभी कोई अच्छी इकलाई भी लाये हो घर मे ?" दया के स्वर मे स्वाभाविक असन्तोष की झलक आ गयी।

"घर मे इकलाई नही लाया तो मैने ही कौन सूट बनवा लिये है ?" चिढ़कर ललित बोला और फिर जूते पहनकर आँगन में आ गया।

सरला सिर नीचा किये रोटी बेल रही थी। ललित ने देखा कि जो धोती वह पहने है वह गन्दी और फटी है। अपनी सीमाओं पर क्रोध आ गया उसे। फिर सयत होकर गभीर स्वर मे बोला :—

"सरला! मनुष्य का मान वस्त्रो से नही, उसके गुणों से होता है। पिताजी भी यही कहते थे और मै भी यही कहता हूँ।"

सरला कुछ बोली नहीं। उसने ललित की ओर देखा भी नही। वह उसी प्रकार रोटी बेलती रही।

ललित बाहर चला गया।

"पहले कपड़े देखे जाते है और बाद मे गुण।" कहती हुई दया बरामदे मे आ गयी। जब उसने देखा कि ललित चला गया है तब सरला से बोली :—

"सरला! अगर जाना है तो ढग से जाना नही तो जाने की कोई जरूरत नही है। वे समझते है कि जैसे हम फटा-पुराना पहन कर सब जगह घूमते-फिरते है वैसे ही औरते भी कर सकती है।"

"जैसा तुम कहोगी वैसा ही करूँगी मै।" रोटी तवे पर डालती हुई सरला धीमे स्वर मे बोली।

"मै जाती हूँ परोस में। अगर कोई अच्छी साडी और ब्लाउज माँगे से मिल गया तो ठीक है।" कहकर दया द्वार की ओर अग्रसर हुई।

"मगर भैया नाराज होंगे।"

"होने दो! दुनिया भर के लोग होंगे वहाँ। फटा-पुराना पहनकर जाना ठीक नही।" कहकर वह बाहर चली गयी।

सरला सोचने लगी। भाभी ठीक कहती है। ससार पहले तो मनुष्य के वस्त्र ही देखता है; बाद मे गुणो की बारी आती है। आज के युग मे अच्छा मनुष्य वही है जिसके पास समाज मे घुलने-मिलने के लिए अच्छे वस्त्र है। गुदडी मे छिपे लाल पर भी आजकल किसी की दृष्टि नही जाती।

तभी उसे मुन्ना का ध्यान आ गया। भैया मुन्ना को भी ले जाने के

लिए कह गये है। उसके लिए भी नेकर और कमीज धोनी पड़ेगी; जूतो पर खड़िया लगानी पडेगी।

मुन्ना के जूतो के बाद उसे अपनी फटी चप्पल का ध्यान आया। भाभी साड़ी-ब्लाउज ले भी आयी तो सैन्डिल कहाँ से आयेगी। फटी चप्पल पहनकर जाना तो ठीक नहीं।

उसी समय रोता हुआ मुन्ना घर आया।

"क्या हुआ ?" सरला ने पूछा।

"राम ने मुझे मारा है, बुआ।" सिसकते हुये मुन्ना ने बताया।

"तू उसके साथ न खेला कर। अब चुप हो जा। बडा राजा बेटा है तू। और देख, शाम को मै तुझे घुमाने ले चलूँगी।"

"सच ! कहाँ ?" रोना बन्द करके मुन्ना ने उत्सुक स्वर मे पूछा।

"बहुत अच्छी जगह। वहाँ मेला होगा। खूब रोशनी होगी।"

"और अच्छी-अच्छी चीजें खाने को मिलेंगी ?"

"हाँ ! अब जाकर मुन्नी के पास बैठ जा।"

मुन्ना कमरे में चला गया।

बाहर से दया आयी। उसके अधरो पर मुस्कान थी और बगल मे रेशमी साड़ी और ब्लाउज।

"मिल गयी ?" सरला ने पूछा।

"अब जाना तुम। अपने हाथ से सजाकर भेजूँगी तुम्हे। जरा वे लोग भी देख ले कि सुन्दरता महलों में ही नही, झोपड़ी में भी होती है।" कहकर दया खिलखिलाकर हँस पडी।

सरला के कपोलो पर लज्जा की गुलाबी कूची फिर गयी।

"बहुत वैसी हो तुम, भाभी।" उसने अपनी धोती का छोर उँगलियो में फँसाते हुये कहा।

"जानतो हो क्या बहाना करके लायी हूँ ?"

"मै क्या जानूँ ?"

"मैंने कहा सरला की बात तय हो रही है। उसके देखने वाले आ

रहे हैं।" दया ने मुस्कराते हुये कहा।

दया की बात सुनकर उसे लज्जा नही आयी और न उसके मन में गुदगुदी ही हुई। एक तरल पीडा ने उसके तन-मन को भिगो दिया; एक कसक सी उसके प्राणो मे अँगडाई ले उठी।

"तुम्हे ऐसा सफेद झूठ नही बोलना चाहिए था, भाभी।" उसके मुख से निकल गया।

"इसमे झूठ क्या है? तमाम लोग आयेगे वहाँ। हो सकता है किसी की आँखो मे समा जाओ और वह तुम्हे तुम्हारे भैया से हमेशा के लिए माँग बैठे।" दया ने कहा और फिर वह कमरे मे चली गयी।

सरला के मन मे आया कि वह जाने के लिए मना कर दे। भाभी उसे बना-सँवार कर इसलिए भेजना चाहती है कि कोई उसे पसन्द कर ले और... ...! नही, यह ठीक नही है... यह ठीक नही है।

"यह लो। मै सैन्डिल के लिए तो भूल ही गयी।" कहते हुये दया फिर बाहर निकल आयी। "अभी लाती हूँ। मालती की सैन्डिल एकदम फिट आयेगी तुम्हारे।"

इससे पहले कि सरला कुछ कह सके, दया बाहर चली गयी।

"हम भी अच्छे-अच्छे कपड़े पहनेगे, बुआ।" कहता हुआ मुन्ना भी बाहर आ गया।

"हाँ, हाँ बेटा! तुम भी पहनना," कहकर सरला चौके के बाहर आ गयी।

× × ×

शाम को जब शकुन ने ललित के घर का द्वार खटखटाया तब सरला तैयार हो चुकी थी। उसी ने द्वार खोला। शकुन सरला को रेशमी साडी और ब्लाउज मे देखकर चौक पडी। उसे लगा, सरला सुन्दर ही नहीं, बहुत सुन्दर है। वास्तव मे वह उस समय लग भी बहुत सुन्दर रही थी। शृगार ने सरल मूक सौन्दर्य को जैसे वाणी दे दी हो।

सरला ने शकुन को ले जाकर कमरे मे बिठाया। दया भी वही थी।

उसने हाथ जोडकर शकुन से नमस्ते की। शकुन ने भी हाथ जोड़ दिये।

शकुन ने दया को ध्यान से देखा। वह घर की धुली साधारण धोती मे भी आकर्षक लग रही थी। गृहस्थी की चक्की मे पिसकर और अभावों के कठोर थपेडो को सहकर भी वह पराजित नही हुई थी मस्तक पर चिन्ता की रेखाये होते हुये भी उसके अधरो पर मुस्कान थी, नयनों मे उत्साह की ज्योति थी।

"बहुत दिनो से आपसे मिलने को जी करता था पर कभी आ ही न सकी। आज जाकर कही भेट हो सकी।" शकुन ने दया से कहा।

"हमारे अहोभाग्य जो आपने दर्शन दिये।" दया ने गभीरता से कहा और फिर एक क्षण रुककर बोली, "हमारी कुटिया पवित्र हो गयी।"

"कैसी बाते करती हो बहन!" कहकर शकुन रुक गयी। उसकी समझ मे न आया कि आगे क्या कहे।

तभी बाहर से मुन्ना आ गया। वह साफ नेकर और कमीज पहने था।

"कहाँ चला गया था तू? बुआ जी को नमस्ते कर।" दया डाँटकर बोली।

मुन्ना ने सहम कर हाथ जोड़ दिये।

बुआजी शब्द सुनकर शकुन की छाती पर भारी घूँसा सा पडा। बहुत प्रयत्न करने के बाद वह अपने निःश्वास को रोक सकी।

"सरला की बात कही तय हुई?" शकुन ने दया से पूछा।

सरला लजाकर बाहर चली गयी।

"अभी कहाँ तय हुई है।" दया दुखी स्वर मे बोली। "कई जगह बात चलायी पर वे हजारो का दहेज चाहते है। दहेज देने के लिए हम रुपया कहाँ से लाये!"

शकुन को ललित पर क्रोध आ गया। ललित उससे झूठ बोला था।

"आप की नजर मे कोई ऐसा लडका हो जो रुपया-पैसा न देखकर अच्छी लडकी चाहता हो तो बताना।" दया बोली।

"हुँ, बताऊँगी; जरूर बताऊँगी।" शकुन ने चौककर कहा। एक

क्षण रुककर फिर बोली—"अच्छा, अब चलती हूँ। फिर कभी आऊँगी।" फिर मुन्ना कि उँगली पकडकर उठते हुये कहा—"हमारे घर चलोगे, मुन्ना?"

"हाँ! हम तो बहुत देर से तैयार है।"

"बहुत दुष्ट हो गया है तू।" दया ने फिर डाँटा।

"क्यों डाँट रही है उसे? बहुत प्यारा बच्चा है!" शकुन ने स्नेह से कहा। फिर सोती हुई मुन्नी की ओर देखकर बोली—"मुन्नी सो रही है। नही तो उसे गोद मे लेकर खिलाती।"

"आज सवेरे से हरारत है उसे।" दया ने बताया।

शकुन ने मुन्नी की नाडी देखकर कहा—"इस समय तो कम है। दवा दे रही हो?"

"मोहल्ले में एक वैद्य जी हैं। उन्ही की दवा दे रही हूँ।" कहकर दया भी खड़ी हो गयी।

शकुन मुन्ना की उँगली पकड़े हुये बरामदे में आ गया। सरला आँगन मे टहल रही थी।

"चलो, सरला।" कहकर शकुन द्वार की ओर बढ गयी।

सरला और मुन्नाके जानेके बाद दयाने द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

गली के बाहर कार खडी थी। कार का द्वार खोलकर शकुन ने मीठे स्वर मे सरला से कहा—"बैठो।"

सरला बैठ गयी। मुन्ना भी बैठ गया। वह बहुत प्रसन्न था।

"ड्राइवर नही लाई क्या?" ड्राइवर न देखकर सरला ने धीमे और सकुचित स्वर मे पूछा।

"मै स्वय ड्राइवर हूँ।" कहकर शकुन हँस पड़ी।

कार तीव्र गति से 'मनोहर-विला' की ओर दौड़ने लगी।

मुन्ना प्रसन्न होकर तालियाँ बजाने लगा।

सरला को लगा, जैसे वह हवा मे उडी जा रही है, उड़ी जा रही है धरती से दूर, सितारों की ओर!

आठ

कमल के अतिरिक्त अन्य आमंत्रित कवि-गण समय से पहले ही आ गये। सभी बन सँवर कर आये थे। रायबहादुर मनोहरलाल ने सबका स्वागत हाथ जोड़ कर किया। कामेश्वर भी समय से पहले ही आ गया। बाबू श्यामसुन्दर उसके साथ थे। शैलजा ने उनका परिचय रायबहादुर से कराया। कामेश्वर शैलजा के साथ दूसरी ओर चला गया। बाबू श्यामसुन्दर रायबहादुर से बाते करते रहे।

धीरे-धीरे रायबहादुर की मित्र-मडली भी आ गयी। उस मित्र-मंडली मे डाक्टर, वकील तथा पूँजीपतियो के अतिरिक्त नगर के उच्चाधिकारी भी थे। उनके बचपन के मित्र प्रोफेसर इन्द्र भी आ गये। वे एक स्थानीय कालेज मे हिन्दी के प्रोफेसर थे और समालोचक के रूप में हिन्दी-साहित्य मे अपना स्थान भी बना चुके थे।

शैलजा की आँखे फाटक की ओर लगी थी। वह बात तो कर रही थी कामेश्वर से पर उसका हृदय प्रतीक्षा कर रहा था कमल की। क्या कमल नही आयेगा? पर ललित तो कहता था कि वह अवश्य आयेगा। क्यों नही आया अभी तक? क्या बात हो गयी? शैलजा झुझला पडी। उसने सोचा कि यदि कमल नही आयेगा तो वह कल ही ललित को नौकरी

से जवाब दिलवा देगी।

"यू आर लुकिंग लायक अ फेरी फ्रॉम सम डिस्टैन्ट फेरीलैन्ड।" शैलजा को अनमनी देखकर कामेश्वर ने उसे प्रसन्न करने के उद्देश्य से कहा।

"सच? क्या मैं परी लग रही हूँ?" शैलजा ने पूछा, किन्तु उसकी दृष्टि फाटक की ही ओर रही।

"अगर मुझे झूठा समझती हो तो शीशा देख लो। मिरर्स नेवर टेल अ लाई।" कामेश्वर ने मुस्करा कर उत्तर दिया।

शैलजा मौन रही। उसकी व्याकुलता बढती जा रही थी।

"मीना, लीला, कम्मो, निम्मी, शीला सभी तो आ गयी हैं। फिर इस बेचैनी से किसका इन्तजार है?" कामेश्वर अन्त मे पूछ ही बैठा।

"इन्तजार! किसी का भी तो नहीं।" चौंककर शैलजा बोली। "सिसी न जाने कहाँ चली गयी है। उन्ही की राह देख रही हूँ।"

कामेश्वर को शैलजा का यह असत्य भी सत्य लगा। उसने खुलकर साँस ली।

तभी एक फाटक से कमल और दूसरे से शकुन की कार ने प्रवेश किया। शैलजा का मुख कमल की तरह खिल पडा।

कमल साधारण धोती-कुर्त्ता पहने था। पैरों मे फटी चप्पल थी जो धूल से सनी थी। शैलजा तेजी से उसकी ओर बढी। कामेश्वर ने एक बार कमल की ओर देखा और फिर कार से उतरती हुई सरला को। शकुन से अभिवादन करके वह तेजी से शैलजा की ओर बढ गया।

"मेरे अहोभाग्य जो आपने आने की कृपा की। मै तो निराश हो गयी थी।" शैलजा ने हाथ जोड़कर अभिवादन करने के बाद कमल से सहज स्वर में कहा।

"वचन देकर उसे पूरा न करने का अभ्यस्त मै नही हूँ।" कहकर कमल उस ओर बढने को अग्रसर हुआ जिधर अन्य कविगण खडे थे।

उसी समय कामेश्वर आ पहुँचा।

"रुकिये तो।" शैलजा के मुख से निकल गया।

कमल के उठते हुये पैर रुक गये।

"इनसे आपका परिचय करा दूँ। यह है मेरे सहपाठी मिस्टर कामेश्वर और आप है हिन्दी के सुप्रसिद्ध तरुण कवि श्री कमल जी। बहुत पीडा रहती है आपके गीतो मे।"

"अच्छा।" कामेश्वर ने अजीब मुद्रा मे कहा। "निराश प्रेमी मालूम होते है आप।"

कामेश्वर की बात ने कमल की नस-नस मे पिघली आग भर दी। वह रूखे और तेज स्वर मे बोला :—

"कुछ पीडायें ऐसी होती है जिनकी तीव्रता की तुलना मे प्यार की पीडा कुछ भी नही। पर . पर आपका कदाचित प्यार की पीड़ा के अतिरिक्त अन्य किसी पीड़ा से परिचय है ही नही।"

क्रोध से कामेश्वर का चेहरा लाल हो गया। अपमान से तिलमिला कर वह कुछ कहना ही चाहता था कि शैलजा बीच मे बोल पड़ी :—

"कमल जी ठीक कहते है।"

"आप कदाचित मेरी बात का बुरा मान गये है, कामेश्वर जी! मेरा उद्देश्य व्यक्तिगत आक्षेप का नही था। मेरा तात्पर्य तो आपके वर्ग के सभी लोगों से था। प्यार की पीड़ा आप लोग ही मोल ले सकते है। हम लोगों के लिए प्यार अधिकार नही, पावन कर्त्तव्य है और कर्त्तव्य-पालन से पीडा नही, शान्ति मिलती है।" कहकर कमल तीव्र गति से अन्य कवियो की ओर बढ गया।

"सनकी मालूम होता है।" कामेश्वर बड़बडाया।

शैलजा ने सुनकर भी नही सुना।

"हाफ मैड।" कामेश्वर फिर बुबबुदाया।

कामेश्वर को अकेला छोड़कर शैलजा उस ओर बढ़ गयी जिधर शकुन के साथ सरला खडी थो।

"यह कौन है?" शैलजा ने शकुन से सरला के विषय मे पूछा। उसने न तो कभी सरला को देखा ही था और न उसे यह ही ज्ञात

था कि शकुन ललित की बहन को लेने गयी थी।

"मेरी सहेली है।" शकुन ने सक्षिप्त सा उत्तर दे दिया और फिर सरला से बोली—"यह मेरी छोटी बहन शैल है। इसी का जन्म-दिन है आज।

सरला ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया, किन्तु शैलजा बिना उत्तर दिये ही आगे बढ़ गयी।

सरला को बहुत अटपटा सा लगा। उसके मन का भाव समझ कर शकुन ने कहा—"शैल की किसी बात का बुरा न मानना। उसका स्वभाव ही ऐसा है।

सरला मौन रही। उसे चहल-पहल पूर्ण उस वातावरण मे अजीब सा लग रहा था। हर ओर लोग हँस रहे थे, बोल रहे थे। जिधर उसकी दृष्टि जाती थी उधर उल्लास और उत्साह दिखाई देता था। उल्लास और उत्साह के उन हल्के-फुल्के क्षणो के साथ अपना सामजस्य करने मे वह अपने को एकदम असमर्थ पाती थी। यद्यपि उसके वस्त्र बुरे नहीं थे तद्यपि वह अपने हृदय मे हीन-भाव पा रही थी। शकुन के अतिरिक्त वहाँ और कोई भी तो ऐसा नही था जिससे वह बाते कर सकती। वह अनुभव कर रही थी कि उसने वहाँ आकर भूल की है—बहुत भारी भूल की है। उसके लिए खुलकर साँस लेना भी कठिन हो रहा था।

बच्चों का संसार निराला ही होता है। वहाँ न कोई छोटा होता है न बडा। जहाँ सरला अपने को उस समाज के सर्वथा अनुपयुक्त पाती थी वहीं मुन्ना पल भर में ही अपने समवयस्क बच्चों मे घुल-मिल गया था। सरला की भांति उसके हृदय मे कोई हीन भाव न था। वह बच्चों के साथ हँस रहा था, खेल रहा था।

धीरे-धीरे लोग बड़े हाल में एकत्रित होने लगे। वहीं एक बडी मेज पर बर्थ-डे केक सजाकर रक्खा गया था। उसके आसपास अठारह बड़ी मोमबत्तियाँ चाँदी के पात्रों मे जल रही थीं। हर्ष पूर्ण करतल ध्वनि

एवं बधाइयो के मध्य शैलजा ने धीरे-धीरे सभी मोमबत्तिया बुझा दी और फिर मुस्कराते हुये उसने केक काटा। हाल हँसी-कहकहों से गूँज उठा।

कुछ लोगो ने उपहार दिये जिन्हे शैलजा ने सधन्यवाद स्वीकार किया। वह उपहार ले-लेकर मेज पर रखती जाती थी। उसकी दृष्टि कमल को खोज रही थी पर हाल मे उसे कही भी कमल न दिखाई दिया। उसका मुख मलीन हो गया।

कामेश्वर उसके पास ही खडा था। उसे समझते देर न लगी कि शैलजा की दृष्टि किसे खोज रही है। ईर्ष्या से उसका चेहरा विकृत हो उठा। शैलजा की दृष्टि बचा कर वह हाल के बाहर आ गया। उसने देखा, कमल लान मे अकेले ही टहल रहा है। उसके पूरे पागल होने मे कामेश्वर को अब कोई सन्देह न रहा।

सरला ने हाल मे एकत्र लोगो को ध्यान से देखा पर उसे ललित कहीं भी नही दिखाई दिया। उसने शकुन से पूछ ही लिया :—"भैया नही दिखाई देते!"

'वे प्रीति-भोज के प्रबन्ध में लगे है। आते ही होगे।" शकुन ने धीमे स्वर मे कहा।

"अब कवि-गोष्ठी की कार्यवाही प्रारम्भ होगी।" तब तक प्रोफेसर इन्द्र ने अपनी गजी चाँद को दाहिने हाथ से सहलाते हुये कहा। "आप लोग बगल वाले हाल मे आने का कष्ट करें!"

बगल वाले हाल की ओर बढने वालों मे कवि-गण सबसे आगे थे।

हाल काफी बडा था। फर्श पर दरी, चाँदनी और कालीन बिछे हुये थे। बीच-बीच मे मोटे गावदार तकिये पडे थे। कवि-गण लपककर मुख्य स्थान पर बैठ गये। थोडी देर मे ही हाल भर गया।

कमल भी अनमना सा आकर एक कोने मे बैठ गया।

"आप उधर कहाँ बैठ गये, कमल जी? इधर आइये।" शैलजा ने मुख्य स्थान की ओर संकेत किया।

"मै यही ठीक हूँ।" कमल ने उत्तर दिया।

चाँदी के दो बडे थालों मे चाँदी के वर्क लगे पान लाकर ललित ने बीच मे रख दिये। उसके पीछे एक नौकर था जिसके हाथ मे सिगरेट के दो डिब्बे थे। उससे डिब्बे लेकर उसने वही रख दिये और फिर जेब से दियासलाई की डिब्बी भी निकाल कर रख दी। नौकर चला गया। ललित वही एक किनारे बैठ गया। उसने देखा, लडकियों के झुड के बीच में शकुन के साथ सरला भी बैठी है। मुन्ना उसकी गोद में है। सरला को रेशमी साडी-ब्लाउज पहने देखकर उसे आश्चर्य हुआ। उसने समझा कि शकुन ने ही उसे रेशमी वस्त्र दिये होगे।

कवि-गोष्ठी प्रारम्भ होनी चाहिए। प्रोफेसर इन्द्र स्वय-निर्वाचित सभापति की भाति बोल पड़े।

'गोष्ठी के सभापतित्व के लिए मै प्रोफेसर इन्द्र का नाम प्रस्तावित करता हूँ।" बाबू श्यामसुन्दर का स्वर गूँज उठा।

"मै अनुमोदन करता हूँ।" प्रोफेसर इन्द्र के एक विशेष कृपापात्र कवि महोदय ने गभीरता से कहा।

प्रोफेसर इन्द्र ने हँसकर स्वीकृति दे दी। वे उठकर सभापति का आसन ग्रहण करने ही वाले थे कि कमल बोल पड़ा :—

"धृष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ। पर मेरे विचार से गोष्ठी के लिए सभापति चुनने की कोई आवश्यकता नही है।"

प्रोफेसर इन्द्र उठते-उठते फिर बैठ गये।

"कमल जी ठीक कहते है। यह इन्फार्मल गोष्ठी है। इसमे सभापति की क्या आवश्यकता है?" शैलजा बोल पडी।

शैलजा की बात का कौन विरोध करे?

"मगर बेटो, गोष्ठी के संचालन के लिए कोई आदमी तो होना ही चाहिए।" रायबहादुर ने पान का बीडा मुह मे दबा कर कहा।

"प्रोफेसर साहब से अच्छा संचालक और कौन मिलेगा, डैडी।" शैलजा बोली और फिर बैग से कवियो की सूची निकाल कर प्रोफेसर इन्द्र को देकर कहा—"यह लिस्ट है कवियों की।"

प्रोफेसर इन्द्र ने सूची को देखकर मुस्कराते हुये कहा :—"एक नाम तो छूट ही गया है।"

"किसका ?" शैलजा के मुख पर सहज आश्चर्य था।

"तुम्हारा।" कहकर प्रोफेसर इन्द्र ने जेब से कलम निकाला और सूची में शैलजा का नाम बढ़ा दिया।

गोष्ठी प्रारम्भ हो गयी।

कवि गणों मे जागृति की लहर दौड गयी।

कविता-पाठ के साथ-साथ 'वाह!' 'बहुत सुन्दर!' 'क्या बात है!' के स्वर हाल में गूज उठे।

कुछ कवियो ने सस्ते शृगारी गीत सुनाये जिन्हे सुनकर बाबू श्याम सुन्दर ने नाक-भौ सिकोडी, प्रोफेसर इन्द्र हाल के बाहर देखने लगे और महिला-समाज ने सिर झुका लिया। एक कवि महोदय ने ब्रज-भाषा के सवैये सुनाये। उनका रग खूब जमा। जब वे उठकर अपने स्थान पर गये तब उनका सीना फूलकर दूना हो गया था। और एक सज्जन ने तो रायबहादुर का कृपा-पात्र बनने के लिए और भविष्य की गोष्ठियों में अपना स्थान सुरक्षित रखने के लिए रायबहादुर तथा शैलजा का प्रशस्ति-गान ही सुना डाला। उनकी रचना की समाप्ति पर जब शैलजा ने उनकी ओर मधुर मुस्कान से देखा तब वे फूलकर कुप्पा हो गये। अन्य कवियो पर विजय की गर्व पूर्ण दृष्टि डालकर वे अपने स्थान पर बैठ गये।

"अब आपके सामने कमल जी कविता-पाठ करेगे। आइये, कमल जी!" प्रोफेसर इन्द्र ने कमल की ओर देखा।

शैलजा का हृदय उछलने लगा।

कामेश्वर की साँसो की गति तीव्र हो गयी।

ललित सँभलकर बैठ गया।

कमल ने जो गीत सुनाया वह भाषा, शैली और भावों की दृष्टि से सब से भिन्न था। उसके गीत मे सस्ती शृगारी भावना नहीं थी; अतृप्ति

का क्रन्दन नही था। फिर भी उसमे एक ऐसा दर्द था जो सब पर छा गया। रचना की समाप्ति पर श्रोता गण मत्र-मुग्ध से रह गये । वाह वाही करने या तालियाँ बजाने तक का होश नहीं रहा।

गीत सुनाकर कमल अपने स्थान पर बैठ गया।

"एक गीत और सुनाइये कमल जी।" शैलजा ने आग्रह किया।

"अब मै क्षमा चाहता हूँ।" कमल का उत्तर था।

"एक गीत और! एक गीत और!!" कई कठो का समवेत स्वर हाल मे गूँज उठा।

मगर कमल अपने स्थान से न उठा।

"कमल जी अस्वस्थ होते हुये भी आ गये है यह उनकी महान कृपा है। अब उन्हे और परेशान न कीजिये।" ललित को खडे होकर कहना ही पडा।

हाल मे शान्ति छा गयी।

कमल ने आँखो ही आँखो मे ललित को धन्यवाद दिया।

ललित फिर अपने स्थान पर बैठ गया।

"अब शैलजा जी आपको अपना मधुर गीत सुनायेगी।" प्रोफेसर इन्द्र ने शैलजा की ओर देखकर कहा।

"मुझे क्षमा नही मिल सकती, प्रोफेसर साहब?" शैलजा धीमे स्वर मे बोली। उसका उत्साह कमल की अस्वस्थता का समाचार सुनकर न जाने कहाँ विलुप्त हो गया था।

"यह कैसे हो सकता है? हम तो आपका गीत सुनने के लिए ही आये है।" कई कवि-गण एक साथ बोल पडे।

विवश होकर उसने एक छोटा सा गीत अनमने भाव से सुना दिया। कवि गणो ने झूम-झूम कर दाद दी।

"तुम तो बहुत अच्छा लिखती हो।" बाबू श्यामसुन्दर ने भी प्रशंसा की।

"सब आपकी कृपा है।" कहकर शैलजा ने सिर झुका लिया।

कामेश्वर ने कानों से अधिक उपयोग अपनी आँखो का किया था। वह कवितायें न सुनकर सरला की ओर देखता रहा था। एक बार शैलजा ने देख भी लिया था पर उसने सरला की ओर से दृष्टि न हटायी थी। उसका विचार था कि जिस प्रकार कमल को अपना प्रतिद्वन्दी मानकर वह ईर्ष्या की आग मे जल रहा है उसी प्रकार सरला को अपनी प्रतिद्वन्दिनी मानकर शैलजा भी ईर्ष्या की आग मे जलेगी।

सरला को कामेश्वर की लोलुप दृष्टि तीखे तीर सी चुभ रही थी। उसे लगा कि वह उसे आँखो ही आँखो से खा जाना चाहता था। वह मन-ही-मन उसे कोसने लगी। कितना धृष्ट और लम्पट है यह युवक, उसने सोचा। कमल का गीत सुनकर वह अपनी सुधि भूल बैठी। उसके गीत के दर्द का भीगा नशा उसकी रग-रग मे बिध गया। उसके हृदय में एक कसक सी उठी और आँखों मे आँसू भर आये।

शैलजा के गीत के बाद गोष्ठी समाप्त हो गयी।

"अब आप लोग पीछे वाले लान मे चलकर रूखा-सूखा ग्रहण करने की कृपा करें।" रायबहादुर ने खड़े होकर हाथ जोड़ते हुये कहा।

"मीठे-मीठे गीत सुनने के बाद यदि मीठे-मीठे पदार्थ भी खाने को मिलें तो इससे बढ़कर और सौभाग्य क्या हो सकता है!" बाबू श्याम सुन्दर ने अपनी सहज मुस्कान के साथ कहा।

सब लोग पीछे वाले लान की ओर चल दिये।

कमल ललित का हाथ पकड़ कर उसे बाहर बरामदे मे ले गया।

नौ

"तुम जानते हो कि यहाँ आकर मैंने अपनी आत्मा का हनन किया है।" बाहर आकर कमल गंभीर स्वर मे बोला।

"जानता हूँ। आपको धन्यवाद देने के लिए मेरे पास शब्द नही हैं। यदि आप न आते तो मेरी नौकरी अवश्य चली जाती।" ललित ने कृतज्ञता से कहा।

"जब कोई मुझसे 'आप' कहता है तो मैं एक दूरी का अनुभव करता हूँ। अच्छा हो यदि तुम 'तुम' का ही प्रयोग करो।" कहकर कमल ने कुर्त्ते की जेब से बीड़ी का बन्डल निकाला और एक बीड़ी अधरों के बीच दबाकर बोला, "दियासलाई है तुम्हारे पास ?"

ललित हाल से दियासलाई ले आया।

बीड़ी जलाकार कमल बोला, "अब मैं जा रहा हूँ।"

"यह कैसे हो सकता है। प्रीत-भोज.....।"

"मैं प्रीत-भोज के लालच से नही आया हूँ।" कमल के स्वर में दृढ़ता थी।

"मैं शैलजा जी को बुलाये लाता हूँ। अच्छा हो यदि उन्हीं से बात कर लो।"

कमल मौन रहा।

ललित चला गया और शीघ्र ही शैलजा को बुला कर आ गया।

"अब मैं आज्ञा चाहता हूँ।" कमल ने शैलजा को देख कर कहा।

"अभी से! प्रीत-भोज के बाद जाइयेगा।" शैलजा के स्वर मे अगाध आग्रह था।

"प्रीत-भोज मे सम्मिलित न हो सकने के लिए क्षमा चाहता हूँ। मुझे अभी जाना है।" कहकर कमल ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया।

"यदि आपने भोजन नही किया तो. . . .तो. . .।" आगे शैलजा कुछ न कह सकी। उसकी वाणी अवरुद्ध हो गयी।

कमल ठिठक गया।

"तो क्या होगा?" कमल ने पूछा।

"यदि आप चाहते है कि मै अपने जन्म-दिन पर रोऊँ तो आप जा सकते है।" रुद्ध कठ से शैलजा ने कहा।

कमल उसकी ओर देखता रहा।

"शैलजा जी के आग्रह को न टालो।" ललित ने कमल का हाथ पकडकर कहा। "आओ! सब लोग हमारी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।"

कमल सिर झुकाकर ललित के साथ चल दिया।

शैलजा की आँखो की गहरी झीलों मे मुस्कान के हँस तैरने लगे।

ललित ने कमल को एक रिक्त स्थान पर बिठा दिया। शैलजा उसी के समीप बैठ गयी।

कामेश्वर ने यह सब देखा तो उसका रक्त खौल उठा। क्रोध के कारण वह काँपने लगा। उसकी इच्छा हुई कि वह जाकर कमल का गला दबा दे पर किसी प्रकार वह क्रोध के तीखे घूँट को पी गया। देख लूँगा तुम्हें बच्चू, उसने मन-ही-मन कहा।

कमल और शैलजा के सामने ही शकुन और सरला बैठी थीं। कमल को अपने सामने देखकर सरला का हृदय जोर से धड़कने लगा।

"कमल जी! आपने एक गीत सुनाकर तो हमारी प्यास को बढ़ा

दिया है।" भोजन के बीच मे शकुन ने कहा।

कमल ने दृष्टि उठाकर शकुन की ओर देखा और फिर उसकी दृष्टि सरला की ओर गयी। सरला को पसीना आ गया। उसका हाथ काँपने लगा; ग्रास गले मे फँस गया।

"यह मेरी बड़ी बहन शकुन है।" शैलजा ने परिचय कराते हुय कहा। "और यह इनकी सहेली है।"

"आप लोगों के दर्शन करके वास्तव मे बहुत प्रसन्नता हुई। मेरा सौभाग्य है जो आपको हमारी रचना पसन्द आयी।" कमल ने विनम्रता से कहा और फिर दृष्टि झुकाकर भोजन करने लगा।

"तुम्हारी सहेली का नाम क्या है, सिसी ?" शैलजा ने अचानक ही शकुन से पूछ लिया।

"सरला।" शकुन ने छोटा सा उत्तर दे दिया।

"नामों की भी सार्थकता होती है।" कमल ने दृष्टि उठाकर धीमे स्वर में कहा।

सरला को लगा जैसे उसके नीचे की धरती फट गयी है और वह विद्युत वेग से रसातल की ओर धँसती चली जा रही है।

तभी पास बैठा हुआ मुन्ना बोल पड़ा—"बुआ जी पानी।"

सरला ने गिलास उठाकर उसे पानी पिलाना चाहा पर उसका हाथ इतना अधिक काँप रहा था कि शैलजा को हँसी आ गयी। सरला और भी हड़बड़ा गयी और फलस्वरूप गिलास का अधिकाँश जल छलककर मेज पर आ गिरा। सरला ने समहल कर गिलास मेज पर रख दिया।

"कुछ लोगों को टेबिल-मैनर्स भी नहीं आते।" शैलजा ने व्यग्य किया।

"शैल !" कठोर स्वर मे शकुन ने कहा।

शैलजा चुप हो गयी।

शकुन ने उठकर मुन्ना को पानी पिला दिया।

"टेबिल-मैनर्स जानना ही जीवन् की सार्थकता नहीं है।" कमल ने गंभीर स्वर में कहा।

सरला की दृष्टि स्वतः ही ऊपर उठ गयी।

"इनकी ओर से मैं क्षमा माँगता हूँ।" कहकर कमल फिर खाने गा।

शैलजा का शरीर इस प्रकार जलने लगा मानो उसे तीव्र ज्वर हो। ईर्ष्या की आग की चिनगारियाँ उसकी आँखों से निकलने लगी। उसने आग्नेय नेत्रो से सरला की ओर देखा। वह सहम कर और भी सिकुड़ गयी। फिर उससे खाना न खाया गया।

प्रीत-भोज के बाद अतिथि लोग जाने लगे। कवि गणो को बिदाई के रूप में ग्यारह-ग्यारह रुपये दे दिये गये। कमल ने रुपये लेने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। शैलजा ने उससे कुछ देर और रुकने का आग्रह किया। वह रुक गया। शैलजा ने इसे अपनी जीत समझी।

कामेश्वर भी रुक गया और उसने अपने मामा को भी रोक लिया। प्रोफेसर इन्द्र को रायबहादुर ने रोक लिया।

सब लोग कमरे मे बैठ गये।

कमल के आग्रह और शकुन की आँखों के मौन निमत्रण के कारण ललित भी जाकर एक कुर्सी पर बैठ गया। उसका बैठना शैलजा को अच्छा नही लगा। पर वह कुछ बोली नही।

"आपके गीत का जादू अब तक मेरे सिर पर है।" बाबू श्यामसुन्दर ने कमल की ओर मुड़कर कहा।

कमल हाथ मलता रहा, कुछ बोला नहीं।

"गीत तो अच्छा था परन्तु उसमे निहित पराजय और निराशा का भाव मुझे पसन्द नही।" प्रोफेसर इन्द्र का समालोचक जागरुक होकर बोला।

"आपने यदि मेरे गीत मे पराजय और निराशा के भाव देखे हैं तो मुझे यह कहना पडेगा कि आपने उसे समझा ही नही।" आवेश मे आकर कमल बोला। "उसमे पराजय और निराशा की नही, सघर्ष और आशा की भावना थी।"

कमल की बात सुनकर प्रोफेसर इन्द्र भड़क उठे। क्रुद्ध स्वर मे बोले:—

"तुम्हारे कहने का आशय यह है कि गीत समझने की भी बुद्धि नही है मझमे। वर्षो से बी० ए०, एम० ए० वालों को पढा रहा हूँ; सूर-तुलसी से लेकर निराला-पंत तक के साहित्य पर दर्जनों समालोचनायें लिख डाली हे और मै तुम्हारे जैसे नौसिखियों का साधारण सा गीत नही समझ सकता। तुम्हारा गीत न हुआ, कबीर की उल्टवासी हो गयी।"

वातावरण मे अजीब सा तनाव आ गया। रायबहादुर ने कम्पित हाथो से पान के दो बीड़े मुह मे दबा लिये। बाबू श्यामसुन्दर अपने पैर जोर से हिलाने लगे। कामेश्वर की आँखों मे चमक आ गयी। शैलजा का हृदय धडकने लगा। शकुन ऊँघते हुये मुन्ना को गोद मे लेकर अपने कमरे की ओर चली गयी। ललित का गला सूखने लगा। सरला के रक्तचाप की गति तीव्र हो गयी।

"अशिष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ।" कमल ने गभीर स्वर में कहना शुरू किया। "आपने जो कुछ कहा उसके उत्तर मे मुझे केवल यही निवेदन करना है कि समय के साथ मूल्य भी बदलते है। अपनी पुरानी कसौटी पर आज की नयी कविता को कसकर आप साहित्य का उपकार नही, अपकार ही करेगे।"

"कल से लेखनी पकडी है और आज ही उन्हे चुनौती देते हो जिन्होने साहित्य-सेवा मे अपना जीवन खपा दिया है।" प्रोफेसर इन्द्र ने तेजी से कहा। "फुटकर गीतों के लिख लेने से कोई महाकवि नहीं बन जाता। कितनी कृतियाँ आयी है तुम्हारी प्रकाश मे ?"

"कई वर्ष पूर्व एक कृति प्रकाशित हुई थी। साहित्य के तथा कथित ठेकेदारो ने उसका गला घोंट दिया। तब से मैने निश्चय कर लिया है कि तब तक कोई सग्रह प्रकाशित न कराऊँगा जब तक नयी मान्यताओं को समझने की बुद्धि हमारे दकियानूसी समालोचकों में नही आ जायेगी। कमल ने दृढ़ स्वर मे उत्तर दिया।

शकुन आकर फिर अपने स्थान पर बैठ गयी।

"यह क्यों नही कहते कि तुम्हारी टकैयल चीजो को छापने के लिए कोई प्रकाशक तैयार ही नही है।" प्रोफेसर इन्द्र ने तीखा प्रहार किया।

"आप यही समझ सकते है यदि आपको इस विचार से सन्तोष मिलता है तो।" कहकर कमल मुस्करा पडा।

उसकी मुस्कान से प्रोफेसर इन्द्र जल गये।

"मै समझती हूँ अब किसी दूसरे विषय पर बात की जाये।" शैलजा ने साहस करके कहा।

"अच्छा, अब मै तो चलता हूँ। कल सबेरे ही कालेज जाना है।" कहकर प्रोफेसर इन्द्र उठ खडे हुये। रायबहादुर उन्हें फाटक तक छोड़ आये।

"यदि कोई आपत्ति न हो तो एक गीत और सुना दीजिये।" शकुन ने कमल से आग्रह किया।

"आज तो क्षमा कीजिये। फिर कभी सुना दूँगा।"

"अब न जाने कब भेंट हो!" शकुन बोली।

"विश्वास रखिये। आप जब भी स्मरण करेंगी, आ जाऊँगा।" कमल ने हँसकर कहा। फिर रायबहादुर की ओर मुड़कर बोला—"अब आज्ञा दीजिये। बहुत दूर जाना है मुझे।"

"आप चिन्ता न करें। कार छोड़ आयेगी।" रायबहादुर ने सहज स्वर मे कहा।

"मै पैदल जाना ही पसन्द करूँगा।" कहकर कमल उठ खडा हुआ।

कमल ने ललित की ओर देखा। वह उठकर कमल के साथ बरामदे मे आ गया।

"तुम नही जाओगे घर?" कमल ने पूछा।

"बस मै भी चलता हूँ। सरला और मुन्ना को बुला लूँ।" कहकर ललित अन्दर चला गया।

कमल बीडी जलाकर बरामदे मे टहलने लगा।

"कोई अपराध हो गया हो तो क्षमा कीजियेगा।" अन्दर से आकर शैलजा ने कहा। "अस्वस्थ होते हुये भी आप आये इसके लिए धन्यवाद।"

"क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिए। मैंने अकारण ही प्रोफेसर साहब को रुष्ट कर दिया।"

"आपने ठीक ही किया। आज उन्हे छठी का दूध याद आ गया होगा।" कहकर शैलजा खिलखिलाकर हँस पडी।

तभी अन्दर से ललित आ गया। उसके पीछे गोद मे मुन्ना को लिए सरला थी। शकुन भी साथ थी। बरामदे में आकर शकुन ने ड्रायवर को कार लाने का आदेश दिया। कार आकर पोर्टिको में लग गयी।

"अगर पैदल ही चलने की शपथ न खाई हो तो एक बात कहूँ।" हँसकर शकुन ने कमल से कहा।

"कहिये।"

"ललित को छोडने कार जा रही है। आप भी उसी में चले जाइये।" शकुन ने सहज स्वर मे कहा।

कमल ने ललित की ओर देखा।

"शकुन जी की आज्ञा तो माननी ही पड़ेगी। आओ।" ललित बोला और कार में बैठ गया।

सरला भी बैठ गयी।

कमल खड़ा रहा।

"आओ भी।" ललित ने पुकारा।

कमल झिझकता हुआ कार तक गया और फिर अगली सीट पर बैठने लगा।

"अरे, वहाँ कहाँ बैठ रहे हो। पीछे आओ।" ललित ने बुलाया।

कमल पीछे जाकर बैठ गया।

ललित और कमल के बीच मे बैठी सरला कुछ और सिकुड़ गयी।

शैलजा खड़ी न रह सकी। वह डगमगाते डगों से अन्दर चली गयी। कामेश्वर ने कुछ पूछना चाहा पर वह तेजी से अपने कमरे की ओर बढ़

गयी। कामेश्वर चिढ गया। रूखे स्वर में अपने मामा से बोला :—
"अब चलिये, मामा जी।"

"यह मेरी बहन सरला है।" कुछ देर बाद ललित बोला।

"छल, आडम्बर और असत्य के समाज मे इन्हे देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा था। अब मेरी समझ मे सब कुछ आ गया।" कहकर कमल तेजी से पीछे छूटने वाले बिजली के खम्भो को देखने लगा।

ललित और सरला के कार से उतर जाने के बाद कमल ने ललित से सस्नेह कहा—"कभी-कभी आ जाया करो।" और फिर हँसकर बोला, "मैं देखने मे जितना बुरा लगता हूँ उतना बुरा हूँ नही।"

"अवश्य आया करूँगा, मित्र! पराजय और निराशा के क्षणो में मुझे तुमसे बहुत बल मिलेगा।"

"और मुझे तुमसे।" कमल का उत्तर था।

गली मे पहुँचकर ललित ने सरला की गोद से मुन्ना को ले लिया और धीमे स्वर मे रुकते-रुकते पूछा :—"ये साडी-ब्लाउज और सैन्डिल क्या शकुन ... ?"

"भाभी परोस से माँग लायी थी।" सरला ने बीच में ही धीमे और उदास स्वर मे कहा।

ललित कुछ बोला नही। सिर झुकाये चुपचाप चलता रहा।

ड्रायवर को राममोहन के हाते का पता देकर कमल अपने विचारों मे खो गया। वह सोच रहा था शकुन के बारे में, सरला के बारे में, शैलजा के बारे मे। शकुन और शैलजा के स्वभाव तथा उनकी सहज प्रकृति मे पूर्व-पश्चिम का अन्तर पाकर वह आश्चर्य कर रहा था।

और सरला?

सरला की आँखो मे जिस गहन वेदना और विषम परिस्थितियों से उत्पन्न निराशा का भाव उसने देखा था उसके स्मरण से उसका मन भी भारी हो गया। उसके मुख से एक दीर्घ निःश्वास निकल गया।

दस

उस रात सरला को बहुत देर तक नींद नहीं आयी। तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क में आते रहे। वह शकुन के बारे में सोचती रही। शकुन कितनी अच्छी है! पैसे का गर्व उसे छू तक नही गया है। स्वयं मुझे लेने आयी, सहेली बता कर परिचय दिया और हर समय साथ रही। यदि वह साथ न रहती तो मेरी क्या दशा हुई होती! और सरला अनुभव करने लगी कि वास्तव मे शकुन ही उसकी एक मात्र ऐसी सहेली है जिससे वह सुख-दुख की बाते कर सकती है, जिसके सामने वह निःसंकोच अपना हृदय खोलकर रख सकती है!

शकुन के बाद वह शैलजा के बारे में सोचने लगी। कितनी अकड है उसमे! सीधे मुह बात भी नही कर सकती। मेरे अभिवादन का उत्तर नही दिया; मुझमे टेबिल-मैनर्स की कमी बता कर मेरा अपमान करने की चेष्टा की। कमल ने करारा उत्तर देकर उसे लज्जित कर दिया नही तो और न जाने क्या-क्या बकती।

कमल! कितना सीधा और सरल युवक है! कितनी पीड़ा है उसके स्वर मे! फिर भी संघर्ष के प्रति जागरुक रहता है! प्रोफेसर इन्द्र को कितने करारे उत्तर दिये! बोलती बन्द हो गयी उनकी। अपने को

बहुत विद्वान समझते थे।

और कामेश्वर! कितना अशिष्ट और धृष्ट था वह! ऐसे घूर रहा था जैसे कच्चा ही चबा जायेगा। मनुष्य के वेश मे भयंकर भेडिया था वह जिसके जीवन का उद्देश्य भोली भेडो के माँस से अपनी तुष्टि करना ही है! सोचते-सोचते उसका हृदय घृणा से भर गया।

सुबह वह मालती की साड़ी-ब्लाउज और सैन्डिले लौटाने गयी, परन्तु मालती के द्वार से ही लौट आयी। उसे याद आ गया कि भाभी ने एक बहाना बनाकर चीजे माँगी थी। यदि मालती या उसकी माँ कुछ पूछ बैठीं तो वह क्या उत्तर देगी!

घर लौटकर उसने भाभी से कहा, "तुम्ही लौटा आओ ये चीजे।"

ललित गुड़ की चाय पीकर और दोपहर के लिए खाना लेकर मील चला गया था। मुन्ना अपने साथियों को पिछली रात के मजे सुनाने के लिए बाहर गली मे निकल गया था। मुन्नी का ज्वर उतर गया था। वह बरामदे मे खेल रही थी।

"तुम्ही दे आओ न!" दया ने हँसकर कहा।

"मै नही जाती। मुझे शर्म लगती है।" सरला बोली।

"शर्म? काहे की शर्म!" दया ने आश्चर्य से पूछा। वह कदाचित भूल गयी थी कि उन चीजों को माँगने के लिए उसने क्या बहाना बनाया था।

"तुम कह ही ऐसी बात आयी हो।" कहकर सरला कमरे में भाग गयी।

दया को हँसी आ गयी। वह साड़ी-ब्लाउज और सैन्डिलें लेकर द्वार की ओर बढ़ी।

"जरा अखबार भी लेती आना, भाभी।" सरला ने अन्दर से ही कहा।

दया जानती है कि सरला को समाचार-पत्र पढने का चाव है। घर मे तो कोई पत्र आता नही था। अतः वह मालती के यहाँ जाकर नित्य 'विश्वमित्र' पढ़ लिया करती थी।

कुछ देर बाद जब दया लौट कर आयी तो उसके हाथ में 'विश्वमित्र' था।

सरला ने झपट कर अखबार ले लिया।

समाचार पढते-पढते उसकी दृष्टि एक विज्ञापन पर पड़ी। विज्ञापन के ऊपर मोटे-मोटे शब्दो मे लिखा था—'लडकी चाहिए।'

सरला पूरा विज्ञापन एक साँस मे ही पढ़ गयी। उसमे लिखा था :—

"पैतालीस वर्षीय एक धनी नि.सन्तान विधुर के लिए एक नि सन्तान विधवा की आवश्यकता है। जाति-पाँति का कोई बन्धन नही। दहेज का भी कोई प्रश्न नही है। तत्काल ही ब्याह करने की इच्छा रखने वाले पत्र-व्यवहार करें। ब्याह आर्य-समाज की रीति से होगा।"

पत्र-व्यवहार के लिए एक पोस्ट-बाक्स का पता दिया हुआ था।

विज्ञापन पढ़ कर सरला को लगा कि उसे समस्या का समाधान मिल गया है। जो मार्ग अभी तक अधकार से आच्छादित था वही प्रकाश की किरणो से आलोकित हो उठा। उसने सोचा कि भाई की चिन्ताओ को दूर करने का यही सर्वोत्तम उपाय है। निश्चय की दृढ़ता उसके नेत्रों मे चमक बनकर प्रकाशित हो उठी।

दोपहर को जब दया सो गयी तब उसने विज्ञापन के उत्तर मे लिखा :—

"प्रिय महोदय,

आपका विज्ञापन 'विश्वमित्र' मे देखा। मैं विधवा नही, एक कुमारी कन्या हूँ। अवस्था अठारह वर्ष की है। देखने मे भी अच्छी हूँ। घर-गृहस्थी के कामों में भी निपुण हूँ। मैं विश्वास दिलाती हूँ कि आप यदि मुझसे शादी करेंगे तो आपको निराश नही होना पडेगा।

यह जानकर हर्ष हुआ कि आप दहेज नही चाहते। हमारे पास देने के नाम पर कुछ है भी नही। हम तो आपसे कुछ लेना ही चाहते हैं। क्या आप दस हजार रुपये मेरे भाई को दे सकते है?

आप यह न सोचे कि मेरे भाई मुझे बेच रहे है। यह पत्र मैं अपनी ओर से लिख रही हूँ। भैया-भाभी को मैंने कुछ नही बताया है। दस हजार

"बुआ की गोद मे आजा, राजा बेटे !" सरला ने दोनों हाथ फैलाकर प्यार भरे स्वर मे मुन्ना को बुलाया।

वह आकर उसकी गोद मे बैठ गया।

"बहुत शैतान हो गया है तू !" दया ने उसका कान पकड़कर कडे स्वर मे कहा। "बोल कहाँ था अब तक ?"

मुन्ना रोने लगा।

"यह क्या आदत है तुम्हारी। जब देखो तब डॉटती ही रहती हो मुन्ना को।" सरला ने दया से कहा और फिर मुन्ना को चुपाने लगी।

दया चूल्हा जलाने की तैयारी करती हुई बोली :—"तुम्ही ने तो सिर पर चढा-चढा कर बिगाड दिया। तुम तो चली जाओगी ससुराल और उमर भर भुगतना पडेगा हमे।"

"अगर कहो तो मुन्ना को भी अपने साथ ले जाऊँ।" सरला ने कृत्रिम गभीरता से कहा।

उसकी बात सुनकर दया मुस्करा पडी।

मुन्ना सरला की गोद से उतरकर ऑगन मे खेलने लगा।

"तुम अभी गीत कोन सा गुनगुना रही थी ?" सहसा दया को जैसे भूली बात याद आ गयी हो ऐसे ढग से वह पूछ बैठी।

"कल की गोष्ठी मे एक गीत सुना था, भाभी ! उसी की कुछ पंक्तियाँ याद हो गयी है।" सरला ने सहज स्वर में कहा।

"बहुत पसन्द आया वह गीत ?"

"हॉ, भाभी ! उस गीत मे बहुत दर्द था। पर. . . . पर वह दर्द ऐसा नही था जो हमे आहे भरने के लिए छोड दे। उसमे चुनौती थी, जूझने की, दर्द और दुख का अन्त करने के लिए मर-मिटने की। आशा और विश्वास के स्वर उस गीत मे मुखरित हो उठे थे।" सरला ने आँखे बन्द करके भावावेश में आकर कहा।

दया उसके मुख की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखने के अतिरिक्त और कुछ न कर सकी। उसे लगा कि सरला इस वास्तविक जगत से दूर—

बहुत दूर किसी काल्पनिक लोक मे पहुँच गयी है।

चूल्हा जला कर दया ने बटलोई मे अदहन चढा दिया और फिर वह पीतल की फूटी थाली मे अरहर की दाल निकालकर उसे बीनने लगी।

कमरे से मुन्नी के रोने की आवाज आयी। वह जाग गयी थी।

सरला ने उसे गोद मे ले लिया और उसे प्यार से चूमने लगी।

अचानक सरला की इच्छा हुई कि वह मुन्ना-मुन्नी को जी भर कर प्यार करे भाभी के गले लगकर जी भरकर रोये। उसे पूरा विश्वास था कि विज्ञापन कर्त्ता विधुर उसका पत्र पढकर उसकी दशा पर तरस खायेंगे और. और उसे शीघ्र ही ससुराल जाना पडेगा। जिस घर मे खेल-खेलकर वह सयानी हुई, जिस घर की ईंट ईंट से उसका स्नेह-नाता है उसी घर से बिछुडने का ध्यान आते ही अजीब सी उदासी उसके प्राणो पर छा गयी और वह मुन्नी को कलेजे से लगाकर रोने लगी।

सिसकियो का स्वर सुनकर दया कमरे मे गयी। सरला को रोता देख कर उसने घबराये स्वर मे पूछा :—"क्या हुआ ?"

"कुछ नही, भाभी !" सरला ने सयत होकर कहा। "तुम्हारे कल वाले बहाने को याद करके रोने लगी थी।"

दया को सन्देह हुआ कि कही सरला पागल तो नही हो गयी है। वह उसकी ओर ध्यान से देखने लगी। फिर एक विचार सहसा उसके मस्तिष्क मे बिजली की तरह कौध गया। वह झपट कर दो लाल मिर्चे ले आयी और उन्हे सरला के ऊपर घुमाकर शीघ्रता से फिर बरामदे मे चली गयी।

सरला ने बाहर आकर देखा कि दया उन मिर्चों को चूल्हे मे डाल रही है।

"यह क्या तमाशा किया, भाभी ?" सरला ने हँसकर पूछा।

"नजर उतारी थी। लगता है कल तुम्हे किसी मन चले की नजर लग गयी है। तभी तो बहकी-बहकी बाते कर रही हो आज।" दया के स्वर मे सहज गभीरता थी।

चूल्हे की तेज आग मे जलकर मिर्चे राख हो गयी।

"देखो, जरा भी भस नही उड़ी। तुम्हे जरूर नजर लगी है।" दया ने विश्वास के साथ कहा और फिर एक क्षण रुककर बोली, "और लगती भी क्यो न? इन्द्रलोक की अप्सरा लग रही थी। मेरे मन मे तो आया कि तुम्हारे गाल मे एक छोटा सा काला तिल बना दूँ मगर जल्दी मे काजल की डिबिया मिली ही नही।"

"तिल से क्या होता, भाभी?"

"फिर मजाल थी कि किसी की नजर लग जाती!" कहकर दया आटा गूँथने लगी।

सरला के मुख से मुक्त हास्य की मृदु लहरियाँ निकल कर वायुमडल मे तैरने लगी।

× × ×

शाम को जब ललित मील से लौट कर आया तब काफी थका हुआ और उदास था। वह आँगन मे पडी चारपाई पर कटे हुये वृक्ष की भाति गिर पड़ा। दया चौके से निकलकर उसके पास गयी और धीमे स्वर में पूछा—"तबियत तो ठीक है?"

ललित मौन रहा।

"क्या बात है?" दया घबरा गयी।

"तुम्हारी अकल को रो रहा हूँ।" उठकर बैठते हुये ललित बोला। "मील मे शकुन का फोन आया था। झूठ बोलने के लिये मुझे डॉट रही थी।"

दया की समझ मे कुछ नही आया।

"मैंने उसे कह दिया था कि सरला की बात चल रही है और जल्द ही सम्बन्ध तय हो जायेगा, मगर तुमने सब गुड-गोबर कर दिया।" ललित ने चिढ कर कहा।

"मुझे क्या मालूम था कि तुमने क्या कहा है! मुझसे उन्होंने पूछा और मैंने सच्ची बात बता दी।" कह कर दया फिर चौके मे आ गयी।

"सत्य की देवी एक तुम्हीं तो हो दुनिया मे।" ललित ने रूखे स्वर मे कहा और फिर वह उठकर आंगन में बेचैनी से टहलने लगा।

ग्यारह

शैलजा के व्यवहार से कामेश्वर बहुत चिढ़ गया था। वह उस पर क्रुद्ध हो उठा था। और उसने मन-ही-मन निश्चय कर लिया था कि उसे अधिक छूट देना ठीक नहीं है। शीघ्र से शीघ्र अपना उल्लू सीधा करने के लिए भाति-भाति की योजनाओ का निर्माण वह रातभर करता रहा था। वह इसे भली भाति जानता था कि यदि उसकी पकड़ कही पर जरा सी भी ढीली रही तो वह मछली की तरह फिसल कर निकल जायेगी। इससे पहले कि चिड़या के परों मे उड़ने की शक्ति आये उसे घने जाल मे जकड़ लेने की आवश्यकता का अनुभव उसका रोम-रोम करने लगा। काफी सोच-विचार के बाद अन्त मे उसने एक योजना बना ही डाली। उसे विश्वास था कि यदि उसने सावधानी और बुद्धिमानी से काम लिया तो योजना अवश्य सफल हो जायेगी।

जब वह कालेज मे शैलजा से मिला तो उसके अधरों पर रोज से अधिक मधुर मुस्कान थी। उसकी मुख-मुद्रा देखकर कोई भी यह अनुमान नही लगा सकता था कि वह शैलजा के किसी व्यवहार से कभी भी खिन्न हुआ होगा। उसका रुख देखकर शैलजा को आश्चर्य हुआ। वह समझती थी कि कामेश्वर उससे रुष्ट हो गया होगा और वह रूखा व्यवहार करेगा।

"बहुत खुश दिखाई दे रहे हो! क्या बात है?" शैलजा ने पूछा।

"आज हमारे नये जीवन का नया दिन है। इससे ज्यादा खुशी की बात और क्या हो सकती है?" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

शैलजा की समझ मे उसका तात्पर्य नही आया, फिर भी वह मुस्करा दी।

"कल की गोष्ठी कैसी लगी?" उसने पूछा।

"स्प्लेन्डिड! कमल के गीत ने तो कमाल ही कर दिया। ही इज इनडीड अ जीनियेस!" कामेश्वर ने सहज स्वर में कहा।

उसके मुख से कमल की प्रशसा सुनकर शैलजा को आश्चर्य भी हुआ और हर्ष भी।

"कमल का गीत तुम्हे पसन्द आया?" उसने कामेश्वर की आँखो मे अपनी दृष्टि गड़ाकर पूछा।

यह क्षण बहुत खतरनाक था। कामेश्वर जानता था कि शैलजा उसके आन्तरिक भावो को पढने की चेष्टा कर रही है। शायद उसे उसकी बात पर विश्वास नही हुआ है। यदि उसकी मुख-मुद्रा मे तनिक भी परिवर्तन हुआ तो वह उसके हृदय मे कमल के प्रति पनपने वाली घोर घृणा का भाव जान लेगी।

"जिसे उसका गीत पसन्द न आये वह इन्सान नही, पत्थर है।" कामेश्वर ने अपने आन्तरिक भावों को मुस्कान के आवरण मे छिपा कर कहा। "जैसे प्रोफेसर इन्द्र।"

शैलजा ने अपनी दृष्टि कामेश्वर की ओर से हटा ली। उसे लगा कि उसने कामेश्वर को समझने मे भूल की है। वह वास्तव मे कमल का प्रशंसक है यह जानकर वह प्रसन्न हो उठी।

"तुम्हे कमल की प्रतिभा मे विश्वास है?" शैलजा ने धीमे स्वर मे पूछा और वह सामने मैदान की ओर देखने लगी।

"हाँ। एक दिन वह इन्डिया का टापमोस्ट पोइट हो जायेगा।" कामेश्वर ने पूरे विश्वास के साथ कहा।

"आई टू थिंक सो।" शैलजा धीमे स्वर में बोली। कुछ देर रुक कर उसने कहा—"तुम अपने मामा से कहकर उसका संग्रह प्रकाशित क्यों नहीं करा देते?"

कामेश्वर ने गूढ़ दृष्टि से शैलजा की ओर देखा।

शैलजा ने मुख दूसरी ओर कर लिया। उसे भय था कि कहीं कामेश्वर उसके हृदय के एकान्त कोने में अंकुरित कमल के प्रति आकर्षण को देख न ले। वह यह नहीं चाहती थी कि कामेश्वर को वास्तविकता का ज्ञान हो। वह चाहती थी कि कामेश्वर यही समझे कि जो कुछ वह कह या कर रही है वह केवल सहानुभूतिवश ही है; साधनों के अभाव में कुंठित होने वाली प्रतिभा को प्रकाश में लाकर और उसे विकसित होने का अवसर देकर वह मानवीय धर्म का पालन भर कर रही है।

कामेश्वर को धोखा देने की चेष्टा व्यर्थ थी। वह वास्तविकता का आभास पहले ही पा चुका था। फिर भी उसे तो ऐसा ही अभिनय करना था मानो वह धोखा खा गया है, असत्य के रेशमी जाल में फँस गया है।

"कल ही विचार मेरे दिमाग में भी आया था।" कामेश्वर ने स्वर में सत्य की झलक लाकर कहा। "मगर जो कुछ कमल ने कहा उससे तो मैंने यही नतीजा निकाला है कि वह अभी कोई कलेक्शन छपाना ही नहीं चाहता।"

"उन्हें मैं समझा लूँगी। तुम मामा जी को तो राजी कर लोगे?"

"ह्वाई नॉट ! मैं जरूर राजी कर लूँगा।" कामेश्वर ने विश्वास दिलाया।

"ओह! आई एम सो ग्रेटफुल टू यू! शैलजा ने प्रसन्न स्वर में कहा।

"मेरी बात पर कुछ सोचा?" कामेश्वर ने सहसा बात का रुख बदल कर पूछा।

शैलजा कठिनाई में पड़ गयी। सच तो यह था कि उसने कामेश्वर के प्रस्ताव पर गंभीरता से सोचा ही न था। कामेश्वर को प्रसन्न करने के लिए उसने असत्य का आश्रय लेकर मधुर स्वर में कहा—"कल से उसी

पर सोच रही हूँ। मगर....मगर अभी तक माइन्ड मेक अप नही कर पायी हूँ।"

"मै जल्द से जल्द तुम्हारा जवाब चाहता हूँ, शैल! तुम जानती हो, मेरे लिए यह जिन्दगी और मौत का सवाल है।" कामेश्वर के स्वर मे आद्रता आ गयी।

"जानती हूँ।" शैलजा ने मादक मुस्कान छोडते हुये तिरछी दृष्टि से उसकी ओर देखकर कहा। "रेस्ट अश्योर्ड! फैसला जिन्दगी के ही पक्ष मे होगा।"

कामेश्वर समझ गया कि उसे लासा दिया जा रहा है, किन्तु फिर भी दृष्टि और स्वर मे परम कृतज्ञता और प्रसन्नता का भाव भर कर बोला—"थैंक्स! मेनी मेनी थैंक्स!!"

शैलजा ने कोई उत्तर देना उचित न समझा!

तभी घंटी बज उठी।

दोनो क्लास-रूम की ओर चल दिये।

पीरियड भर दोनों एक दूसरे की ओर तिरछी दृष्टियो से देखते रहे।

दोनों मे मानो एक दूसरे को धोखा देने, छलने की होड लगी थी।

नारी पुरुष को छलने की चेष्टा कर रही थी।

पुरुष नारी को छलकर उसकी दुर्बलता पर कटु आघात करने की घात मे बैठा था।

पीरियड समाप्त होने के बाद शैलजा 'गर्ल्स रिटायरिंग रूम' की ओर बढी।

"जरा सुनना तो।" कहकर कामेश्वर उसके पीछे चल दिया।

शैलजा रुक गयी।

"कल शरद पूर्णिमा है। बोटिंग करने चलोगी?" कामेश्वर ने पूछा।

शैलजा सोच मे पड गयी।

"मुझे पानी से डर लगता है।" एक क्षण बाद उसने धीमे स्वर में दृष्टि नीची करके कहा।

"अगर नही चलना है तो साफ इन्कार कर दो। बहाना बनाने से क्या फायदा ?" रूखे स्वर मे कामेश्वर ने कहा और फिर वह जाने का उपक्रम करने लगा।

शैलजा को लगा कि उसका बना-बनाया खेल बिगडा जा रहा है। वह कामेश्वर को रुष्ट करके कमल के निकट नही आ सकती थी। कमल को जीतने के लिए उसने जो उपाय सोचा था उसका एक अनिवार्य अग था उसके सग्रह का प्रकाशन और यह कार्य कामेश्वर की सहायता से ही भली प्रकार हो सकता था।

"तुम तो नाराज हो गये।" मुस्कराते हुये शैलजा बोली। "इतनी छोटी-छोटी बातो पर बिगडोगे तो कैसे काम चलेगा ?"

कामेश्वर ने सोचा कि उसका तीर निशाने पर पडा है। वह रुक गया और कृत्रिम रोष से बोला—"इसे तुम छोटी बात कहती हो ? खैर ! मै कल सात बजे आऊँगा। तैयार रहना।"

"मै तुम्हारा वेट करूँगी।" कहकर झूमती हुई शैलजा रिटायरिग रूम की ओर बढ़ गयी।

जब कामेश्वर कालेज से घर पहुँचा तब वह बहुत प्रसन्न था। उसके पैर जमीन पर नही पड़ रहे थे। उसका फैलाया हुआ जाल शैलजा को चारो ओर से जकड़ चुका था। उसे विश्वास हो गया था कि बहुत शीघ्र ही वह पछी के पर तोडकर उसे हमेशा-हमेशा के लिए तडपने के लिए छोड देगा।

सीटी बजाता हुआ जैसे ही वह अपने कमरे की ओर बढ़ा वैसे ही गोमती ने हर्षित होकर कहा—"आ गया, बेटा ! झटपट कपडे बदल ! मै अभी चाय लाती हूँ।"

वह कपड़े बदल भी न पाया था कि गोमती चाय और नाश्ता लेकर आ गयी।

"तुमसे कई बार कह चुका हूँ, माँ कि तुम तकलीफ न किया करो।" कामेश्वर कमीज उतारकर कुर्ता पहनते हुये बोला। "मगर तुम सुनती

ही कहा हो।"

"बेटे का काम करने मे माँ को जो सुख होता है उसे तू क्या जाने!" गोमती स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेरती हुई बोली। "मै तो अब तभी आराम से बैठूँगी जब तेरी सेवा करने के लिए बहू आ जायेगी।"

कामेश्वर चाय पीने लगा।

"बेटा! मैंने तेरे लिए एक बहुत अच्छी लडकी देखी है। पढी-लिखी भी है और सुन्दर भी।" गोमती उसके पास बैठकर मीठे स्वर मे बोली। "दहेज भी काफी मिलेगा। बोल, उनसे हाँ कर दूँ?"

कामेश्वर ने चाय का प्याला मेज पर रख दिया और फिर गोमती की ओर बचपन भरी दृष्टि से देखकर बोला—"माँ! मै ब्याह-शादी के झझट मे पडना नही चाहता।"

"ब्याह-शादी झझट है?" गोमती के स्वर में कडाई आ गयी। "यह कह क्या रहा है तू?"

"ठीक कह रहा हूँ, माँ! मै शादी नहीं करूँगा।"

"शादी नही करेगा तो क्या जिन्दगी भर आवारा छोकरियों के पीछे डोलता रहेगा?" गोमती क्रुद्ध होकर बोली। "तू समझता है मै कुछ जानती नही। तेरी इन्ही हरकतो से भय्या नाराज है। अगर.... ।"

"मैं किसी की नाराजी की परवाह नही करता।" कामेश्वर बीच में ही आवेश से बोला। "किसी को खुश करने के लिए मै अपनी आजादी नही बेच सकता।"

क्रोध से गोमती का चेहरा तमतमा गया। इतना सयाना होकर भी कामेश्वर बच्चो जैसी बाते करता है; स्थिति की गभीरता भी नही समझता। उसकी इच्छा हुई कि उठकर बाहर चली जाये। उसका क्या है? दो-चार बरस की जिन्दगी है। भैया रोटी तो दे ही देगे! अपनी मूर्खता का फल कामेश्वर स्वय भुगतेगा। किन्तु माँ की ममता ने फिर अँगडाई ली। नही, उसे कामेश्वर के हित की रक्षा करनी चाहिए; उसे समझा-बुझा कर ठीक करना ही चाहिए।

"बेटा !" गोमती ममता भरे मधुर स्वर मे बोली। "भैया तुझसे बहुत नाराज है। अगर उन्होने तेरे लिए कुछ भी न किया तो ..तो क्या होगा ? सोच तो जरा।"

"मै तुम्हारा मतलब नही समझा।" कामेश्वर चोकन्ना हो गया।

"अगर उन्होने अपनी वसीयत मे तेरे नाम कुछ भी न छोडा तो क्या होगा ?" गोमती के स्वर मे पीडा बोल उठी।

"मगर ..मगर यह कैसे हो सकता है ?" कामेश्वर हकला कर बोला। "मेरे सिवाय उनका और है ही कौन ?"

"बहुत भोला है तू।" गोमती ने धीमे स्वर मे कहा। "अगर वे सारी सम्पत्ति दान कर दे तो क्या तू उन्हे रोक सकता है ?"

कामेश्वर ने इस बारे मे कभी कुछ सोचा ही न था। वह अपने को मामा की समस्त सम्पत्ति का उत्तराधिकारी समझता है। वह उतराधिकार से वंचित भी किया जा सकता है ऐसा विचार कभी स्वप्न में भी उसके मन में न आया था। गोमती की बात सुनकर वह कॉप उठा। उसके माथे पर पसीने की बूँदें झलकने लगी।

"क्या....क्या मामाजी मुझसे बहुत नाराज हैं ?" उसने भर्राये स्वर मे गोमती से प्रश्न किया।

"होगे नही। तेरे बिल चुकाते-चुकाते परेशान हो गये है। और इन सब झगड़ो की जड है वे लडकियाँ जिनके पीछे दीवाना होकर तू पैसा पानी की तरह बहाता फिरता है।" गोमती ने दुखी होकर कहा और फिर कामेश्वर की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि डालकर बोली—'अगर तेरी शादी हो जाये तो सब बखेडा खतम हो जाये। नाक में नकेल पडते ही तेरा इधर-उधर घूमना बन्द हो जाये और फिर भैया को भी शिकायत का कोई मौका ही न मिले।"

कामेश्वर चिन्तामग्न हो गया।

"क्या कहता है तू ?" गोमती ने आशा भरे स्वर मे पूछा।

"शायद तुम ठीक कहती हो, माँ ! लगता है शादी करनी ही

पड़ेगी।"

कामेश्वर का उत्तर सुनकर गोमती की बाछें खिल गयीं। हर्ष के आवेग से उँसकी धूमिल आँखो मे ज्योति आ गयी। आगे झुककर उसने पुत्र का मस्तक चूम लिया।

"बडा राजा बेटा है तू।" प्रसन्न स्वर में गोमती बोली। "तू चिन्ता न कर। मै सब ठीक कर लूंगी।"

और फिर वह चाय की ट्रे उठाकर कमरे से बाहर चली गयी।

कामेश्वर की उद्विग्नता बढ गयी। बेचैन होकर वह कमरे मे टहलने लगा।

और वह तब तक टहलता रहा जब तक बाबू श्यामसुन्दर न आ गये। जब बाबू श्यामसुन्दर ने उसे अपने कमरे से पुकारा तब वह जाकर विनीत भाव से खडा हो गया।

"बैठ जाओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने आदेश दिया।

वह कोच पर बैठ गया। उसे लगा कि कमरा घूम रहा है, कमरे की हर वस्तु घूम रही है।

"शायद तुम ठीक कहते थे। पुराने साहित्यकारो मे अब कुछ नवीनता नहीं रह गयी है।" बाबू श्यामसुन्दर ने शेरवानी के बटन खोलते हुये कहा।

"जी!" बडी कठिनाई से कामेश्वर के मुख से निकला।

"आज मैंने उपन्यास की पाण्डुलिपि पढी।" बाबू श्यामसुन्दर आराम से पैर फैलाकर बैठते हुये बोले। "बोझिल होने के साथ-साथ उसमे कोई नयी बात भी नहीं है। लगता है या तो पुराने लोगो का कोष समाप्त हो गया है या फिर प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा ने उन्हे पागल कर दिया है। वे समझने लगे है कि हम जो कुछ भी लिख देगे वह अमर हो जायेगा।"

कामेश्वर की समझ मे नही आया कि क्या बोले। हाँ, साँस लेने में जो कठिनाई उसे पहले हो रही थी वह दूर हो गयी। वह आराम से बैठ गया और खुलकर साँस लेने लगा।

"मैंने पाण्डुलिपि लौटा दी है।" बाबू श्यामसुन्दर फिर बोले।

'आपने ठीक किया, मामाजी।" इस बार कामेश्वर बोला। "पुराने लोगो का खून ठडा हो गया है। समय के साथ वे चल नही सकते; आज की माँगे उनसे पूरी नही हो सकती।"

"कल कमल ने ठीक ही कहा था। समय के साथ मूल्य भी बदलते है। आज पुरानी मान्यताये समाप्त हो रही है; नयी बन रही है। यह युग क्रान्ति का युग है। नयी प्रतिभाओ को प्रोत्साहन देना आज का युग-धर्म है।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"आप ठीक कहते है। नये खून मे गर्मी है, खानी है।"

"नये खून मे जोश तो बहुत है मगर सयम का अभाव है। फिर भी हमे नये विचारो, नयी मान्यताओ, नयी सम्भावनाओ को प्रकाश मे तो लाना ही है।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर गभीर हो गये।

"कमल के बारे मे आपकी क्या ओपीनियन है?" कामेश्वर ने डरते-डरते पूछा।

"तुमसे सैकडो बार कह चुका हूँ कि मुझसे खिचडी भाषा न बोला करो।" बाबू श्यामसुन्दर क्रुद्ध होकर बोले। "न जाने क्या हो गया है तुम लोगो को कि ठीक से बोल भी नही सकते।

कामेश्वर ने सहम कर सिर झुका लिया।

"क्या पूछ रहे थे तुम?" बाबू श्यामसुन्दर ने जोर से पूछा।

"जी, कमल के बारे मे आपका क्या विचार है?" कामेश्वर ने धीमे स्वर मे पूछा।

"मुझे उसके अतिरिक्त और कोई जँचा ही नही? वही घिसी-पिटी शृगारी भावनाये, वही शब्द-विन्यास, वही शैली, वही अलंकार! कमल मे नवीनता है। प्रतिभाशाली तरुण है वह!" बाबू श्यामसुन्दर ने निर्णय दिया।

"तो क्यों नही आप उसका कोई संग्रह निकालते है?"

बाबू श्यामसुन्दर के मुख पर चमक आ गयी। उत्साह से बोले—"अवश्य निकालूँगा।" फिर दूसरे ही क्षण उदास होकर धीमे स्वर में

कहा—"मगर वह देगा भी ?"

"आप उसकी चिन्ता न करें, मामाजी ! संग्रह मैं ले आऊँगा।"

"तब ठीक है। मुझे जिस दिन पाण्डुलिपि मिल जायेगी उसी दिन प्रेस में दे दूँगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर उठकर टहलने लगे।

कामेश्वर उठकर बाहर चला गया।

बारह

शारीरिक क्रियाओं का सचालक मस्तिष्क होता है। हमारे अग मस्तिष्क के आदेश से ही समस्त क्रियाये करते हैं। हमारी सचेष्ट क्रियाये चेतन मस्तिष्क के आदेशो का परिणाम होती है। कुछ क्रियाये ऐसी भी होती हैं जिनका सम्बन्ध मस्तिष्क से नही होता। वे अपने आदेश उपचेतना मस्तिष्क से प्राप्त करती हैं। हमारा उपचेतन मस्तिष्क भी कभी-कभी विचित्र कौतुको की सृष्टि करता है।

शैलजा ने कालेज जाने के लिए जब कार स्टार्ट की तब उसने स्वप्न मे भी न सोचा था कि कार कालेज की ओर न जाकर राममोहन हाते की ओर मुड़ जायेगी। उसके उपचेतन मस्तिष्क मे कमल से मिलने, उससे संग्रह देने के विषय मे बात करने की बलवती इच्छा थी अवश्य, पर घर से निकलते समय उसने उसके घर जाने का विचार तक नही किया था। पुस्तके लेकर वह कालेज के लिए ही चली थी परन्तु जैसे ही कार उस चौराहे पर पहुँची जहाँ से एक मार्ग कालेज की ओर जाता था और दूसरा कमल के घर की ओर वैसे ही उसके उपचेतन मस्तिष्क ने अपनी लीला दिखा दी। फलस्वरूप उसके हाथों ने कार का स्टियरिंग ह्वील कमल के घर की ओर मोड़ दिया और वह पाँच मिनट बाद ही राममोहन के हाते पहुँच गयी।

कार फाटक के पास छोड़कर वह पैदल ही अन्दर गयी। उसे आश्चर्य हो रहा था कि वह कालेज न जाकर यहाँ क्यो आ गयी और साथ ही साथ इस विचित्र घटना पर हँसी भी आ रही थी।

शैलजा कुछ दूर ही चली थी कि उसे सामने से आता हुआ कमल दिखाई दिया। वह प्रसन्न हो उठी। कमल ने भी उसे देख लिया था। उसके मुख पर आश्चर्य के चिन्ह थे।

"कोई परिचित रहता है आपका यहाँ?" कमल ने पास आकर विस्मय से पूछा।

"जी हाँ!" कहकर शैलजा ने मुक्त हास्य बिखेर दिया और फिर कटाक्ष करती हुई बोली। "क्या आप मेरे परिचित नही है?"

कमल की परेशानी देखकर शैलजा को हँसी आ गयी। कितना भोला है यह सीधी सी बात भी नही समझता!

"मै आपके पास ही आयी हूँ।" शैलजा ने उसकी परेशानी दूर करने के अभिप्राय से कहा।

किन्तु कमल की परेशानी कम होने के बजाय और बढ़ गयी। उसकी समझ मे न आया कि उसके पास आने की शैलजा को क्या आवश्यकता पड गयो।

"मेरे पास ...? आप परिहास कर रही हैं।" कमल ने अपने लम्बे बालों पर हाथ फेरते हुये कहा।

"आपसे परिहास करने की धृष्टता कैसे कर सकती हूँ? मै आपके पास ही आयी हूँ।" शैलजा ने गभीरता से कहा। "यहाँ खडे-खडे बात करने से अच्छा तो यह है कि आप फाटक के बाहर चले चले। वहाँ मेरी कार खडी है। किसी अच्छी जगह चलकर बाते होगी।"

कमल घबरा गया। वह ऐसी स्थिति के लिए तैयार नही था। बचने की चेष्टा करता हुआ बोला—"देखिये, इस समय मै बहुत आवश्यक कार्य से जा रहा हूँ। क्षमा कीजिये। फिर कभी बाते कर लेना।"

आपतो इस तरह घबरा रहे है जैसे आप लड़की हों और मैं लड़का

कहकर शैलजा खुल कर हँस पडी।

कमल सकपका गया। घबरायी दृष्टि से उसने गली मे इधर-उधर देखा कि कही कोई देख तो नही रहा है। गली मे उस समय कोई नही था। उसने सन्तोष की साँस ली।

"चलिये, देवी जी, बाहर चलिये।" कहकर वह तीव्र गति से फाटक की ओर बढ़ा।

शैलजा मुस्करा कर उसके पीछे चल दी।

"कहिये, क्या काम है आपको?" कार के पास रुककर कमल ने पूछा।

"आप बैठिये तो।" कार का द्वार खोलकर शैलजा बोली। "अभी बताती हूँ सब।"

कमल बैठ गया।

शैलजा ने अपने स्थान पर बैठकर कार स्टार्ट कर दी।

"कहाँ ले जा रही हो मुझे?" कमल पूछ बैठा।

"आप तो लडकियो से भी ज्यादा डरपोक है।" शैलजा ने शरारत भरे स्वर मे कहा और फिर रुककर बोली। "मुझे बहुत जोर से भूख लगी है। पहले कुछ खा-पी ले, फिर बाते होंगी।"

कमल अपने दुर्भाग्य पर अदृश्य आँसू बहाता चुपचाप बैठा रहा।

कार "क्वालिटी" के सामने जाकर रुक गयी।

"आइये।" नीचे उतर कर शैलजा बोली।

"आप जलपान कर आइये। मै यही बैठा हूँ।" कमल कार के अन्दर से ही बोला।

"जी।"

"मै भागूँगा नही।" कमल ने विश्वास दिलाया।

"आइये भी।" शैलजा ने कमल का हाथ पकड़ कर खीचते हुये कहा। "सीधी तरह नही आइयेगा तो गोद मे ले जाना पड़ेगा।"

कमल ने हल्का झटका देकर हाथ छुडा लिया। वह सिर झुका कर उतर

आया और धीमे स्वर मे बोला—"आप क्या कर रही है, देवी जी! पहले मेरे वस्त्रो को देखिये और फिर सोचिये कि मुझे अन्दर ले जाना कहाँ तक ठीक है।"

"उन्हे वस्त्रो से नही, पैसो से मतलब है। आप आइये तो।"

"एक बार फिर सोच लीजिये। मेरा कुछ नही बिगडेगा। आपको मुझ जैसे लगूर के साथ देखकर लोग आपकी हँसी उडायेगे।"

"आप मेरी चिन्ता न करें। मेरी हँसी उडाने का साहस किसी मे नही है।" कहकर शैलजा आगे बढ गयी।

कमल भी झिझकता हुआ साथ चल दिया।

'क्वालिटी' जैसा रेस्ट्राँ जनसाधारण की पहुँच के बाहर था। वहाँ तो वही जा सकते थे जो चाय या काफी के बजाय पैसा पीने की सामर्थ्य रखते थे। और पैसो वालो को सुबह इतना अवकाश कहाँ कि 'क्वालिटी' मे बैठकर समय नष्ट करे! इसलिए 'क्वालिटी' का हाल शाम को तो हँसी और कहकहो से गूँजा करता था पर सुबह प्रायः खाली ही रहता था। उस दिन भी हाल मे शान्ति थी। कोने की मेज पर बैठी एक एग्लो इन्डियन दम्पत्ति के अतिरिक्त हाल मे कोई न था। शैलजा और कमल दूसरे कोने में जाकर बैठ गये।

शैलजा को रेस्ट्राँ के सभी बैरे जानते थे। स्वयं मैनेजर उससे परिचित था क्योकि वह वहाँ बहुधा जाया करती थी—कभी अकेले, कभी कमेश्वर के साथ। कभी-कभी शकुन और रायबहादुर के साथ भी चली जाती थी। जैसे ही शैलजा और कमल गद्दीदार कुर्सियों पर बैठे वैसे ही मैनेजर अपने स्थान से उठकर वहाँ आ गया।

"गुड मार्निग, मिस!" शैलजा के अजीब से साथी को देखकर जो आश्चर्य उसे हो रहा था उसे छिपाने की चेष्टा करता हुआ वह बोला।

"गुड मार्निग।" शैलजा ने मृदु मुस्कान सहित कहा। "प्लीज सेन्ड केक्स, पैस्ट्री, सैन्डविचेज एन्ड काफी।"

मैनेजर ने वही से एक बैरे को आदेश दे दिया और फिर वह कमल पर

उलझन भरी दृष्टि डालकर अपने स्थान पर चला गया।

बैरा एक बड़ी प्लेट मे केक्स, पैस्ट्री और सैन्डविचेज लाकर रख गया।

"खाइये।" शैलजा ने सहज स्वर मे कमल से कहा।

"भूख मुझे नही, आपको लगी है।" कमल का रूखा उत्तर था।

शैलजा की मीन जैसी चचल आँखो मे स्थिरता आ गयी; उसके चाँद जैसे चेहरे पर उदासी की घटा छा गयी। कमल का रूखा व्यवहार उसे बुरा लगा। फिर भी अपने को सयत करके धीमे स्वर मे बोली :—

"क्या आप चाहते है कि इन सबके सामने मै आपको अपने हाथ से खिलाऊँ ?"

कमल उसकी ओर देखता भर रहा।

"खाइये।" कहकर उसने एक पेस्ट्री कमल के हाथ मे थमा दी और फिर प्लेट से दूसरी पेस्ट्री उठाकर स्वय खाने लगा।

कमल भी अनिच्छा से खाने लगी।

बैरा काफी और क्रीम रख गया।

शैलजा ने काफी बनाकर एक प्याली कमल के सामने खिसका दी और दूसरी अपने अधरो से लगा ली।

कमल सिर नीचा किये खाता-पीता रहा।

शैलजा कनखियो से उसकी ओर देखती रही।

"आपका गीत हम सबको बहुत पसन्द आया।" जलपान के बाद शैलजा ने अपनी उँगली मे पडी हीरे की अँगूठी से खलते हुये कहा।

"धन्यवाद।" कमल के स्वर मे रूखापन था। "क्या यही कहने के लिए आपने कष्ट किया है ?"

कमल की बात सुनकर शैलजा हँस पडी।

"लगता है रूखापन आपका स्वभाव बन गया है।" शैलजा अपनी हँसी रोककर एक क्षण बाद बोली। "बात यह है कि कल की गोष्ठी मे एक प्रकाशक भी थे। उन्हे आपकी रचना बहुत पसन्द आयी है। वे आपकी कविताओ का सग्रह निकालना चाहते है।"

"मैं अभी अपना कोई संग्रह प्रकाशित कराना ही नही चाहता।"

"यह सुनहला मौका हाथ से न खोइये। बाबू श्यामसुन्दर प्रान्त के प्रमुख प्रकाशक हैं। बडे-बडे साहित्यिक उन्हे अपनी कृतियाँ देने के लिए लालायित रहते है।" वह समझाने के ढग से बोली।

"रहते होगे।" कहकर कमल अधगोरी दम्पत्ति की ओर देखने लगा।

"मैं आपकी ओर से उन्हे वचन दे चुकी हूँ।" शैलजा ने कहा और वह कमल की ओर आशा भरी दृष्टि से देखने लगी।

"अपनी ओर से वचन देने के लिए मैंने कभी आपको अनुमति दी हो ऐसा मुझे स्मरण नही है।" कमल झुझलाकर बोला।

शैलजा तिलमिला उठी। उसे लगा कि कमल उसका जान-बूझ कर निरादर कर रहा है, अपमान कर रहा है। उसका गोरा चेहरा लाल हो उठा।

"आपने कभी अनुमति तो नही दी थी पर मैंने जो कुछ किया आपकी भलाई और भविष्य को ही ध्यान मे रखकर किया है।"

"मेरे भविष्य का ध्यान रखने वाला भी कोई है। यह जानकर मुझे हर्ष हुआ।" कमल ने उत्तर दिया। "पर मेरे लिए क्या अच्छा और क्या बुरा है यह आपसे अधिक मैं जानता हूँ।"

"बैरा, बिल लाओ।" कहकर शैलजा अपना बैग टटोलने लगी।

कमल चुपचाप बैठा रहा।

बेरा बिल ले आया। बिल तीन रुपये ग्यारह आनेका था।

शैलजा ने पाँच रुपये का नोट प्लेट पर रख कर कहा—"बाकी तुम ले लेना।" बैरा ने प्लेट उठा ली और वह झुककर सलाम करके चला गया

"आज हम लोग बोटिग के लिए जा रहे है। चलेगे?" शैलजा ने पूछा।

"नही।"

"चाँदनी रात मे गंगा की लहरों पर खेलना आपको अच्छा नही लगता? चलिये न! नये-नये भाव उत्पन्न होंगे; नयी-नयी प्रेरणाये मिलेगी।"

शैलजा के स्वर मे आग्रह था।

"प्रेरणा प्राप्त करने के लिए मेरे चारों ओर दुख, दर्द, निर्धनता, बेकारी, भूख और बीमारी ही यथेष्ट है। चाँद और चाँदनी की प्रेरणा उन कवियों को चाहिए जिनके लिए लिखना धर्म नही, फैशन है।" कमल आवेश मे आकर बोला। "मै कल्पना का नही, जीवन का गायक हूँ। मै आकाश के चाँद को नही देखता, मेरा काम धरती के उन लाखो-करोडो चाँदो को देखना है जिनकी चाँदनी चन्द लोगो की तिजोरियो मे बन्द है, जिनपर बेबसी के बादलो का पहरा है, जिन्हे आँसुओ का राहु दिन-रात ग्रसे रहता है। यदि आप अपने को साहित्यिक समझती है, यदि आप एक सच्चे कलाकार का धर्म पूरा करना चाहती है तो कल्पना के सपनों की गोद छोडकर जीवन के कठोर सत्य को पहचानिये। आइये, मै आपको ऐसे प्रेरक दृश्य दिखाऊँगा जिनकी कल्पना कभी आपने स्वप्न मे भी न की होगी। फिर . फिर आपको अपने कृत्रिम जीवन से ग्लानि हो जायेगी; पिकनिके, पार्टियाँ फिर आपको निरर्थक लगने लगेगी। बोलिये, साहित्यकार का कर्त्तव्य पूरा करने का साहस है आप मे? और ...और यदि नही है तो लिखना बन्द कर दीजिये। व्यर्थ मे समय नष्ट करने से कोई लाभ नही है?"

बोलते-बोलते कमल हाँफने लगा।

शैलजा को कमल की बाते विचित्र सी लगी। उसकी समझ मे न आया कि काव्य का भूख, दुख, दर्द, गरीबी और बेबसी से क्या सम्बन्ध है! काव्य ललित कला है! यह आवश्यक नही कि कविता मे आँसुओ का ही राग हो! बँगले मे रहकर, कार मे घूमकर, डान्स-डिनर का आनन्द लेकर भी कविता लिखी जा सकती है। कविता के लिए वह जीवन के वे सुख-साधन क्यो छोड़े जो उसे भाग्य ने दिये है? वह समस्त साधनो का भोग करती हुई तीन-चार सालो से लिख रही है और उसके गीतो की प्रशसा प्रोफेसर इन्द्र जैसे कट्टर आलोचको ने की है! नही, कविता का काम रोना-रुलाना ही नही है, हँसना-हँसाना भी है!

शैलजा सोच रही थी और कमल ध्यान से उसके मुख की ओर देख

कर उसकी भावनाओ को पढने का प्रयास कर रहा था।

"चलिये ! काफी देर हो गयी है।" कहकर शैलजा खड़ी हो गयी।

कमल भी खडा हो गया।

दोनो द्वार की ओर बढे। दोनो ही मौन थे।

"आइये आपको घर तक छोड़ दूँ।" कार का द्वार खोलकर शैलजा बोली।

"धन्यवाद ! मैं पैदल ही चला जाऊँगा।" कमल के उत्तर में निश्चय की दृढता थी।

"क्या कार पर बैठने से आपकी कविता को ठेस लगेगी ?" शैलजा के स्वर मे व्यग्य का पुट था।

कमल ने कोई उत्तर नही दिया। वह पैदल ही फूलबाग की ओर चल दिया।

शैलजा चिढ गयी। कार पर बैठकर उसने द्वार जोर से बन्द किया और कार स्टार्ट कर दी। वह कमल की ओर दृष्टि डाले बिना ही आगे निकल गयी।

कमल की रूखी और गर्वपूर्ण बातो से शैलजा का मूड खराब हो गया था। उसकी इच्छा हुई कि कामेश्वर की मीठी और चिकनी-चुपडी बाते सुने। फलस्वरूप वह घर न जाकर कालेज गयी, परन्तु जब कामेश्वर दिखाई न दिया तब उसे बहुत निराशा हुई। झुझलाकर उसने कार घर की ओर बढा दी।

घर पहुँच कर उसने फोन उठाकर कामेश्वर का नम्बर मिलाया। दैवात् फोन कामेश्वर ने ही उठाया।

"आज कालेज क्यों नही गये ?" शैलजा ने पूछा।

"और तुम क्यों नही गयी ?" कामेश्वर का स्वर आया।

"यह मेरे सवाल का जवाब तो नही है। खैर, हाँ, बोटिंग का प्रोग्राम पक्का है न ?" शैलजा ने हँसकर पूछा।

"एक दम पक्का ! ठीक सात बजे मैं गाड़ी लेकर आऊँगा। तुम तैयार

रहना।" कामेश्वर की आवाज आयी।

"मै बेचैनी से तुम्हारा इन्तजार करूँगी।"

"और तभी मै तुम्हे एक गुड न्यूज सुनाऊँगा।" कामेश्वर का मीठा स्वर आया और फिर फोन कट गया।

फोन रखकर, बैग झुलाती हुई जब शैलजा अपने कमरे की ओर बढी तब उसके मन का उल्लास उसके अधरो से निकलने वाले गीत की धीमी लय मे पूर्णतया व्यक्त हो रहा था।

× × ×

कमल को लगा कि उसके पेट मे भयकर आग जल रही है और जो कुछ उसने खाया-पिया है वह उबल कर उसके गले में अटक रहा है। उसने बहुत बेचैनी का अनुभव किया। उसकी आँतो मे विचित्र सी ऐठन हो रही थी। शैलजा के साथ बैठकर, उसके पैसो से खाने-पीने के लिए उसे अपने पर क्रोध आ रहा था; आत्मग्लानि की ज्वाला उसे दग्ध कर रही थी।

रामनारायण बाजार पहुँचते-पहुँचते वह थक सा गया। उसके लिए एक पग भी उठाना कठिन हो रहा था। एक एकान्त मे जाकर वह नाली के पास बैठ गया और हलक मे उँगली डाकर उसने उल्टी की। वमन करने के बाद उसने गली के नुक्कड पर लगे नगरपालिका के नल से हाथ-मुह धोया।

हाथ-मुह धोकर जब वह राममोहन के हाते की ओर बढ़ा तब वह काफी हल्कापन अनुभव कर रहा था।

उसे लगा कि वह अब प्रसन्न और स्वस्थ है।

तेरह

बाबू श्यामसुन्दर अपने कमरे मे बेचैनी से टहल रहे थे। बारबार उनके मस्तिष्क मे यही विचार आता था कि उन्होंने शादी के लिए पत्र में विज्ञापन देकर अच्छा नही किया है। इस ढलती अवस्था मे शादी करने से लोग उन पर हँसेगे, पीठ-पीछे तरह-तरह की बातें करेगे। शायद गोमती को भी बुरा लगे। परन्तु ... परन्तु किया क्या जाये? कामेश्वर के द्वारा अपने जीवन भर की कमाई को नष्ट होने देना भी तो ठीक नही है!

गोमती जब दूध लेकर आयी तब वे विचारमग्न होकर टहल रहे थे। दूध का गिलास मेज पर रखकर वह उनकी ओर प्रश्न भरीद दृष्टि से देखने लगी।

बाबू श्यामसुन्दर ने दूध पीकर गिलास फिर मेज पर रख दिया।

"क्या बात है, भैया? कुछ परेशान नजर आते हो।" गोमती ने धीमे स्वर मे पूछा।

"परेशान? नही तो।" चौककर, रूखी हँसी हँसते हुये बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"कोई बात जरूर है।" दूध का गिलास उठाकर उसने कहा। "बताओ, भैया! क्या बात है?"

"कुछ भी नही ! यूँही जरा कामेश्वर के बारे मे सोच रहा था।"

"उसकी फिकर न करो, भैया ! मैने उसे समझा दिया है।" गोमती ने आश्वासन दिया।

"समझा तो कई बार चुकी हो, मगर वह माने तब न।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर फिर टहलने लगे।

"मानेगा कैसे नही ? और फिर उसे ठीक करने का एक रास्ता और भी है।"

"क्या ?"

"शादी !" गोमती ने सहज स्वर मे कहा।

शादी के नाम से बाबू श्यामसुन्दर चौक से पडे। वे फटी हुई आँखो से गोमती की ओर देखने लगे।

"हाँ ! जल्द से जल्द उसकी शादी कर दो। बस, फिर बहू अपने आप ठीक कर लेगी उसे।" कहकर गोमती हँस पड़ी।

तभी नौकर सुबह की डाक दे गया।

अधिकाश पत्र उनके व्यक्तिगत नाम और प्रकाशन सस्था के नाम के थे। एक लिफाफे पर पोस्ट-बाक्स का पता था।

बाबू श्यामसुन्दर को यह समझते देर न लगी कि वह पत्र उनके विज्ञापन के उत्तर मे है। पत्र खोलते समय उनके हाँथ काँपने लगे। उन्हे लगा कि वे कोई बहुत भारी अपराध करने जा रहे है।

गोमती की तीव्र दृष्टि उनके मुख की ओर ही लगी थी। उसने उनके हाथो का काँपना भी देखा। उसने अनुमान लगाया कि दाल मे अवश्य कुछ काला है, परन्तु क्या बात है वह यह न समझ सकी। वास्तविकता जानने के लिए उसकी नारी-सुलभ जिज्ञासा जागरूक हो उठी।

पत्र खोलकर बाबू श्यामसुन्दर पढने लगे। पढ़ते समय उनके मुख पर कई रंग आये और गये। गोमती उन रगो का अर्थ समझने का प्रयास करती रही।

पत्र समाप्त करके बाबू श्यामसुन्दर फिर टहलने लगे। पत्र उन्होंने जेब

मे रख लिया। गोमती ने समझा कि उनकी बेचैनी बढ गयी है और उस पत्र को पढ कर वे और अधिक उद्विग्न हो उठे है।

"चिट्ठी मे कोई ऐसी-वैसी बात तो नही है, भैया ?" साहस करके गोमती पूछ ही बैठी ।

"नही, नही तो।" कहकर वे शिथिल से आराम कुर्सी पर बैठ गये।

वे सोच रहे थे कि क्यो न गोमती को अभी सब-कुछ बता दिया जाये। उससे पत्र के बारे मे राय ली जा सकती है ! पहले से ही उनके मन मे द्वन्द की आँधी चल रही थी पर उस पत्र ने उस आँधी को और भी तेज कर दिया था और उस वेग की तीव्रता मे उन्हे अपने पैर उखडते से मालूम हो रहे थे।

"मुझसे कोई बात न छिपाओ, भैया ! मै देख रही हूँ, कल से परेशान हो।" कहकर गोमती उनके समीप ही बैठ गयी।

"मैने ... मैने . . शादी करने का निश्चय किया है।" बाबू श्यामसुन्दर बडी कठिनाई से कह सके।

गोमती को अपने कानों पर विश्वास न हुआ। वह आश्चर्य से उनकी ओर देखती रही।

"मै ठीक कह रहा हूँ, गोमती ! मैने शादी के लिए समाचार-पत्र मे विज्ञापन दिया था और यह पत्र उसी के उत्तर मे आया है। मुझे. . . मुझे तुमसे कुछ राय लेनी है इस बारे में।"

गोमती उनकी बाते न तो ठीक से सुन ही सकी और न समझ ही सकी। उसकी सभी इन्द्रियाँ जैसे सुन्न हो गयी हो! उसके सामने तो कामेश्वर के भविष्य की बरबादी, अपनी योजनाओं के खँडहरों का ही दृश्य था। वह बेचैन हो उठी थी, परेशान हो उठी थी। उसने सोचा था कि उसका बेटा अगाध सम्पत्ति का स्वामी होकर राजसुख भोगेगा, पर यह क्या हो गया ?

गोमती ने अपने को संयत रखने की लाख चेष्टा की, पर चिन्ता की रेखाये मस्तक पर खिच ही गयी। बाबू श्यामसुन्दर ने उन रेखाओं को

देखकर गोमती के मनोभावो को समझा।

"तुम चिन्ता न करो, गोमती। तुम लोगों को किसी शिकायत का मौका नही मिलेगा। जैसे अब रहती हो, वैसे ही बाद मे भी रहना!" बाबू श्यामसुन्दर समझाने के ढग से धीमे स्वर मे बोले।

इसमे चिन्ता की क्या बात है? मै तो खुश हूँ, बहुत खुश हूँ।" गोमती अपने मन के भावो को छिपाने की चेष्टा करती हुई हँसकर बोली। "मेरी इच्छा कई बार हुई कि आपसे ब्याह कर लेने के लिए कहूँ मगर डर के मारे कह न सकी! चलो, ठीक ही है! घर मे भाभी आ जायेगी तो मेरा भार हल्का हो जायेगा।"

"भार तो तब भी तुम्हारे ऊपर ही रहेगा, बल्कि और बढ ही जायेगा।" बाबू श्यामसुन्दर धीमे स्वर मे बोले। एक क्षण रुककर उन्होने फिर कहा—"मै तो चाहता था कि कोई कुलीन विधवा मिल जाती तो अच्छा था, मगर मगर जो पत्र आज आया है वह कुमारी कन्या का है।"

"विधवा तो वह खोजे जिसे क्वाँरी लडकियाँ न मिले। हाँ, क्या उमर है लडकी की?" गोमती ने प्रसन्नता प्रदर्शित करते हुए पूछा।

"अठारह साल!"

गोमती प्रसन्न हो उठी। उसका दुख कम हो गया। उसने सोचा कि अठारह साल की भोली-भाली नादान छोकरी को उँगली के इशारों पर नचाना कठिन नही होगा।

"ठीक है। ज्यादा सयानी लडकी लाना भी ठीक नही।"

"मगर लोग क्या कहेगे?" बाबू श्यामसुन्दर ने शका की।

"लोगों की क्या है? वे तो बकते ही रहते है।" गोमती ने शका का समाधान कर दिया।

"शायद तुम ठीक कहती हो गोमती।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर गभीर हो गये।

गोमती उनकी ओर निर्निमेष दृष्टि से देखती रही।

"वैसे शायद मै इस लडकी से शादी न करता," कुछ देर बाद एक दीर्घ

निःश्वास छोड़कर बाबू श्यामसुन्दर बोले। "मगर उसका पत्र पढ़कर मैंने निश्चय कर लिया है कि ब्याह उसी से करूँगा। बिचारी बहुत गरीब घर की है। माँ-बाप हैं नहीं। भाई दहेज दे नहीं सकता।"

"तब तो उसका उद्धार करके पुन्य के भागी जरूर बनो, भैया।" गोमती के स्वर मे आग्रह था। बाबू श्यामसुन्दर केवल 'हूँ' कहकर रह गये।

गोमती प्रसन्न-चित्त बाहर चली गयी। गरीब घर की एक नादान छोकरी को बुद्धू बनाकर अपना उल्लू सीधा करना कोई कठिन कार्य नहीं होगा, ऐसा उसका विश्वास था।

तभी गैलरी मे कामेश्वर का स्वर आया। बाबू श्यामसुन्दर चौंक पड़े।

"अभी तक कालेज नहीं गये, कामेश्वर ?" उन्होंने ऊँचे स्वर मे पूछा।

"आज कालेज बन्द है, मामाजी।" कहकर कामेश्वर अन्दर आ गया और विनयपूर्वक सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

"रोज कालेज बन्द रहता है ! पढ़ाई क्या खाक होती होगी।" बाबू श्यामसुन्दर बड़बड़ाये।

"मामाजी !" धीमे स्वर मे कामेश्वर बोला।

"क्या है ?"

"आज शाम को मुझे बड़ी गाड़ी चाहिए।" विनीत स्वर मे कामेश्वर ने कहा।

"क्यों ?"

"कालेज के विद्यार्थी पिकनिक पर जा रहे हैं।"

"अच्छा ! ले जाना। मै छोटी गाड़ी से काम चला लूँगा।"

कामेश्वर प्रसन्न होकर बाहर चला गया।

बाबू श्यामसुन्दर ने जेब से वही पत्र निकाला और फिर उसे ध्यान से पढ़ने लगे। बार-बार उनकी दृष्टि पत्र भेजने वाली के नाम पर केन्द्रित हो जाती थी। तीन अक्षरों के उस नाम के वृत में ही सीमित उन्हें अपना

ससार लगने लगा।

वह तीन अक्षरो का नाम था——ारला।

× × ×

ललित जब मील से घर पहुँचा तब काफी थका हुआ था। जूते उतार कर वह आँगन मे पडी चारपाई पर लेट गया।

"बाबूजी! हमारे लिए क्या लाये?" पूछता हुआ मुन्ना भी उसके पास आकर बैठ गया।

"अरे, क्यो परेशान करने पहुँच गया उन्हे? इधर आ!" डाँट कर दया ने मुन्ना को बुलाया।

मुन्ना सहमकर ललित की ओर देखने लगा।

"बैठे रहो, बेटे!" कहकर ललित ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा।

तभी बाहर से किसी ने द्वार खटखटाया।

सरला कमरे मे थी, दया बरामदे के चौके मे। ललित उठकर द्वार खोलने गया।

बाहर बाबू श्यामसुन्दर को खडा देखकर ललित को आश्चर्य हुआ। बाबू श्यामसुन्दर भी ललित को देखकर सकपका गये।

"यह....यह आपका ही घर है?" बाबू श्यामसुन्दर ने आश्चर्य से पूछा।

"जी, हाँ।"

"स....र. .ला.....।"

"वह मेरी बहन है। कल आपने उसे रायबहादुर साहब के यहाँ देखा होगा। वह शकुन जी के साथ बैठी थी।"

"जरा मेरे साथ बाहर आइये। कुछ बाते करनी है आपसे।"

ललित घबरा गया। उसकी समझ मे नही आया कि बाबू श्यामसुन्दर क्यों आये है, उन्होंने सरला का नाम क्यों लिया है और वे उससे क्या बाते करेगे। जूते पहन कर वह शंकित हृदय और कम्पित पैरों से उनके

साथ चल दिया।

गली के छोर पर बाबू श्यामसुन्दर की कार खडी थी। वे द्वार खोलकर उसमे बैठ गये। उनका सकेत पाकर ललित भी उनके पास बैठ गया।

"तुमने मुझे कल गोष्ठी मे देखा होगा। मै कामेश्वर का मामा हूँ।" बाबू श्यामसुन्दर ने धीमे स्वर मे कहा। "मै एक उलझन मे पड गया हूँ और उसे सुलझाने के लिए तुम्हारी राय चाहता हूँ।"

"मैं....मै .क्या राय दे सकता हूँ आपको?" ललित ने कहा।

"दे सकते हो। पहले मेरी समस्या तो सुन लो। बात यह है ।" और फिर क्षण भर के लिए वे रुक गये मानो यह सोच रहे हो कि बात किस प्रकार शुरू की जाये। "बात यह है कि कामेश्वर की हरकतो से ऊब कर..,"

"जी....।" बीच मे ही ललित के मुख से निकल गया।

"ओह! देखो, समझ मे नही आता बात कैसे शुरू करूँ।" परेशानी के स्वर मे बाबू श्यामसुन्दर बोले। "कामेश्वर मेरी विधवा बहन का पुत्र है। दोनो मेरे साथ ही रहते है। मैने सोचा था कि कामेश्वर को ही कानूनी तरीके से गोद लेकर अपनी सारी सम्पत्ति उसके नाम कर दूंगा। मगर. मगर .वह बुरी सगत मे पड गया है। बताओ, जब वह मेरे सामने ही पैसे को पानी की तरह बहाने लगा है तब मेरे पीछे क्या करेगा।"

बाबू श्यामसुन्दर ललित के मुख की ओर देखने लगे।

ललित मौन रहा। उसकी समझ मे नही आया कि इन सब बातो से उसका क्या सम्बन्ध है और बाबू श्यामसुन्दर उसी से राय लेने क्यों आये है।

"मैने कामेश्वर को समझाने की बहुत चेष्टा की पर उसकी समझ मे कुछ आता ही नही। वह सुरा और सुन्दरियो के पीछे पागल हो रहा है। इसीलिए मैने विवश होकर यह निश्चय किया है कि उसे अपने उत्तराधिकार से वचित ही रक्खूँ।"

"निश्चय तो ठीक है आपका। सच तो यह है कि सारे पापों की जड़ पैसा ही है।"

बाबू श्यामसुन्दर ने उसकी उक्ति का प्रतिवाद नही किया। वे बोले—"अब प्रश्न यह है कि फिर अपना उत्तराधिकारी किसे बनाऊँ?"

"यदि आप चाहे तो अपनी सम्पत्ति दान कर सकते है।" ललित ने साहस करके धीमे स्वर मे सुझाव दिया।

बाबू श्यामसुन्दर ने ललित की ओर देखा और फिर एक क्षण बाद गभीर स्वर मे बोले—"तुम शायद पैसे का मूल्य नही जानते इसीलिए दान करने का सुझाव दे रहे हो! मै जानता हूँ क्योकि मैने दिन-रात एक करके पैसा कमाया है। मै वे दिन भूला नही हूँ जब मै पाई-पाई के लिए मोहताज था। नही, अपनी गाढी कमाई को मै दान नही कर सकता।"

"मै क्षमा चाहता हूँ ....।" कहकर ललित हाथ मलने लगा।

"मेरी बात का बुरा न मानना। तुम अभी बच्चे हो। मैने दुनिया देखी है, मै ऊँच-नीच समझता हूँ। मै चाहता हूँ कि मेरे परिश्रम के फल का भोग मेरी सन्तान करे और इसीलिए मैने दूसरी शादी करने का निश्चय किया है। बोलो, मेरा निश्चय गलत तो नही है?"

ललित की समझ मे न आया कि वह क्या उत्तर दे।

"शायद तुम सोच रहे हो कि मै तुमसे यह सब क्यो पूछ रहा हूँ!"

रँगे हाथो पकडे जाने पर चोर की जो दशा होती है वही दशा ललित की हो गयी। घबराकर बोला—"नही, नही! ऐसी बात नही है। आपका निश्चय ठीक ही है।"

"मैने दैनिक 'विश्वमित्र' मे विज्ञापन दिया था और उसके उत्तर मे मुझे एक पत्र मिला है। वह पत्र ... वह पत्र तुम्हारी बहन सरला का है। कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने सन्तोष की साँस ली मानो एक भारी बोझ उनकी छाती से उतर गया हो।

ललित को चक्कर आ गया। उसे लगा, जैसे हजारो बिच्छुओ ने उसे एक साथ डस लिया है और वह उनके डंकों के तीव्र विष के प्रभाव से मूर्च्छित हुआ जा रहा है।

"जी....।"

"मै ठीक कह रहा हूँ। यह देखो।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने पत्र अपनी जेब से निकालकर ललित के हाथ पर रख दिया।

ललित बडी कठिनाई से पत्र पढ सका।

"और पत्र मे जो कुछ लिखा है उसे ध्यान म रखते हुये मैंने सरला से शादी करने का निश्चय कर लिया है। मै कल ही तुम्हारी बच्ची के नाम बैंक मे दस हजार रुपये जमा कर दूँगा।

"मुझे नहीं चाहिए आपके रुपये!" ललित चीख पडा। "मै बहन को बेचने वाला नही हूँ।"

ललित ने दॉत पीसते हुये पत्र फाडकर कार के बाहर फेक दिया।

"कौन कहता है तुम बहन को बेच रहे हो!"

"दुनिया कहेगी। आपको ऐसे शब्द मुह से निकालने मे लज्जा नही आयी? आश्चर्य है! यदि आपको शादी ही करनी है तो किसी विधवा से कीजिये।" ललित आवेश के कारण कॉप ने लगा।

"सोचा तो मैंने भी यही था पर क्या करूँ? पत्र तुमने स्वय पढ लिया है। मैंने सारी स्थिति तुम्हारे सामने रख दी। तुम समझदार हो, आशा है मुझे गलत न समझोगे।" सयत स्वर मे कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने ललित के कन्धे पर हाथ रक्खा।

ललित की आँखो मे ऑसू आ गये।

"रोना कायरता है हमे जीवन के कटु सत्यों का सामना हँस कर करना चाहिए। क्या .. क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारी बहन आत्म-हत्या कर ले?"

ललित फूट-फूट कर रोने लगा।

"मेरी स्वय समझ मे नही आता कि क्या करूँ! मै अपने को उस देवी के सर्वथा अयोग्य पाता हूँ जो परिवार के सुख और नन्ही भतीजी के भविष्य के लिए इतना महान् त्याग कर रही है।" कहते-कहते बाबू श्यामसुन्दर सहसा रुक गये। उनका स्वर कुछ कॉप-सा गया। खास कर फिर बोले—"अच्छा, एक बात बताओ! यदि मै तुम्हे सरला की शादी किसी योग्य

वर से करने के लिए रुपये दूँ तो क्या तुम स्वीकार करोगे ?"

ललित आँसू भरी दृष्टि से उनकी ओर देखने लगा।

"बोलो, उत्तर दो।"

"मेरा अपमान न कीजिये। मै निर्धन अवश्य हूँ, पर भिखारी नही।" ललित ने दुखी स्वर मे कहा।

"तब क्या बहन को जीवन भर क्वाँरी रक्खोगे ? उस भावना को समझने की चेष्टा करो जिससे प्रेरित होकर सरला ने पत्र लिखा। जाओ और शान्त चित्त से इस पर सोचो। मै. . . .मै . . . .हर तरह से तैयार हूँ।"

ललित ने शिथिल हाथ से कार का द्वार खोला ओर नीचे उतर कर खडा हो गया।

"भाई, अगर मेरी किसी बात से तुम्हारे चित्त को दुख पहुँचा हो तो क्षमा करना।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने कार का द्वार बन्द कर लिया।

ललित सिर झुकाये, भारी पैरो घर की ओर चल दिया। उसे लग रहा था कि उसके शरीर मे जीवन-शक्ति नही रह गयी है। अपनी बेबसी, अपनी सीमाओ पर उसे क्रोध आ रहा था और उस व्यवस्था के प्रति उसके हृदय मे विद्रोह की चिनगारी सुलग रही थी जो एक को बड़ा तथा दूसरे को छोटा बनाती है, जो मनुष्य-मनुष्य के बीच मे गहरी खाई और ऊँची दीवार का निर्माण करती है।

चौदह

सरला थी तो कमरे मे परन्तु उसके कान द्वार की ओर ही लगे थे। जैसे ही बाबू श्यामसुन्दर ने द्वार खटखटाया उसका हृदय जोर से धडकने लगा। उसके मन ने कहा कि हो न हो ये जरूर वही है जिन्होने शादी का विज्ञापन किया था। जब ललित उनके साथ बाहर चला गया तब तो उसकी धारणा और भी पक्की हो गयी थी। वह बेचैनी से कमरे मे टहलने लगी। उसके मानस मे भयकर प्रभजन था।

अत्यन्त व्याकुलता और व्यग्रता से वह ललित के लौटने की प्रतीक्षा करने लगी। दया ने उसकी आकुलता को देखा पर वह उसका कारण न समझ सकी। सरला कमरे से निकल आयी। उसका दम घुटने सा लगा था। आँगन मे आकर वह कुछ स्वस्थ हुई। दया के हाथ चौके के काम मे व्यस्त रहे पर उसकी आँखे सरला की ओर ही लगी रही।

जब ललित ने धीरे से द्वार खटखटाया तब सरला को लगा कि जैसे उसकी छाती पर किसी ने घूँसा मारा हो। वह शिथिल होकर चारपाई पर बैठ गयी।

"खोलो!" बाहर से ललित का थका सा स्वर आया।

दया ने सरला की ओर देखा।

सरला उठकर द्वार की ओर गयी और कम्पित हाथ से उसने द्वार खोल दिया।

ललित अन्दर आया। सरला को देखकर उसे रुलाई आ गयी। किसी प्रकार अपने को सयत करके वह चारपाई पर बैठ गया।

सरला जब कमरे की ओर चली तब उसे लगा जैसे उसके पैर जवाब दे रहे है।

"यहाँ आओ, सरला।" तभी ललित ने टूटेस्वर से पुकारा।

सरला मन्द गति से जाकर फर्श पर बैठ गयी।

"सरला, यह. यह तुमने क्या किया ?" और ललित अपनी बाहों मे मुह छिपा कर बच्चो की तरह फूट-फूट कर रोने लगा।

दया घबरा कर ललित के पास पहुँची। उसने समझा कि सरला कोई ऊँच-नीच काम कर बैठी है। फर्श पर बैठकर वह सरला की पीठ पर हाथ फेरने लगी।

सरला सिर झुकाये बैठी थी मानो उसे काठ मार गया हो।

ललित की आन्तरिक पीडा सिसकियो के रूप मे बाहर निकलती रही।

"अगर सरला कुछ ऐसा-वैसा काम कर बैठी है तो उसमे दोष उसका नही, तुम्हारा है। सालो से समझा रही हूँ कि उसके हाथ पीले करने की फिकर करो।" दया के धीमे स्वर मे क्षोभ की झलक थी। "अब रोते हो। जवान बहन.. ...।"

"क्या बक रही हो ?" ललित बीच में ही कडे स्वर मे बोला। "तुम लोगो का ध्यान हमेशा बुराई की ओर ही जाता है।"

ललित की डाँट से दया सहम गयी। उसने समझ लिया कि उसका विचार सही नही है। सरला ने कोई ऐसा-वैसा काम नही किया है!

"सरला, तुमने भैया की बेबसी को चुनौती देकर अच्छा नही किया।" ललित फिर रुद्ध कंठ से बोला।

सरला मौन रही।

दया मौन न रह सकी। पूछा—"आखिर क्या किया है सरला ने? कुछ मुझे भी तो बताओ।"

और ललित ने थके, टूटे और दुखी स्वर में दया को सब कुछ बता दिया।

"सरला, यह क्या सूझा है तुम्हे? क्यों अपनी जान देने पर उतारू हो?" दया ने दुखी स्वर मे पूछा।

"ऐसा न कहो, भाभी!" सरला ने अवरुद्ध कठ से कहा।

"एक बूढ़े के साथ ब्याह करके तुम्हे सुख मिल सकेगा? क्या जान-बूझकर कुँये मे कूद रही हो?" दया ने फिर समझाया।

"मैंने जो कुछ किया है सोच समझ कर किया है, भाभी! जिसे तुम कुँये मे कूदना कहती हो वही मेरे लिए जीवन है।" सरला ने धीमे किन्तु दृढ़ स्वर में कहा।

"मै जानता हूँ कि तुम जो कुछ कर रही हो, हम लोगों के लिए कर रही हो। मगर ..मगर मै तुम्हे ऐसा नही करने दूँगा।" ललित बोला।

'मेरा निश्चय अटल है, भैया! जो रास्ता मैंने चुना है उसके अतिरिक्त मेरे लिए और कोई मार्ग है ही नही।" कहकर सरला धीमी गति से कमरे मे चली गयी।

"वह हमे चिन्ता से मुक्त करने के लिए अपनी बलि दे रही है, दया। और ..और... मुन्नी के भविष्य के लिए भी....!" बोलते-बोलते ललित की आँखों मे आँसू आ गये। "यह.. यह सब मेरी बेबसी, मेरी गरीबी का ही फल है। अगर मै दहेज देकर उसका ब्याह करने लायक होता तो उसे ऐसा क्यों करना पडता।" और ललित सिसकने लगा।

"मै तो पहले ही कहती थी कि न हो तो शकुन से ही रुपये ले लो मगर तुम मेरी बात सुनो तब न! अब रोने-धोने से क्या होगा!" दया बोली।

शकुन का नाम सुनकर ललित मे नयी चेतना आ गयी। विद्युत-वेग से उठकर वह द्वार की ओर बढ़ा।

"अब कहाँ जा रहे हो?" दया ने पूछा।

"शकुन को बुलाने। शायद उसके समझाने से सरला मान जाये।" धीमे स्वर मे कहकर ललित बाहर चला गया।

गली मे प्रकाश कम था, फिर भी वह तीव्र गति से आगे बढ रहा था। कई बार वह सडक पर बैठी हुई गायो से टकराते-टकराते बचा।

"गाय बाँधने की जगह तो है नही मगर पालने का शौक है। सड़क पर छोड़ देते है मानो सड़क इनके बाप की हो!" वह क्रुद्ध स्वर मे बुद-बुदाया।

मुख्य सडक पर पहुँचते ही एक रिक्शा मिल गया। वह रिक्शे पर बैठ गया। रास्ते भर वह अपने विचारो मे खोया रहा। जैसे ही रिक्शा शकुन के बँगले के फाटक पर पहुँचा वैसे ही अन्दर से एक बड़ी कार निकली। ललित ने देखा, उसमे कामेश्वर के साथ शैलजा बैठी है।

रिक्शे वाले को पैसे देकर वह अन्दर गया। बरामदे में पहुँच कर वह ठिठक गया। शकुन के कमरे की ओर जाने का उसमे साहस न था।

सकेत से चौकीदार को बुलाकर ललित बोला—"शकुन बीबी है?"

चौकीदार ने सिर हिलाया, जिसका अर्थ था—हाँ!

"जाकर कह दो कि मैं मिलना चाहता हूँ।"

चौकीदार चला गया।

ललित बरामदे में टहलता रहा।

दो मिनट बाद ही शकुन तीव्र गति से बरामदे में आयी। ललित की बेचैनी उससे छिपी न रह सकी। उसका हृदय धडकने लगा।

"कुशल तो है?" उसने धीमे स्वर मे पूछा।

"सरला.....।" ललित आगे न बोल सका।

"क्या हुआ सरला को?" शकुन ने घबरा कर पूछा।

"उसने अपनी बलि देने का निश्चय किया है। अब तुम्ही उसे समझा सकती हो।"

"बलि देने का निश्चय?" न समझने के ढंग से शकुन बोली।

"अगर तुम्हें कष्ट न हो तो मेरे साथ चली चलो। रास्ते में सब कुछ बता दूँगा।"

"शोफर, गाडी लाओ!" शकुन ने ऊँचे स्वर मे कहा और फिर वह ललित की ओर देखने लगी।

शोफर ने गाडी पोर्टिको मे लगा दी।

"तुम यही रहो। मै खुद ले जाऊँगी।" शकुन ने शोफर से कहा।

शोफर उतर कर एक ओर खडा हो गया।

शकुन और ललित गाडी मे बैठ गये। गाड़ी तीव्र गति से ललित के घर की ओर उड चली।

मार्ग मे ललित ने शकुन को वस्तु स्थिति से अवगत करा दिया।

"यह सब तुम्हारे झूठे अभिमान का फल है।" सुनकर शकुन बोली। "अगर तुम मुझे पहले ही सच्ची बात बता देते तो ऐसी स्थिति न आती।"

"जो हो गया सो हो गया। अब तुम उसे समझा-बुझाकर मना लो। फिर... फिर मै कर्ज लेकर, भीख माँगकर, जैसे भी होगा वैसे उसका ब्याह किसी अच्छी जगह कर दूँगा।" कहकर ललित अपनी आँखों के आँसू पोंछने लगा।

गाड़ी सडक पर छोड कर दोनों तेजी से गली मे घुसे।

"जरा सँभल कर आना! रास्ते में गाये बैठी है।" ललित ने कहा।

"मै तो ऊँची-नीची गली मे गिर जाऊँगी।" शकुन के स्वर में शरारत थी।

बिना कुछ कहे ललित ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"अब ठीक है। कोई सहारा हो तो गिरने का भय नहीं रहता।" कहकर शकुन हँस पड़ी।

ललित ने अपनी हँसी रोकने की लाख चेष्टा की पर रोक न सका। वह भी हँस पड़ा।

शकुन के साथ जब ललित घर पहुँचा तब दया ने आकर द्वार खोला। सरला कमरे मे ही थी। मुन्ना-मुन्नी सो गये थे। कमरे मे लालटेन जल रही थी और बरामदे मे दीया। आँगन मे चाँदनी छिटकी हुई थी। शकुन आँगन मे ही चारपाई पर बैठ गयी।

"सरला, देखो कौन आया है!" दया ने ऊँचे स्वर मे कहा।

सरला बाहर आ गयी। दीपक के प्रकाश मे शकुन को उसका चेहरा पाण्डु रोग के रोगी सा पीला लगा। वह आँगन मे आयी और शकुन को देखकर मुस्करा पड़ी।

"आओ, बैठो।" शकुन ने उसका हाथ पकडकर अपने पास बिठा लिया।

शकुन ने ललित को बाहर जाने का सकेत किया क्योकि वह जानती थी कि उसके सामने खुलकर बाते नही हो सकेगी।. ललित बाहर चला गया।

इसके पूर्व शकुन कुछ बोल सके, सरला ने कहा—"भैया ने आपको बेकार ही कष्ट दिया।"

"सरला, तुम क्षणिक भावुकता मे पडकर पागलपन कर रही हो। आवेश मे आकर जीवन भर के सुख से खिलवाड करना ठीक नहीं।" शकुन ने समझाते हुये कहा।

"मैने भावुकता और आवेश मे आकर ऐसा नही किया है।" सरला ने कहा। "मै विश्वास दिलाती हूँ कि मैने सोच-समझकर कदम उठाया है, और अब जो कदम उठ चुका है वह पीछे लौट नही सकता।"

"जान-बूझकर गले में फासी का फन्दा लगा रही हैं यह।" तभी बीच मे दया बोल पड़ी।

दया की बात से सरला चिढ़ गयी। उसका चेहरा तमतमा गया। वह आवेश मे आकर बोली—"मैने फासी लगाकर या जहर खाकर मरने

का रास्ता नही चुना है इसीलिए तुम ऐसा कहती हो!"

सरला की बात सुनकर दया सुन्न रह गयी। चुपचाप उठकर वह चौके मे चली गयी। उसे याद आ गयी अपने मैके की बात। उसकी एक सहेली ने अपने निर्धन बाप को चिन्ता से मुक्त करने के लिए कुँये मे कूदकर जान दे दी थी। उसकी याद से वह काँप गयी। उसने सोचा—सरला ठीक ही तो कहती है! वह भी फासी लगाकर जहर खाकर, कुँये मे कूदकर जान दे सकती थी। मगर नहीं, उसने कायरता का रास्ता नही चुना! और दया ने अनुभव किया कि सरला ने जो मार्ग चुना है वह ठीक ही है।

"तो... तो क्या तुम्हारा निश्चय पक्का है?" शकुन ने धीमे और उदास स्वर मे पूछा।

"हाँ! और यही वह मार्ग है जिससे सबको सुख मिलेगा। भैया-भाभी की चिन्ता और उदासी दूर होगी, छोटी मुन्नी का भविष्य बनेगा और...और मै भी सुखी बनूँगी।" सरला ने कहा।

"लेकिन तुम दोनो की अवस्था.....।"

"अवस्था की खाई मुझमे कोई अन्तर उत्पन्न नही करेगी, ऐसा मै विश्वास दिलाती हूँ। मै सच्चे मन से उनकी सेवा करूँगी।"

"सेवा और त्याग मे अन्तर होता है, सरला।" शकुन के मुँह से निकल गया।

'क्या यह भी बताने की आवश्यकता है कि मै जिन संस्कारों मे पली हूँ उनमे पत्नी का परमेश्वर पति ही है! मैं उन्हे प्यार नही कर सकूँगी ऐसा सोचकर आप मेरे ही साथ नही, भैया के साथ भी अन्याय कर रही है।" सरला का स्वर सहसा अवरुद्ध हो गया।

"मुझे क्षमा करो, बहन।" कहकर शकुन ने सरला को हृदय से लगा लिया और फिर वह सिसक-सिसक कर रोने लगी।

दया ने भी अपनी धोती के मैले अंचल से अपने आँसू पोंछ लिए।

उसी समय ललित अन्दर आया।

शकुन सरला को छोड़कर अपने आँसू पोछने लगी।

ललित ने प्रश्न भरी दृष्टि से शकुन की ओर देखा।

"सरला का निश्चय अटल है।" निःश्वास छोड़कर शकुन ने धीमे स्वर मे कहा। "भगवान की यही इच्छा है।"

शकुन उठकर द्वार की ओर चल दी। ललित भी साथ-साथ चल दिया।

"तुम रहने दो। मै चली जाऊँगी।" शकुन बोली।

"चलो, कार तक तो पहुँचा ही दूँ।" ललित ने कहा।

वे लोग थोड़ी दूर चले होगे कि उधर से आता हुआ कमल मिल गया। ललित को देखकर बोला—"मै तो तुम्हारे यहाँ ही जा रहा था।"

"अभी चलता हूँ। जरा शकुन जी को कार तक छोड दूँ।"

"ओह, शकुन जो हैं। नमस्कार! क्षमा कीजियेगा मै आपको पहचान न पाया था।"

कमल भी मुडकर उनके साथ चल दिया।

"हाँ भाई, हमे क्यो पहचानोगे!" शकुन ने हँसकर कहा!

"भूल के लिए क्षमा माँग चुका हूँ।" कमल ने सहज स्वर मे कहा फिर एक क्षण रुककर बोला—"आज शैलजा जी मेरे यहाँ आयी थी।"

शकुन और ललित उसकी बात सुनकर चौक पड़े।

"कब?" शकुन ने पूछा।

"सबेरे। कह रही थी कि मै अपना सग्रह बाबू श्यामसुन्दर को प्रकाशित करने के लिए दे दूँ।"

"ठीक तो कह रही थी। तुम्हारा नया सग्रह बाजार मे बहुत जल्द आना चाहिए।" ललित ने कहा।

"आपने क्या उत्तर दिया शैल को?" शकुन ने पूछा।

"मैने मना कर दिया है।"

"क्यो?" ललित ने पूछा।

"वैसे ही। मै नहीं चाहता कि मेरा संग्रह किसी के कहने से कोई

प्रकाशक ले।" कमल ने विचित्र स्वर मे कहा।

"तुम समझ रहे हो बाबू श्यामसुन्दर शैलजा की शिफारिश से तुम्हारा सग्रह ले रहे है?" ललित ने हसकर पूछा।

"हाँ!" कमल का सक्षिप्त उत्तर था।

बात करते-करते वे लोग सड़क पर पहुँच गये थे।

"अगर आपको यहाँ और काम न हो तो चलिए मै आपको घर तक छोड़ दूँ?" शकुन ने कमल से कहा। "और किराये के रूप मे आप मुझे अपना सग्रह दे दे। मै बाबू श्यामसुन्दर तक पहुँचा दूँगी।"

"सग्रह तो तुम्हे देना ही चाहिए। कहो तो मै ही आकर ले जाऊँ।" ललित ने भी जोर दिया।

"तो आप लोगो की भी राय है कि सग्रह दे दूँ?" कमल बेबसी के स्वर मे बोला।

"अवश्य!" दोनो ने एक साथ ही उत्तर दिया।

'ठीक है।" कहकर कमल हँस पडा।

"अभी रुकेगे क्या?" कहकर शकुन कार पर बैठ गयी।

"लगता है मेरा भाग्य खुल रहा है। सुबह-शाम मोटर पर बैठने को मिलता है।" कहकर कमल हँस पडा। फिर ललित की ओर मुड़ कर बोला— मै इसी विषय में राय लेने आया था तुम्हारे पास! अब चलता हूँ।"

कमल कार का पिछला द्वार खोलकर बैठने लगा।

"वहाँ नही, आगे आइये कविराज जी!" हँसकर शकुन बोली।

कमल शकुन के पास जाकर बैठ गया।

"संग्रह की पॉडुलिपि .।"

"कल सुबह तुम्हे दे जाऊँगा।" ललित की बात बीच मे ही काटकर कमल बोला। "फिर तुम चाहे शकुन जी को देना, चाहे शैलजा जी को और चाहे बाबू श्यामसुन्दर को।"

शकुन ने कार स्टार्ट की। ललित साश्रुनयनो से शकुन की ओर

देखने लगा।

"भगवान जो करता है, अच्छा करता है।" शकुन ने धीमे स्वर में कहा और कार आगे बढ़ा दी।

ललित वही खडा रहा। वह आँसू भरी दृष्टि से कार के पीछे की लाल बत्ती तब तक देखता रहा जब तक वह दिखाई देती रही। जब कार दूसरी ओर मुड गयी और उसकी बत्ती अदृश्य हो गयी तब ललित घर की ओर चला।

गली मे वह कितनी बार गायो से टकराकर गिरा उसे ज्ञात नही।

पन्द्रह

प्रतीक्षा की एक घडी भी युग सी बड़ी हो जाती है। सन्ध्या की प्रतीक्षा में कामेश्वर दिन भर बेचैन रहा। एक-एक मिनट कठिनाई से कट रहा था। बार-बार वह घडी की ओर देखता। उसे लग रहा था कि उसकी घडी ही मन्द नही है वरन सूर्य की गति भी नित्य की अपेक्षा बहुत धीमी है। वह चहाता था कि जल्द ही सूरज पश्चिम की गोद मे छिप जाये और धरती पर प्यारा अँधेरा उतरे और उस अँधेरे को चीरकर पूनम का रुपहला चाँद निकले। उसकी आत्मा दिन के प्रकाश से ऊब कर रात के अँधेरे के लिए छटपटा रही थी—वह उस अँधेरे के लिए व्याकुल था जो चाँदनी का उजला परिधान पहन कर उसको इच्छाओ की पूर्ति करने के लिए उतरने वाला था।

जैसे ही घडी की छोटी सुई छः और बडी सुई बारह पर पहुँची वह बडी कार लेकर माल रोड की ओर चल दिया। वस्त्र वह चार बजे ही बदल चुका था। 'क्वालिटी' के सामने उसने कार रोक दी और फिर वह अधरों के बीच मे बिना जली सिगरेट दबा कर अन्दर घुसा। वह सीधा मैनेजर के पास पहुँचा।

"हलो, मिस्टर कामेश्वर! ह्वाट कैन आई डू फार यू?" मैनेजर

ने व्यवहार कुशलता से पूछा।

"कुछ खाने-पीने का सामान गाडी पर पहुँचवा दीजिये।" कामेश्वर ने सिगरेट जलाकर कहा। "आज पिकनिक पर जा रहा हूँ।"

मैनेजर ने बैरा को आवश्यक आदेश दे दिया।

बैरा चला गया।

मैनेजर ने बिल बनाकर कामेश्वर के सामने रख दिया।

उसने बिल पर हस्ताक्षर कर दिये।

मैनेजर ने बिल मेज की दराज में डाल दिया।

"मिस शैलजा तो आज सबेरे ही आ गयी थी।" मैनेजर ने सहज स्वर में कहा।

"अच्छा!"

"हाँ! और साथ मे न जाने कहाँ से एक बन्दर पकड लायी थी। मै तो बडी मुश्किल से अपनी हँसी रोक सका।"

"बन्दर?" कामेश्वर ने उत्सुकता से प्रश्न किया।

"बन्दर ही समझिये।" मैनेजर ने हँसकर कहा। "अजीब हुलिया थी। बड़े-बडे बाल, गन्दे कपडे!"

कामेश्वर समझ गया कि शैलजा के साथ कमल ही था। वह बहुत कठिनाई से अपने क्रोध को दबा सका।

'बडे आदमियो की हाबीज भी अजीब होती है।" मैनेजर ने कहना जारी रक्खा। "मै तो समझता हूँ कि मिस शैलजा किसी राह चलते भिखारी को पकड़ लायी थी।" और अपनी बात पूरी करके वह हँस पडा।

कामेश्वर ने उसका साथ देने की चेष्टा की पर वह हँस न सका।

तभी बैरा ने कामेश्वर को सूचना दी कि सामान कार पर रख दिया गया है।

कामेश्वर कार पर आकर बैठ गया। उसका दबा हुआ क्रोध उबल पड़ा।

"आज भर की और बात है।" वह बुदबुदाया। "कल दूध की मक्खी

की तरह अपने जीवन से निकाल कर फेंक दूँगा।"

कार स्टार्ट करके वह "कपूर एन्ड सन्स" के यहाँ पहुँचा। वहाँ से उसने ड्राईजिन का एक अद्धा लिया।

"पैराडाइज होटल" के एक एकान्त केबिन मे बैठकर जब उसने आधी मदिरा पी ली तब कही जाकर उसका क्रोध शान्त हुआ।

बची हुई मदिरा को प्यार भरी दृष्टि से देखकर उसने बोतल को चूमा। उसकी कुटिल योजना को सफल बनाने मे वह बोतल बहुत ही महत्त्वपूर्ण भाग लेने वाली थी।

बोतल कार मे छिपा कर वह शैलजा के बँगले पहुँचा। वह तैयार बैठी थी। सफेद रेशमी गरारा और कुर्त्ते पर सफेद ही ओढनी; आँखो मे काजल की पतली रेखा; चेहरे पर हल्का पाउडर; गालो और अधरो पर हल्की लाली! कामेश्वर ने देखा तो देखता ही रहा।

"तुम तो ऐसे देख रहे हो जैसे कभी देखा ही न हो।" वह खिलखिलाकर हँसती हुई बोली।

"रोज शैलजा को देखता था; आज इन्द्रलोक की अप्सरा को देख रहा हूँ।" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

"बहुत देर कर दी तुमने! मैं तो समझ रही थी, नही आओगे।" कार पर बैठती हुई शैलजा बोली।

"अगर मालूम होता कि कोई मेनका प्रतीक्षा कर रही है तो चार बजे ही आ जाता।" कहकर कामेश्वर ने कार स्टार्ट कर दी।

फाटक के बाहर उन्हे रिक्शे से उतरता हुआ ललित दिखाई दिया। शैलजा कामेश्वर के और निकट आ गयी।

कार तेजी से गगा घाट की ओर बढने लगी।

मार्ग मे दोनों अधिकतर मौन रहे। शैलजा अपने विचारो मे खोई रही और कामेश्वर अपने विचारो मे।

गाड़ी घाट के किनारे छोडकर वे लोग सीढ़ियाँ उतर कर नीचे पहुँचे उन्हे देखकर कई नाविक एक साथ आगे बढ़कर चिल्लाये—"बाबू जी,

इधर आइये !"

नाविको के उस झुड मे कामेश्वर की आँखे किसी को खोज रही थी। तब तक दूर पर उसे अपना खास नाविक दिखाई दिया। कामेश्वर को देखकर वह दौडता हुआ आया। पास आकर वह अन्य नाविको से बोला—"अलग हटो! जानते नही, बाबू जी हमारी सवारी है।"

"नाव किधर है ?" कामेश्वर ने उससे पूछा ।

"पास ही है, बाबू जी ! इधर आइये ।" कहकर वह चल दिया।

कामेश्वर शैलजा का हाथ पकडकर उसके पीछे चल दिया।

जिस नाव पर नाविक ने बैठाया वह काफी अच्छी थी। नाव पर मोटा गद्दा बिछा था। चादर भी साफ थी। मोटे-मोटे कई तकिये भी रक्खे थे।

कामेश्वर उस नाविक का पुराना ग्राहक था और वह यह भी भली प्रकार जानता था कि बाबू जी जब कभी किसी लडकी को लेकर घूमने आते है तो उस घूमने का वास्तविक अर्थ क्या होता है।

"अबकी बहुत दिनो मे आये बाबू जी !" नाविक ने हाथ जोडकर कहा ।

"हाँ भाई ! काम के मारे फुर्सत ही नही मिल पाती। " कामेश्वर ने कहा और फिर एक क्षण बाद बोला। "ऊपर कार खडी है। उसमें खाने-पीने का सामान रक्खा है। जाकर ले आओ ।"

'अभी आया, सरकार।" कहकर नाविक चल पडा ।

जब वह कुछ दूर चला गया तब कामेश्वर नाव से उतर कर ऊँचे स्वर मे बोला—"अरे, सुनना जरा! एक बात तो भूल ही गया।"

नाविक रुक गया ।

"अभी आया।" कह कर नाविक कामेश्वर की ओर तीव्र गति से बढा।

शैलजा पैर फैला कर नाव मे लेट गयी। चाँदनी रात में, गगा की गोद मे शान्त होकर लेटना उसे बहुत अच्छा लगा। वह निर्निमेष दृष्टि से आकाश मे हँसते हुये चाँद को देखने लगी।

नाविक के पास पहुँचकर कामेश्वर धीमे स्वर मे बोला—"पिछली सीट के नीचे जिनकी बोतल रक्खा है। पान वाले से लैमन की बोतल लेकर खोल लेना और थोडी-थोडी जिन मिला देना। समझे?"

"सब समझ गया, सरकार।" खीसे निपोर कर नाविक बोला।

कामेश्वर लौटकर नाव की ओर बढा। आधी दूर पहुँचकर उसने ऊँचे स्वर मे नाविक से फिर कहा—"लैमन वही से खोल लाना। नही तो यहा झझट होगी।"

"बहुत अच्छा, सरकार।" नाविक का उत्तर आया।

जब वह नाव पर पहुँचा तब भी शैलजा लेटी हुई चॉद को देख रही थी। कामेश्वर को देखकर वह उठी नही; हॉ, पैर कुछ समेट लिये। कामेश्वर उसी के पास बैठ गया।

"कही चॉद को सजर न लग जाये!" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

"चाँद को नजर न लगे इसीलिए तो भगवान ने उसमे काला दाग लगा दिया है।" चॉद की ओर से दृष्टि हटाकर शैलजा ने कहा।

"और इसीलिए शायद तुमने भी अपने बाये गाल के नीचे काला तिल बनाया है।" शैलजा के पास खिसक कर कामेश्वर बोला।

"चॉद इतना सुन्दर है यह मुझे आज ही मालूम हुआ।" उठकर तकिये के सहारे बैठती हुई शैलजा बोली।

"आकाश के चॉद से सुन्दर धरती का चाँद है।"

गंगा के निर्मल-शान्त जल मे पडनेवाले चाँद के प्रतिबिम्ब की ओर देखती हुई शैलजा ने कामेश्वर की बात का कोई उत्तर नही दिया। झुककर अपना हाथ जल मे डालकर उसने शान्त जल को आन्दोलित कर दिया। शशि का प्रतिबिम्ब भी डोलने लगा।

"आकाश का चाँद स्थिर है और धरती का चाँद चंचल।" शैलजा ने कामेश्वर की ओर शरारत भरी दृष्टि से देखकर कहा।

"जिसे तुम चंचल कह रही हो वह चॉद नही, उसकी परछाईं है। धरती का चॉद तो तुम हो।" कामेश्वर ने साहस करके शैलजा का हाथ

अपने हाथ मे लेकर कहा।

"तुम भी कवि बन रहे हो।" शैलजा केवल इतना कह सकी।

तभी नाव की ओर नाविक आता दिखाई दिया। उसके साथ एक व्यक्ति और था। कामेश्वर ने शैलजा का हाथ छोड दिया।

नाविक के हाथो मे लैमन की खुली हुई दो बोतले थी और उसके साथ वाले व्यक्ति के हाथ मे खाने का सामान। खाने का सामान नाव पर रखवाकर कामेश्वर ने बोतले अपने हाथो मे ले ली। नाविक पतवार सँभाल कर नाव मे बैठ गया। उसका साथी चला गया।

"उस पार चलूँ, सरकार?" नाविक ने पूछा।

"हाँ!" कहकर कामेश्वर भी एक तकिये के सहारे टिक गया।

नाव जल को चीरती हुई आगे बढी। जब नाव बीच धार मे पहुँची तब कामेश्वर ने नाविक को नाव रोकने का सकेत किया। नाविक ने पतवार रख दिये। नाव धारा के साथ मन्दगति से रेलवे पुल की ओर बह चली।

"कोई गीत सुआओ।" कामेश्वर ने शैलजा से अनुरोध किया।

"गाने का मूड नहीं है। इच्छा होती है, नाव मे चुपचाप लेटी रहूँ और हवा का मादक सगीत सुनती रहूँ।" शैलजा ने तकिये के सहारे अधलेटी मुद्रा मे होकर कहा। वातावरण की मादकता ने उसकी भावुकता को उभार दिया था।

"और मेरी इच्छा होती है कि नाव इसी तरह जिन्दगी भर धीरे-धीरे बीच धार में बहती रहे और हम दोनों एक दूसरे का हाथ पकडे, एक दूसरे की आँखों मे आँखें डाले बैठे रहे।" कामेश्वर ने भावुक होकर कहा।

शैलजा कुछ बोली नही।

"लो, लैमन पी लो।" कहकर कामेश्वर ने एक बोतल शैलजा की ओर बढादी और दूसरी अपने मुह से लगाली।

शैलजा लैमन पीने लगी।

"न जाने कैसा टेस्ट है !" बोतल खाली करके शैलजा बोली।

"मुझे भी पसन्द नही आया !" अपनी खाली बोतल गद्दे पर रखकर कामेश्वर बोला और फिर नाविक की ओर मुडकर कहा—"किसी नयी दूकान से ले आये हो क्या ?"

"पुरानी दूकान बन्द थी, सरकार !" नाविक ने विनम्रता से कहा।

"न जाने कब का बासी था।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी।

इसी बीच मे नाव काफी निकल आयी थी। चाँदनी मे घाट अजीब से लग रहे थे। रेलवे पुल की बत्तियाँ नाव वालों को आमन्त्रत कर रही थीं।

"अरे, हम लोग काफी दूर आ गये।" सहसा चौककर कामेश्वर बोला। "नाव उस पार ले चलो। रेती पर बैठकर खा-पी ले।"

नाविक ने फिर पतवार सँभाले। नाव किनारे की ओर बढ चली।

जैसे ही नाव उस पार पहुँची, कामेश्वर उछलकर रेती मे उतर पडा। शैलजा का हाथ पकडकर उसने उसे भी उतार लिया। दूर-दूर तक फैली हुई उजली रेत चाँदनी मे बहुत मनोहर लग रही थी। शैलजा का मन हुआ कि वह बच्चों की तरह किलकारी भरकर रेत मे दौडे, खेले, गिरे और फिर दौडे। अपने अन्दर वह नयी स्फूर्ति का अनुभव कर रही थी। जिन अपना मादक प्रभाव दिखा रही थी।

नाविक ने नाव का गद्दा रेत पर बिछा दिया और उसी पर खाने का सामान रख दिया। कामेश्वर गद्दे पर बैठ गया। शैलजा रेत के घरौंदे बनाने लगी।

"सरकार, अगर हुक्म हो तो कुछ हम भी खा-पी आये। आज सबेरे से अन्न का दाना नही गया है पेट मे।" नाविक ने गिडगिडा कर कहा।

"जाओ। मगर जल्दी आना ! हमे ज्यादा देर नहीं रुकना है।" कामेश्वर ने नाविक की ओर गूढ दृष्टि से देखकर कहा।

"अभी आता हूँ, सरकार, पाँच मिनट में।" सधे हुये नाविक ने अपने अभ्यस्त स्वर में कहा और फिर वह नाव पर बैठकर पतवार चलाने लगा।

धीरे-धीरे नाव दृष्टि से ओझल हो गयी।

चाँद आकाश मे उसी तरह हँस रहा था मगर बादल का वह सफेद टुकडा जो कुछ देर पहले उससे काफी दूर था, अब उसके पास आ गया था।

"आओ, कुछ खा लो।" कामेश्वर ने केक खाते हुये कहा।

शैलजा उसके पास बैठ गयी।

"खाओ।" कामेश्वर ने एक केक उसके हाथ मे दे दिया।

"तुम खाओ। मेरा मन नही है।" कहकर शैलजा लेट गयी। "मुझे तो न जाने कैसा लग रहा है।"

"कैसा लग रहा है?" कामेश्वर ने खाने का सामान एक ओर खिसकाकर पूछा।

"तुम हँसोगे।" अँगडाई लेकर शैलजा बोली।

"नही हँसूँगा। बताओ।" कहकर वह उसके बालो से खेलने लगा।

"लगता है, मेरे पख लग गये है और मै इस चाँदनी मे उड रही हूँ।" कहकर शैलजा ने आँखे बन्द कर ली।

कामेश्वर उसके और पास आ गया।

"मन करता है, इस ठढी रेत मे जी भर कर नाचूँ।"

"अरे, कही ऐसा न कर बैठना! इन्द्रलोक मे खलबली मच जायेगी।" कहकर कामेश्वर ने उसका हाथ अपने हाथ मे ले लिया।

"न जाने किस जादू मे बँध गयी हूँ मै। मेरा मन मेरे बस मे नहीं है।" कहकर शैलजा ने अधखुले आँखों से कामेश्वर की ओर देखा।

कामेश्वर का हृदय तीव्रगति से धडक रहा था। वह समझ गया था कि मदिरा अपना रग ला रही है। उसकी इच्छा हुई कि शैलजा को अपने बाहुपाश में कस ले परन्तु उसने अपने को सयत कर लिया। शीघ्रता करने मे बना-बनाया खेल बिगड जाने का भय था।

शैलजा आकाश की ओर मुंह किये लेटी थी। उसकी चुन्नी एक ओर को सरक गयी थी। वह कभी आँखे बन्द कर लेती थी और कभी खोलकर आकाश की ओर देखने लगती थी। उसे अपनी पलके भारी

लग रही थी और उसकी इच्छा हो रही थी कि वह सो जाये।

बालों से खेलते-खेलते कामेश्वर ने साहस एकत्र कर लिया। वह शैलजा के ऊपर झुका और उसने उसके अधरो पर अपने अधर रख दिये।

· उस बेसुधी की अवस्था मे भी शैलजा ने अनुभव किया कि उसके अधरों पर किसी ने दहकता हुआ अगार रख दिया है। वह शीघ्रता से उठकर बैठ गयी।

"बहुत बुरे हो तुम .....।" कामेश्वर की धृष्टता का विरोध वह इतना कह कर ही कर सकी।

कामेश्वर ने झपट कर उसे बाहुपाश मे कस लिया।

शैलजा जाल मे फॅसी मछली की तरह छटपटाने लगी।

"यह क्या करते हो? छोड़ो मुझे!" अपने को मुक्त करने का निष्फल प्रयत्न करती हुई तेज स्वर मे शैलजा बोली।

कामेश्वर का बन्धन कसता ही गया।

"छोड दो मुझे! छोडो, जानवर कही के!" अपनी पूरी शक्ति लगाकर मुक्त होने की चेष्टा करती हुई शैलजा चीख कर बोली।

"इस चॉदनी रात के एकान्त मे तुम जैसी सुन्दरी को पाकर कौन जानवर नहीं हो जायेगा?" कामेश्वर ने भर्राये गले से कहा और फिर वह भयकर अट्टहास कर उठा।

शैलजा ने छूटने को बहुत कोशिश की पर हैवान के फौलादी चगुल से वह छूट न सकी।

चॉद ने लजा से बादल के टुकडे मे अपना मुह छिपा लिया।

उस किनारे पर लगी नाव मे बैठे नाविक ने एक पीड़ा भरी चीख सुनी पर वह चुपचाप बैठा बीडी पीता रहा मानो वह सवेदनशील मनुष्य नही, जड मशीन है। चीख को सुनकर वह सहायता के लिए नही दौड़ा। वह तो प्रसन्न था; बहुत देर से वह उसी चीख को सुनने की आतुर प्रतीक्षा कर रहा था क्योंकि चीख का अर्थ था उसके लिए दस रुपए का करारा नोट!

बहुत इत्मीनान से बीड़ी का आखिरी कश लेकर नाविक ने पतवार उठाये। वह नाव को धीरे-धीरे खे रहा था। फलस्वरूप नाव को उस पार पहुँचने मे काफी समय लग गया। उस पार पहुँच कर नाविक ने देखा कि खाने का सामान रेत मे इधर-उधर बिखरा पड़ा है, शैलजा बाहो मे मुह छिपाये गद्दे पर पड़ी है और कामेश्वर बेचैनी से नाव की प्रतीक्षा मे टहल रहा है।

"देर तो नही हो गयी, सरकार?" कह कर नाविक रेत में उतर कर गद्दे की ओर बढा।

कामेश्वर ने शैलजा का हाथ पकड़ कर उठाना चाहा मगर वह स्वयं उठ गयी। नाविक ने गद्दा नाव मे बिछा दिया। दोनों नाव पर बैठ गये। दोनो ही मौन थे।

नाव से उतर कर कामेश्वर ने दस रुपये का नोट नाविक के हाथ में थमा दिया।

"दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की हो, सरकार! अब फिर कब आना होगा?" प्रसन्न होकर नाविक ने पूछा।

"कह नही सकता।" कह कर कामेश्वर आगे बढ़ गया।

कार के पास पहुँच कर कामेश्वर द्वार खोलकर बैठ गया। द्वार उसने शैलजा के लिए खुला रहने दिया, मगर वह उसके पास न बैठकर पीछे बैठ गयी।

द्वार बन्द करके कामेश्वर ने कार स्टार्ट की।

"क्या नाराज हो?" कामेश्वर ने कहा और फिर एक क्षण रुककर बोला—"मैने मामा जी को कमल का सग्रह प्रकाशित करने के लिए राजी कर लिया है। अब तो खुश हो न?"

शैलजा मौन रही।

"तुम नाराज हो जाओगी तो मै जिन्दा कैसे रहूँगा?" कामेश्वर उसे प्रसन्न करने के आशय से बोला।

"चुप रहो!" शैलजा क्रुद्ध स्वर मे चोट खायी नागिन की तरह

फूत्कार कर बोली। "मुझे तुमसे नफरत है। मै तुम्हारी शक्ल भी नही देखना चाहती। तुम आदमी नही, जानवर हो।"

और फिर वह सिसकने लगी।

कामेश्वर कुछ बोला नही।

जब कार शैलजा के बँगले मे पहुँची तब तक शैलजा संयत हो चुकी थी। वह चुपचाप उतर कर अपने कमरे की ओर बढ़ी।

कामेश्वर कार घुमाकर अपने घर की ओर चल दिया। वह प्रसन्न था—अपनी विजय पर!

और शैलजा अपने कमरे का द्वार अन्दर से बन्द करके आधी रात तक रोती रही। वह लुट गयी थी। उसे लग रहा था कि उसका शरीर गन्दा हो गया है, कभी न छूटने वाली कीचड़ में सन गया है।

रोते-रोते ही वह सो गयी।

और फिर उसने स्वप्न देखा कि वह एक भयंकर अग्नि-कुंड मे गिर गयी है। अग्नि शिखाये उसके रोम-रोम को भस्म कर रही है और वह चीख रही है, असह्य पीडा से तड़फ रही है।

और सचमुच ही उसका पसीने से तर शरीर पलँग पर उसी तरह तड़फने लगा जैसे जल के बाहर मछली तडफती है।

सोलह

दूसरे दिन जब शैलजा सोकर उठी तब उसका चेहरा नित्य की तरह फूल सा खिला हुआ नहीं था। उसका मन भारी था, शरीर में थकान थी, रग-रग में दर्द था और सिर फटा जा रहा था। नौकरानी जब चाय लेकर आयी तब रोज की तरह शैलजा ने प्याली अधरों से नहीं लगायी। उसने नौकरानी से चाय ले जान के लिए कहा। वह दबे पाँव चाय का प्याला लिए बाहर चली गयी।

शैलजा ने नहा-धोकर जब जल पान किया तब वह कुछ स्वस्थ हुई। फिर भी पिछली रात की घटना वह भूल न सकी। उसकी स्मृति बार-बार उसे आकुल कर रही थी। वह रह-रह कर काँप उठती; उसका हृदय कामेश्वर की नीचता के प्रति घृणा से भर उठता और वह अपने होठ काटने लगती।

कालेज जाने का समय हुआ पर वह कालेज न गयी। अपने कमरे में जाकर लेट गयी। वह सोचने लगी कि कामेश्वर का विश्वास करके उसके साथ रात में गंगा-तट पर जाना ही उसकी भारी भूल थी और उसी भूल का महान दंड उसे मिला है ! सभी पुरुष अन्दर से भेड़िये होते हैं—भूखे,

खूँख्वार भेड़िये ! और फिर उसने निश्चय किया कि वह भविष्य मे कभी किसी पुरुष पर विश्वास नही करेगी।

वह विचारों मे खोयी थी और तभी कमरे मे शकुन आ गयी।

"आज भी कालेज नही गयी ?" शकुन ने सहज स्वर मे पूछा।

शैलजा न जाने क्यो शकुन के इस प्रश्न से चिढ गयी। उठकर बैठती हुई बोली—"तुम मेरी फिक्र क्यो करती हो ? मेरा मन होगा, जाऊँगी, नही तो नही जाऊँगी।"

शकुन को आशा नही थी कि शैलजा ऐसा उत्तर देगी। वह कुर्सी पर बैठकर धीमे स्वर मे बोली—"मैने कोई बुरी बात तो नही कही, शैल !"

शैलजा फिर पलँग पर लेट गयी।

"क्या तबियत ठीक नही है ?" शकुन ने स्नेहपूर्ण स्वर मे पूछा।

शैलजा मौन रही। उसने मुह दूसरी ओर कर लिया।

शकुन ने समझा कि अवश्य कोई ऐसी बात हुई है जिससे शैलजा नाराज है। उसने सोचा कि कल रात को वह कामेश्वर के साथ घूमने गयी थी, शायद तभी कुछ आपस में अनबन हो गयी हो।

"क्या कामेश्वर ने कुछ कह दिया है ?" शकुन ने पलँग पर बैठकर सहज स्वर मे पूछा।

कामेश्वर के नाम ने शैलजा के क्रोध मे घी का काम किया। उसने समझा कि कामेश्वर का नाम लेकर शकुन उसकी हँसी उडा रही है, उसे चिढा रही है। वह तिलमिला कर उठ बैठी और तीखे स्वर मे बोली—"क्या मै अपने कमरे मे भी चैन से नही लेट सकती ?" और फिर वह तकिये मे मुह छिपाकर सिसकने लगी।

शकुन घबरा गयी। आखिर शैलजा को हो क्या गया है ?

कुछ देर बाद शैलजा का सिसकना बन्द हो गया। शकुन पलँग से उठकर आराम कुर्सी पर बैठ गयी थी। शैलजा उठकर बाथ रूम में गयी और मूँह धोकर लौटने के बाद शकुन से बोली—"मुझे माफ कर दो, सिसी !

मेरी तबियत ठीक नहीं है।"

"यह तो मै पहले ही समझ गयी थी।" शकुन का सीधा सा उत्तर था।

"ललित रात को क्यो आया था ?" सहसा शैलजा पूछ बैठी।

"मुझे बुलाने के लिए ?"

"क्यो ? कहाँ जाना था तुम्हे ?" शैलजा की उत्सुकता जाग गयी।

"कल तुमने सरला को देखा था न !"

"हाँ ! मगर तुमने यह नहीं बताया था कि वह ललित की बहन है। मुझे तो तब मालूम हुआ जब वह उसके साथ जाने लगी।" शैलजा के स्वर में फिर रूखापन आ गया।

"ललित को जो कुछ मिलता है उससे घर का खर्च ही कठिनाई से चलता है। बिचारा दहेज देकर सरला का ब्याह कैसे कर पाता !" शकुन के स्वर मे करुणा आन्दोलित हो उठी।

"डैडी से कहकर पे बढवा क्यों नही देती !" शैलजा ने व्यग्य किया।

"सोचती तो मै भी यही हूँ।" शकुन गभीरता से बोली। "खैर, यह तो बाद की बात है। हाँ, तो सरला भैया-भाभी की चिन्ता से दुखी थी। उन्हे दुख और चिन्ता से छुटकारा देने के लिए उसने. ..... ।"

"सुसायड कर ली ?" बीच मे ही शैलजा आँखे फैलाकर पूछ बैठी।

"आत्म हत्या तो नही की परन्तु. .. ..।" और शकुन ने रुक रुककर धीमे और दुखी स्वर मे सारी बात शैलजा को बता दी।

शैलजा मूक भाव से सुनती रही और अन्त मे ठढी साँस लेकर धीमे स्वर मे बुद बुदायी—"पुअर सरला।"

और फिर उसकी आँखो के आगे कामेश्वर की पाशविकता का चित्र घूम गया। उसी पशु के साथ सरला को रहना पडेगा। क्या वह उसे मामी का आदर और सम्मान दे सकेगा ? क्या भोली-भाली सरला उस चिकने-चुपडे लुटेरे से अपनी रक्षा कर सकेगी ? सोचते-सोचते शैलजा का हृदय सरला के प्रति करुणा से भर गया। "बिचारी सरला !" वह फिर बुदबुदायी।

शकुन निश्चल होकर आराम कुर्सी पर आँखे बन्द किये लेटी थी। शैलजा पलँग से उठकर उसके पास आ गयी और दूसरी कुर्सी पर बैठकर धीमे स्वर मे बोली—'सिसी, यह तो अन्धेर है ! इसे रोकना चाहिए।"

"मैने सरला को समझाने की बहुत कोशिश की।" शकुन ने आँखे खोलकर उदास स्वर मे कहा, "मगर वह मानती ही नही। उसका निश्चय अटल है।"

यदि कल की दुखद घटना घटित न होती तो शायद शैलजा को सरला के दुर्भाग्य पर दुख न होकर सुख ही होता, क्योंकि उसने कमल की आँखों मे उसके प्रति कोमल भावना देखी थी और फलस्वरूप वह उसे अपनी प्रतिद्वन्द्विनी मान बैठी थी। किन्तु कल की घटना ने स्थिति बदल दी थी। उसे पुरुष-जाति से घृणा हो गयी थी और इसीलिए उसके हृदय में सरला के प्रति, जो उसी की तरह दुर्बल नारी थी, सहानुभूति का भाव उदित हुआ था।

कमरे के वातावरण मे एक अजीब सी उदासी छा गयी थी। शैलजा और शकुन आँखे बन्द किये सरला के करुण भविष्य की कल्पना मे लीन थी। सहसा शकुन को कमल की बात याद आ गयी। आँख खोलकर उसने स्वाभाविक स्वर में शैलजा से पूछा—"तुम कल कमल के घर गयी थी ?"

शैलजा ने चौंककर आँखे खोल दी। वह तीखी दृष्टि से शकुन की ओर देखने लगी। उसकी समझ मे न आया कि शकुन को यह बात कैसे ज्ञात हुई।

"गयी तो थी।" शैलजा ने उत्तर दिया। "मै चाहती थी कि वह अपना संग्रह बाबू श्यामसुन्दर को दे दे। मगर वह बहुत जिद्दी है। मै उसकी सहायता करना चाहती थी और उसने समझा कि इसमे मेरा कोई स्वार्थ है। फुलिश क्रियेचर!"

शैलजा ने कमल को 'मूर्ख प्राणी' की उपाधि इस ढंग से दी कि शकुन को हँसी आ गयी।

"वह यह समझता है कि तुमने बाबू श्यामसुन्दर से उसकी शिफारिश

की है।" हँसी रोककर शकुन बोली।

"मुझे क्या गरज पड़ी है किसी की शिफारिश करने की?" चिढे स्वर मे शैलजा बोली और फिर कुर्सी से उठकर वह ड्रेसिग टेबिल के दर्पण मे अपना मुख देखने लगी।

"खैर! कल वह ललित के यहाँ आया था। हमने उसे सग्रह देने के लिए राजी कर लिया है!" शकुन ने मुस्कराकर उसे सूचित किया।

इस सूचना से शैलजा को हर्ष नही हुआ। इसमे उसे अपनी पराजय दिखाई दी। उसका स्वाभिमान जाग उठा। उसने सोचा, जब कमल मेरी बात नही मानता तो मुझे क्या गरज पड़ी है उसकी सहायता करने की! वह अपने को समझता क्या है?' प्रोफेसर इन्द्र ठीक ही कहते थे। कल से लेखनी पकड़ी है और अपने को महाकवि समझने लगे है। और जो कमल पहले उसकी दृष्टि मे 'जीनियस' था वही एकदम 'ट्रैश' बन गया।

"कमल ललित को अपना सग्रह सुबह दे गया होगा। वह सग्रह यहाँ ले आयेगा। फिर तुम बाबू श्यामसुन्दर को दे देना।" शकुन कुर्सी से उठकर बोली।

"संग्रह उसने मेरे कहने से तो दिया नही है। मुझे क्या पड़ी है जो बाबू श्यामसुन्दर की बिनती करूँ! अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।" घूमकर शैलजा ने उत्तर दिया।

शकुन उसकी ओर आश्चर्य से देखती रही। इस परिवर्तन का कारण उसकी समझ मे न आया। "ठीक है। मै बाबू श्यामसुन्दर से फोन से बात कर लूँगी।" कहकर वह बाहर चली गयी।

× × ×

कमल जब पाण्डुलिपि लेकर ललित के घर पहुँचा तब ललित मील जाने की तैयारी कर रहा था। कमल ने बाहर से आवाज दी। कमल का स्वर पहचान कर ललित ने उसे अन्दर बुला लिया। दया और सरला बरामदे में ही थी। दोनों ने हाथ जोडकर अभिवादन किया। वह सिर झुकाकर आँगन मे पड़ी चारपाई पर बैठ गया।

"सग्रह ले आये ?" ललित ने कमरे से ही पूछा।

"हाँ।" कमल ने धीमे स्वर मे उत्तर दिया।

कमल ने सकेत से मुन्ना को अपने पास बुलाया। वह झिझकता हुआ उसके पास गया। कमल ने उसे अपनी गोद मे बिठा लिया।

"हमे जानते हो ?" कमल ने मुन्ना से पूछा।

उसने सिर हिला दिया।

"बताओ, हम कौन है ?" कमल ने प्यार से पूछा।

"गाने वाले चाचा !" कहकर मुन्ना तालियाँ बजाने लगा।

उसके उत्तर से कमल खिलखिलाकर हँस पडा। दया और सरला भी मुस्कराने लगी।

"वाह भाई ! मेरा मुन्ना तो बहुत होशियार है।" कमल ने उसका माथा चूम कर कहा।

उसी समय ललित कमरे से बाहर आया। उसके हाथ मे झोला था। कमल को देखकर वह मुस्कराया पर कमल को उसकी वह मुस्कान आँसुओ से भी गीली लगी। उसने देखा कि ललित की आँखे लाल है, मानो वह रात भर सोया न हो और चेहरे पर उदासी और व्यथा के चिन्ह है मानो वह बहुत-बहुत थका हो।

"लाओ।" कहकर ललित ने अपना हाथ कमल के आगे फैला दिया।

कमल से सग्रह लेकर उसने उलट-पुलट कर देखा और फिर उसे सावधानी से झोले मे रख लिया।

घर से निकल कर दोनो गली मे आ गये। कुछ देर तक दोनो मूक रहे, पर कमल से न रहा गया। उसने पूछा—"तुम उदास क्यो हो ललित ?"

"कोई खास बात नही है।" ललित ने मन्द स्वर मे कहा।

"आम सही।" हँसकर कमल बोला। एक क्षण बाद गभीर स्वर मे कहा—"बताओ, क्या बात है ? एक दुखी दूसरे के दुख को अच्छी तरह समझ सकता है।"

"क्या बताऊँ, भाई।" कहकर ललित ने व्यथित स्वर मे सम्पूर्ण स्थिति स्पष्ट कर दी और फिर रुक कर बोला—"मुझे लगता है कि मै एक महान अपराधी हूँ, कमल! कुछ समझ म नही आता क्या करूँ?".

कमल सिर झुकाये मौन भाव से चलता रहा। उसका मुख आन्तरिक पीडा से विकृत हो उठा। उसे लगा कि जैसे उसके अंग-अंग मे किसी ने सहस्रो सुइयॉ चुभा दी है।

"मैं तो सरला को समझा कर हार गया। शकुन की बात भी उसने नही मानी। न हो तो एक बार तुम्ही समझाओ उसे।" अत्यन्त धीमे स्वर मे ललित ने आग्रह किया।

कमल चलते-चलते रुक गया। ललित को भी रुकना पडा।

"किस मुँह से समझाऊ उसे?" कमल का स्वर बेबसी और पीडा से ओत-प्रोत था। "और क्या समझाऊँ? नही, तुम भूलते हो, मित्र! समझाने की कोई जरूरत नही है। जो हो रहा है, होने दो!"

"यह क्या कह रहे हो, कमल?"

"तुम्हे तो प्रसन्न होना चाहिए कि सरला ने आत्म हत्या का कायरता-पूर्ण मार्ग नही चुना।" आगे बढता हुआ कमल गभीर वाणी में बोला। "उसने साहसपूर्ण कदम उठाया है और मैं उस देवी का अभिनन्दन करता हूँ।"

"तुम पागल हो, कमल!" ललित कडे स्वर मे बोला।

"अगर हम सब पागल हो जाये तो फिर कोई कष्ट ही न हो। खेद तो यही है कि हम पागल नही है।" और फिर रुक कर ललित का हाथ पकड़ कर आवेश से बोला—"यही कष्ट, यही व्यथाये, यही चोटे हमे सघर्ष के प्रति जागरूक रखती है। दोस्त! आघातों को हँसकर सहो क्योंकि इन्ही से क्रान्ति को बल मिलेगा। सरला जैसी देवियो के त्याग और बलिदान ही सामाजिक क्रान्ति को उभारेगे और फिर वर्गो की दीवारें ढहकर चूर हो जायेगी, मानवीय सम्बन्धों को छिन्न-भिन्न करने वाली अव्यवस्था की खाइयाँ पट जायेगी और मनुष्य को मनुष्य से अलग करने-

वाली दरारें मुद जायेगी। विश्वास रक्खो दोस्त, हम जो कुछ सह रहे है वह व्यर्थ नही जायेगा। नीव के इन्ही पत्थरो पर नये समाज का प्रासाद खडा होगा।"

बोलते-बोलते कमल के मस्तक पर पसीना आ गया और वह हाँफने लगा। माथे का पसीना कुर्त्ते की बाँह से पोछ कर वह फिर मन्द गति से आगे बढा। ललित मत्र-मुग्ध सा उसके पीछे चल दिया।

"अच्छा, अब मै चलता हूँ।" कहकर कमल ने ललित के कन्धे पर हाथ रख दिया।

ललित दृष्टि नीची किये खड़ा रहा मानो उसे काठ मार गया हो।

"यह प्रश्न केवल सरला या तुम तक ही सीमित नही है।" ललित के कन्धे को जोर से दबाते हुये कमल बोला। "यह समस्या करोड़ो परिवारो की है। याद रक्खो, इस आग मे जलनेवाले हमी लोग नही है, करोडों हमारे साथी है। यह आग बहुत जल्द ही विषमता की फूस को भस्म कर देगी! जितनी तीव्र आग मे हम जलेंगे उतना ही उग्र हमारा विद्रोह होगा। इसलिए जलो, खूब जलो।"

और फिर कमल दार्शनिक की भाँति सिर झुकाकर मन्द गति से राममोहन के हाते की ओर चल दिया।

ललित ने अनुभव किया कि कमल ने उसे नयी दृष्टि दी है, नया प्रकाश दिया है, वस्तुस्थिति को परखने के लिए नया दृष्टिकोण दिया है।

और जब वह कमल का काव्य-संग्रह देने के लिए शकुन के बँगले की ओर चला तब उसकी गति में दृढता थी।

सत्रह

शाम को जब ललित घर लौटा तो द्वार पर बाबू श्यामसुन्दर का नौकर उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसने ललित को एक कागज दिया और कहा कि इसे भर कर लौटा दीजिये। ललित कागज लेकर अन्दर आ गया। आँगन में पहुँच कर उसने कागज खोलकर देखा। वह 'फिक्सड डिपाजेट अकाउन्ट' खोलने के लिए सेन्ट्रल बैंक का फार्म था।

ललित ने सरला और बाबू श्यामसुन्दर के ब्याह की स्थिति से तो समझौता कर लिया था पर उसकी आत्मा यह मानने को तैयार न थी कि बाबू श्यामसुन्दर से रुपया जमा कराया जाये। वह सोचता था कि यदि उसने उनसे एक भी पैसा लिया तो मोहल्ले वाले यही कहेंगे कि उसने बहन का सौदा किया है।

इसी उलझन में पड़ा वह चारपाई पर बैठ गया। उसने दया को बुलाया। वह आकर फर्श पर बैठ गयी।

"सरला कमरे में है क्या?" उसने दबे स्वर में पूछा।

"परोस में गयी है। क्यों, क्या बात है?" दया ने पूछा।

"बाबू श्यामसुन्दर ने बैंक का फार्म भेजा है। मैं नहीं चाहता कि उनसे एक भी पैसा लिया जाये। तुम्हारी क्या राय है?"

"मैं क्या बताऊँ? तुम जसा ठीक समझो करो।" दया बोली।।
"तो फार्म लौटा दूँ?" ललित ने चारपाई से उठकर पूछा।
"लौटा दो।" दया ने धीमे स्वर म कहा।
उसी समय सरला आ गयी। ललित के हाथ मे फार्म देखकर पूछा—"क्या बात है, भैया?"
"कुछ नही! बाबू श्यामसुन्दर ने मुन्नी के नाम रुपया जमा करने के लिए फार्म भेजा है। हमारा विचार है कि फार्म लौटा दे।"
"क्यो! लाइये, मै भरे देती हूँ! मुन्नी के नाम रुपया जरूर जमा होना चाहिए।" कहकर सरला ने ललित के हाथ से फार्म ले लिया और कमरे से कलम-दावात लाकर फार्म भरने लगी।
"सरक्षक के स्थान पर आपका नाम लिखे देती हूँ, भैया?" सरला ने कहा।
"मुझे नही चाहिए उनके रुपये।" कहकर ललित टहलने लगा।
"तो तुम्हारा लिखे देती हूँ, भाभी।" वह दया की ओर मुडकर बोली।
"न। बाबा, मुझे तो इस झंझट से दूर ही रक्खो।" कहकर दया चौके मे चली गयी।
सरला कठिनाई मे पड गयी। उसकी हार्दिक इच्छा थी कि मुन्नी के नाम रुपया जमा हो। पर प्रश्न यह था कि सरंक्षक के स्थान पर किसके हस्ताक्षर हो। ललित और दया राजी नहीं थे। फिर...... ?
सहसा बिजली की तरह एक विचार उसके मस्तिष्क मे कौध गया। क्यो न वही मुन्नी की सरक्षिका बन जाये। वह अठारह साल की हो चुकी है और बालिग होने के नाते बैंक भी उसके सरक्षिका बनने मे कोई आपत्ति न करेगी।
सरंक्षक के स्थान पर अपना नाम लिखकर उसने हस्ताक्षर कर दिये।
"पन्द्रह साल के लिए रुपया जमा कराया है, भैया! लीजिये, फार्म दे आइये।" कहकर सरला ने फार्म ललित की ओर बढ़ा दिया।

ललित ने फार्म पढ़ा और आश्चर्य से सरला की ओर देखने लगा।

× × ×

तीसरे दिन अत्यन्त सादगी से आर्य समाजी पद्धति द्वारा सरला का ब्याह बाबू श्यामसुन्दर के साथ सम्पन्न हो गया। वर पक्ष की ओर से कामेश्वर तथा बाबू श्यामसुन्दर के दो-एक घनिष्ट मित्र आये थे। वधू पक्ष की ओर से परोस की कुछ स्त्रियो के अतिरिक्त शकुन और शैलजा थी। ललित ने कमल को भी बुला लिया था।

ललित और शकुन दोनों ने ही देखा कि शैलजा और कामेश्वर एक दूसरे से दूर रहने की चेष्टा कर रहे है उन्होने बात करना तो दूर, एक दूसरे की ओर देखा तक नही। उनके उदासीन व्यवहार से ऐसा लग रहा था मानो दोनो बिल्कुल अपरिचत हो।

विवाह-सस्कार के पश्चात् विदा की करुण घडी आयी। यह समय ऐसा होता है जब पत्थरो का दिल भी पिघल जाता है। सरला जब दया के सीने मे मुह छिपा कर फूट-फूट कर रोने लगी तब सभी की आँखे भर आयीं। और तो और, मुन्ना-मुन्नी भी रोने लगे।

"सरला भोली-भाली लडकी है।" ललित ने रुद्ध कठ से बाबू श्याम सुन्दर से कहा।" अगर उसमे भूल-चूक हो जाये तो ध्यान न दीजियेगा।"

और फिर ललित की आँखो से आँसू की बूँदे सावन की वर्षा की तरह गिरने लगी। कमल ने उसे धीरज बँधाने की चेष्टा की पर उसे सम-झाना तो दूर वह स्वय बच्चों की तरह रोने लगा।

दया को छोडकर सरला ललित से चिपट गयी। शकुन और दया रोती जा रही थी और सरला को समझाती जा रही थी। शैलजा आँगन के एक कोने मे खडी अपने आँसू पोंछ रही थी। पास-परोस की स्त्रियाँ भी अपने को संयत नही रख पा रही थी।

"भैया! सरला सिसक कर बोली। "मैने बहुत कष्ट दिये है आपको। मुझे माफ कर देना, भैया, मुझे माफ कर देना।"

"माफी मुझे माँगनी चाहिए।" ललित सिसकता हुआ बोला।

"दोषी मैं हूँ। मैं .... मैं ... अपना धर्म भी पूरा न कर सका।"

और इसके बाद ललित ऐसा बिलख-बिलख कर रोया कि बाबू श्याम-सुन्दर की आँखो मे भी आँसू आ गये। कामेश्वर का हाथ पकडकर वे बाहर चले गये।

आँसू, और सिसकियो के बीच सरला की विदा हुई। सरला के जाने के बाद घर मे मातम की उदासी छा गयी। एक अजीब सा सूनापन ललित के तन-मन पर छा गया। शैलजा, शकुन और कमल के जाने के बाद वह निर्जीव सा चारपाई पर लेट गया। उसे लगा, जैसे सरला के रूप मे घर की आत्मा ही चली गयी है।

उस दिन उसने भोजन भी नही किया।

अट्ठारह

पुरुष की अपेक्षा नारी अधिक सरलता से परिस्थितियो तथा वातावरण के अनुकूल अपने को परिवर्तित कर लेती है। पुरुष यदि पाषाण है तो नारी मोम। यही कारण है कि ससुराल पहुँच कर नारी थोडे समय मे ही वर्षो के सस्कारो को भूलकर नये सस्कारो को ग्रहण कर लेती है और नये घर मे इस प्रकार घुल मिल जाती है मानो वह वही जन्मी हो। सरला भी दो-चार दिनो मे ही गोमती से घुल-मिल गयी। अपने मृदुल और मधुर व्यवहार तथा सहनसील स्वभाव के कारण उसने नौकरो तक का मन मोह लिया।

गोमती प्रसन्न थी क्योंकि सरला ने न तो घर गृहस्थी के कामों मे दखल ही दिया और न गृह स्वामिनी के रूप मे कभी अपने अधिकारों के प्रदर्शन की चेष्टा ही की। गोमती के अधिकार पूर्ववत रहे और इसीलिए वह सरला के प्रति अपनी ममता और अपने स्नेह का प्रदर्शन जी खोल कर करती रही। कामेश्वर के उत्तराधिकार से वंचित हो जाने से वह खिन्न और दुखी अवश्य थी किन्तु फिर भी आशा का सूत्र पूर्णतया नही टूटा था। "यदि सरला के सन्तान ही न हो तो।" रह रह कर यही विचार

उसके मन में उठता था और इसी से उसके दग्ध हृदय को थोड़ी-बहुत शान्ति भी मिलती थी।

कामेश्वर को भी इस बात का दुख था कि वह मामाजी की अगाध सम्पत्ति का स्वामी नही बनेगा, परन्तु इस दुख की अपेक्षा मे उसका वह सुख अधिक था जो सरला को निकट पाकर उसे आन्दोलित करता था। सरला को प्रथम बार जब उसने गोष्ठी मे देखा था तभी वह उसकी दृष्टि मे गड़ गयी थी। अब सरला उसके निकट थी—वह बहुत निकट थी पर थी मामी के रूप मे। और यही उसका हृदय उसपर हावी हो जाता था। वह सरला को मामी के रूप मे स्वीकार न कर सका। उसकी धारणा थी कि अठारह साल की पूर्ण युवती पैतालिस साल के अधेड को अपना प्यार न दे सकेगी और उसे विश्वास था कि वह एक दिन सरला के हृदय के एकान्त कोने मे अपना स्थान बना लेगा और फिर उसका मार्ग सीधा और साफ हो जायेगा। इसी उद्देश्य से वह अधिक से अधिक समय तक सरला के पास रहने की चेष्टा करता; जब-तब हास-परिहास भी कर बैठता मानो सरला उसकी मामी नही भाभी हो।

सरला को कामेश्वर का यह व्यवहार अच्छा न लगता। फिर भी वह इसका विरोध खुल कर न कर सकती थी। वह इतनी नादान थी कि कामेश्वर की आँखो में तैरने वाली घोर वासना के भाव को न समझ सके। वह उससे दूर रहने की चेष्टा करने लगी; उसे उससे भय लगने लगा।

कुछ दिन बाद जब ललित विदा कराने पहुँचा तब सरला प्रसन्न हो उठी। बाबू श्यामसुन्दर ने ललित को आदर से कमरे मे बिठाया। सरला ने अन्दर से जलपान का सामान भेज दिया।

"खाइये।" बाबू श्यामसुन्दर ने हँसकर कहा।

"मै सरला से बडा हूँ। आपके यहाँ का कैसे खा सकता हूँ।" संकुचित स्वर मे ललित बोला।

बाबू श्यामसुन्दर ठहाका मारकर हँसते हुये बोले—"इन दकियानूसी ख्यालों मे क्या रक्खा है? नाते-रिश्देतेदारों के यहाँ नही खाया जायेगा तो

फिर किसके यहाँ खाया जायेगा। खाइये। बेकार का संकोच ठीक नहीं।"

फिर ललित विरोध न कर सका। वह खाने लगा।

"कमल की पुस्तक प्रेस मे दे दी है। महीने भर के अन्दर छप जायेगी।" बाबू श्यामसुन्दर ने जलपान के बाद ललित को बताया।

इस समाचार से ललित प्रसन्न हो उठा।

"बुरा न मानो तो एक बात कहूँ ?" दोनों हाथ मलते हुये सकोच से बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"आपकी बात का बुरा कैसे मान सकता हूँ ?" ललित गभीर स्वर मे बोला। "कहिये, क्या कहना चाहते है।"

"तुम यह नौकरी छोड दो।' बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"क्यो ?" चौककर ललित ने पूछा।

"जब घर मे ही काफी काम है तब बाहर नौकरी करने से क्या लाभ ? कामेश्वर का ध्यान काम मे है नही। मै चाहता हूँ तुम प्रेस का काम देखो।"

"यह कैसे हो सकता है ?" ललित ने विरोध किया। "नहीं, यह असम्भव है। आपके उपकारो के बोझ से वैसे ही बहुत दबा हूँ। अब और न दबाइये।" और ललित का गला भर आया।

बाबू श्यामसुन्दर समझ गये कि जोर देना बेकार है; ललित उनकी बात मानेगा नही। वे मौन हो गये।

कामेश्वर सरला और ललित को कार से छोडने आया। सरला मुन्ना-मुन्नी के लिए वस्त्र, फल, मिठाई और भाति-भाति के खिलौने लाई थी।

सरला को देखकर मुन्ना प्रसन्नता से तालियाँ बजा-बजाकर कहने लगा—"बुआजी आ गयी ! बुआजी आ गयी।"

सरला ने उसे गोद मे लेकर चूमा और फिर वह खेल-खिलौनों मे मग्न हो गया।

दया ने झपट कर सरला को सीने से लगा लिया।

सुबह शकुन सरला से मिलने आयी।

"शैलजा जी कालेज गयी क्या ?" सरला ने पूछा।

"उसे न जाने क्या हो गया है। दिन भर अपने कमरे मे ही पडी रहती है। कहती है सिर मे दर्द रहता है। कालेज जाना भी बन्द कर दिया है।" शकुन ने बताया।

सुनकर सरला को दुख हुआ। उदास स्वर मे पूछा—'डाक्टर को दिखाया ?"

"वह दिखाने दे तब तो। कहती है, अपने आप ठीक हो जायेगा। उसकी जिद के सामने पिताजी भी कुछ नही कर सकते।"

उसके बाद सरला और शकुन काफी देर तक बाते करती रही। शकुन ने कोच-कोचकर ससुराल की बाते पूछी और सरला संकुचित और लज्जित स्वर मे उसके प्रश्नो का उत्तर देती रही।

शकुन ने सरला की बातो से निष्कर्ष निकाला कि वह ससुराल में पूर्ण रूप से सुखी है। शकुन ने सन्तोष की साँस ली।

"कमल की किताब तो प्रेस मे चली गयी होगी ?" शकुन ने अन्त मे पूछा।

"हाँ। महीने भर मे ही छप जायेगी।" कहकर सरला कुछ रुकी और फिर धीमे स्वर मे शकुन की ओर देखकर बोली—"कमल ने बिना किसी समझौते के सग्रह दे दिया है। मै समझती हूँ उन्हे कुछ रुपया मिलना चाहिए।"

"अवश्य मिलना चाहिए। क्या तुमने उनसे कुछ बात की थी ?" शकुन ने पूछा। 'उनसे' से उसका तात्पर्य बाबू श्यामसुन्दर से था।

"अभी तो नही पर अब करूँगी।" सरला ने लजाकर कहा।

× × × ×

सरला कुछ दिन बाद फिर ससुराल चली गयी।

एक दिन अवसर देखकर वह बाबू श्यामसुन्दर से बोली—"आपने कमल से सग्रह तो ले लिया है, परन्तु उसे दिया कुछ नही।"

"और प्रकाशक तो कविता की पुस्तकों पर दस प्रतिशत रायल्टी भी

मुश्किल से देते हैं। मैं उसे पन्द्रह प्रतिशत दूँगा।" बाबू श्यामसुन्दर ने उसे आश्वासन दिया।

"रायल्टी तो किताबों की बिक्री पर दी जायेगी। मैं चाहती थी .।" बोलते-बोलते सरला रुक गयी।

"क्या चाहती हो तुम?" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर ने पूछा।

"यह तो आप जानते ही हैं कि कमल किसी मित्र के यहाँ रहता है। उसकी आर्थिक दशा ठीक नहीं है। यदि.... ।" और फिर सरला अपना वाक्य पूरा न कर सकी।

"कुछ कहो तो। क्या उसे कुछ पेशगी दिलाना चाहती हो?"

सरला ने सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

"तो इसमें सकोच की क्या बात थी? आज शाम को उसे चाय पर बुला लो। उससे मुख-पृष्ठ की डिजायन भी पसन्द करा लूँगा और रुपये भी दे दूँगा। कितना रुपया देना चाहती हो?"

"मैं क्या बताऊँ? जितना आप ठीक समझें।" सरला ने मन्द स्वर में कहा।

"चार सौ ठीक रहेगा?"

सरला ने फिर सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

"ठीक है। आज शाम को उसे बुलाकर कह देना।" बाबू श्यामसुन्दर शेरवानी पहनने लगे।

"अगर कहें तो चाय पर भैया और शकुन को भी बुला लूँ?" सरला के स्वर में सकोच मूर्तिमान हो उठा।

"इसमें पूछने की क्या बात है? जरूर बुला लो।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

उनके मुक्त हास्य से वह और भी सकुचित हो उठी।

बाबू श्यामसुन्दर के जाने के बाद सरला ने शकुन को फोन किया।

"मैंने उनसे बात कर ली है। वे कमल को चार सौ रुपये पेशगी दे देंगे।" सरला ने प्रसन्न स्वर में शकुन को बताया। "आज शाम को

हमारे यहाँ चाय है। आप ठीक पाँच बजे आ जायें और मील मे भैया को फोन कर दीजिये कि कमल को लेकर वे भी आ जाये।"

"मै अभी फोन कर दूँगी।" शकुन ने उत्तर दिया।

"आप भी जरूर आइ गा।" सरला के स्वर में हार्दिक आग्रह था।

"जरूर आऊँगी।" शकुन ने वचन दे दिया।

नियत समय पर सब लोग पहुँच गये। चाय के बाद बाबू श्यामसुन्दर कमल और ललित गोल कमरे मे बैठ गये। सरला शकुन को अपने कमरे मे ले गयी।

बाबू श्यामसुन्दर ने कमल और ललित को मुख-पृष्ठ की डिजायन दिखायी। चित्र नगर के प्रसिद्ध कलाकार द्वारा बनाया गया था। दोनो ने चित्र बहुत पसन्द किया।

"आपने हमे अपना संग्रह प्रकाशित करने के लिए दिया इसके लिए मै आपका आभारी हूँ, कमल जी।" कुछ देर बाद बाबू श्यामसुन्दर विनम्र स्वर मे बोले। "मैने आपको पन्द्रह प्रतिशत रायल्टी देने का निश्चय किया है। यह है उसका एग्रीमेन्ट। इसपर हस्ताक्षर कर दीजिये।"

बाबू श्यामसुन्दर ने समझौते की दो प्रतियाँ कमल की ओर बढा दी। कमल ने दोनो पर बिना पढ़े ही हस्ताक्षर कर दिये। जब वह दोनो प्रतियाँ उन्हे लौटाने लगा तब बाबू श्यामसुन्दर बोले—"एक आप रख लीजिये।"

कमल ने एक प्रति अपने जेब मे रख ली।

"आपने बिना पढे ही समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"पढ़ने की क्या आवश्यकता थी। मुझे आप पर विश्वास है।" कमल का उत्तर था।

"उसमे लिखा है कि मै आपको एडवान्स के रूप में चार सौ रुपया दूँगा। यह रहे आपके रुपये।" कहकर उन्होने जेब से सौ-सौ के चार नोट निकाल कर कमल की ओर बढा दिये।

कमल और ललित आश्चर्य से बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखने लगे।

"लीजिये।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने नोट कमल के हाथ मे थमा दिये।

कमल ने समझौते की प्रति जेब से निकाली। पढकर उसे फिर जेब में रख लिया और फिर नोट बाबू श्यामसुन्दर की ओर बढा कर बोला—"मै गरीब साहित्यकार हूँ। इतना रुपया कहाॅ रक्खूँगा? इन्हे आप रख लीजिये। जब आवश्यकता होगी तब ले लूँगा।"

उसी समय शकुन सरला को साथ लेकर कमरे मे अ गयीं। सरला चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गयीं। शकुन कमल के पास आकर बोली—"आयी हुई लक्ष्मी को ठुकराते है आप? नोट रख लीजिये। समय पर काम आयेगे।"

"मै इतने रुपयों का क्या करूँगा, शकुन जी? वस्त्र और भोजन मुझे मिल ही जाता है।" कमल ने विरोध किया।

"वस्त्र और भोजन के अतिरिक्त क्या मनुष्य की और कोई आवश्यकता है ही नही? कमल जी, आप क्यों सकोच कर रहे है? यह रुपया आपको दान मे नही दिया जा रहा है। यह आपकी कमाई है; दिन की थकन और रात के जागरण का फल है; यह हृदय के रक्त की उन बूँदो का मूल्य है जिनसे आपने अपने गीत लिखे है।" शकुन आवेश से बोली।

"हृदय के रक्त की बूँदों का मूल्य कागज के इन टुकडो से नही चुकाया जा सकता। यदि....यदि मेरे गीत पढकर एक भी निराश आत्मा को आशा की किरण मिली तो...तो मेरा मूल्य मुझे मिल जायेगा; तो तो मै दिन की थकन और रात के जागरण को सार्थक समझूँगा।" कमल भी भावावेश मे आ गया।

"वह मूल्य तो आपको मिल गया।" धीमे और गभीर स्वर मे सरला बोली। "आपके गीत ने मुझे निराशा के क्षण मे नयी प्रेरणा दी है, नया प्रकाश दिया है। फिर भी आपको रुपये लेने मे आपत्ति नही करनी चाहिए। और कुछ नही तो कम से कम आप इनसे अपने मित्र का बोझ ही कुछ हल्का कर सकते ह।"

और तब कमल ने नोट जेब मे रख लिए।

सबने सन्तोष की साँस ली।

पर जब गोमती को मालूम हुआ तब उसकी नाक-भौ सिकुड़ गयी।

"यह कुलच्छिनी घर को लुटा कर ही चैन लेगी।" वह बड़बड़ाई। "कभी पैसा देखा हो तो दाँत से पकड़ना भी जाने।"

और कामेश्वर की प्रतिक्रिया भी कुछ इसी प्रकार की थी।

उन्नीस

शारीरिक व्याधियो की औषधि छोटे से छोटे डाक्टर के पास मिल सकती है पर चिन्ता-रोग का उपचार कोई नही कर सकता। किसी ने सत्य ही कहा है कि चिता तो मनुष्य को मृत्यु के बाद जलाती है पर चिन्ता की भयकर ज्वाला जीवित मनुष्य को ही भस्म कर देती है। शैलजा भी इसी रोग से पीडित थी। उसके इस सन्देह की पुष्टि हो गयी थी कि उस चाँदनी रात में चाँद पर जो काला दाग लग गया था वह निरन्तर बढ रहा है और उसे भय होने लगा था कि वह दाग जल्द ही इतना बडा हो जायेगा कि संसार की दृष्टि उस पर पडने लगेगी। उसका रक्त पाप के बीज को जीवन दे रहा था। वह स्वय पीली पडती जा रही थी। उसकी आँखे हर समय की चिन्ता और रात-रात भर के जागरण के कारण धँस गयी थी। मानसिक यंत्रणा का भार असह्य हो रहा था। उसकी समझ मे नहीं आ रहा था कि वह क्या करे, क्या न करे। कोई ऐसी अन्तरंग सहेली भी तो नही थी जिससे वह मन की बात कहकर व्यथा कम कर सकती या उससे कोई परामर्श ले सकती। मन-ही-मन वह घुली जा रही थी। उसका तन उस ज्वालामुखी की लपटो मे झुलसा जा रहा था, जो उसके पेट में धधक रहा था।

काफी सोच-विचार के बाद एक ही रास्ता उसे दिखाई दिया। यदि कामेश्वर उससे तत्काल शादी करले तो वह कलक से बच सकती ह। कामेश्वर से बात करने के विचार से वह एक दिन कालेज गयी। कामेश्वर उसे देखकर आश्चर्य मे पड गया।

"तबियत तो ठीक है ?" उसने उखडे स्वर मे पूछा।

"ठीक ही है। जरा मेरे साथ आओ। मुझे तुमसे कुछ बाते करनी है।" वह कामेश्वर का हाथ पकडकर कार तक ले गयी।

कामेश्वर पहले तो झिझका, पर बाद मे बैठ गया। शैलजा कार ग्रीन पार्क में ले गयी। एक एकान्त स्थान पर उसने कार रोक दी।

"तुमने मेरे सामने जो प्रपोजल रक्खा था मैंने उस पर सोच लिया है। कई दिनो से तुमसे मिलने का इरादा कर रही थी, पर तबियत ढीली होने की वजह से आ न सकी।" शैलजा ने कामेश्वर का हाथ अपने हाथ मे लेकर प्यार भरे स्वर मे कहा। "मुझे तुम्हारा प्रपोजल मंजूर है।"

कामेश्वर ने धीरे से अपना हाथ उसके हाथों से खीच लिया। वह शैलजा की ओर व्यग्य भरी मुस्कान से देखने लगा।

"डियर! मै तुम्हारे बिना एक पल भी नही रह सकती। आई लव यू, डियर, आई लव यू! हम लोग कल ही सिविल मैरिज कर लेगे।" शैलजा आतुर स्वर मे बोली और उसने कामेश्व का हाथ फिर अपने हाथ मे ले लिया।

"ऐसी जल्दी क्या है ?" कामेश्वर टालने के स्वर में बोला। "पहले हम ग्रेजुयेट तो हो ले।"

"उसमे तो अभी महीनो की देर है। मेरे लिए एक-एक मिनट भारी है। डोन्ट यू सी ? आई लव यू सो मच!" शैलजा की व्यग्रता बढती जा रही थी।

"उस दिन तो तुमने कहा था कि तुम मुझसे घृणा करती हो।"

"घृणा प्यार का ही दूसरा नाम है।"

'मेरे लिए घृणा और प्यार दो विरोधी चीजे है।" कामेश्वर अपना

हाथ खीचकर बोला। "यू कैन इदर लव आर हेट अ मैन! यू कान्ट डू बोथ।"

"विश्वास करो, कामेश्वर! मुझे तुमसे प्यार है, सच्चा प्यार है।" शैलजा आँखो मे आसू भर कर बोली। "यह आँसू मेरे गवाह है।"

"होगा। मगर अभी शकुन की शादी नही हुई है। बडी बहन क्वाँरी रहे और छोटी. . . ..।"

"उनका क्या है?" कामेश्वर का वाक्य बीच मे ही काटकर चिढ़े स्वर मे शैलजा बोली—"वे ललित को प्यार करती थी। उसने उनके प्यार को ठुकरा कर दूसरी लडकी से शादी कर ली। वे अगर अब जिन्दगी भर क्वारी ही रहे तो क्या मै भी शादी न करूँ?"

"ललित बुद्धिमान मालूम होता है।" कामेश्वर ने कहा। "चतुर व्यक्ति उस लकडी से कभी भी शादी नही करता जिससे वह प्यार करता है।"

शैलजा भीत दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी।

"ससार मे सुखी व्यक्ति वही है जिसके घर मे पत्नी है और बाहर प्रेयसी। न पत्नी प्रेयसी का स्थान ले सकती है और न प्रेयसी पत्नी का। मुझे खेद है मिस शैलजा, मै तुमसे शादी नही कर सकता। अ ग्लेमर गर्ल कैन नेवर बी अ गुड हाउस वायफ।" कामेश्वर आवश्यकता से अधिक रूखे स्वर में बोला।

शैलजा को अपनी आशाओ का महल ढहता दिखाई दिया। भावी की कल्पना से वह काँप उठी। उसकी आँखों मे आँसू आ गये और वह दोनों हाथो में मुह छिपाकर सिसकने लगी।

कामेश्वर सिगरेट सुलगा कर धुर्ये के गोले बनाने लगा।

"तब तुम्हारा प्यार क्या धोखा था? मीठी-मीठी बातों मे बहकाकर मुझे कही का न रखा!" सिसक कर शैलजा ने कहा।

"हम दोनो एक दूसरे को छलने की कोशिश कर रहे थे। जीत मेरी हुई। इसमें दुखी होने की क्या बात है? मै न सही, कमल ही सही।"

कामेश्वर ने व्यग्य से कहा। कमल के प्रति पनपने वाली घृणा उसके स्वर मे साकार हो उठी।

"इन बातो से अच्छा तो यही है कि मेरा गला घोट दो। क्या मुह लेकर जिन्दा रहूँ अब।" कहकर वह फिर बिलख-बिलख कर रोने लगी।

शैलजा सिसकती रही।

कामेश्वर सोचने लगा कि मामा की सम्पत्ति से तो अब कानी कौड़ी की आशा है नही। क्यो न शैलजा से शादी करके रायबहादुर की सम्पत्ति का स्वामी बन जाऊँ! शैलजा सुन्दर है, पढी-लिखी है और सबसे बडी बात यह है कि बडे बाप की बेटी है। इससे अच्छी लडकी और कहाँ मिलेगी? तभी उसके हृदय ने शका की। शैलजा स्वच्छन्द तितली है। उसे बन्दी बनाकर नही रक्खा जा सकता। वह अच्छी पत्नी नहीं बन सकती, कभी नही बन सकती।

"कामेश्वर, अगर तुम मुझसे शादी नही करोगे तो मै जहर खा लूँगी।" उसके कन्धे पर अपना सिर टिकाकर रुद्ध कठ से शैलजा बोली। "तुम्हे मुझसे शादी करनी ही पड़ेगी। मै.. मै .तुम्हारे बच्चे .. की...माँ .।" शैलजा आगे न कह सकी। वह फूट फूटकर रोने लगी और उसने अपना चेहरा अपनी बाहो मे छिपा लिया।

कामेश्वर को पसीना आ गया। शैलजा के प्यार और शादी की उतावली का कारण उसकी समझ मे आ गया। ओह! पाप के कलक से बचने के लिए मुझे फाँसा जा रहा था!

"यह क्या बक रही हो तुम?" कामेश्वर कड़े स्वर मे बोला। 'न जाने किसका पाप मेरे सिर मढ़ना चाहती हो!"

"ऐसा न कहो, कामेश्वर, ऐसा न कहो!" बिलख कर शैलजा बोली। "भगवान की सौगन्ध! तुम्हारे सिवाय . .।"

"जो एक पुरुष के आगे झुक सकती है वह औरो के आगे भी झुक सकती है।" कामेश्वर कार से उतर कर बोला। "शादी करना तो दूर, मै तुम जैसी लूज लडकी से बात करना भी नही चाहता।" और कामेश्वर

ने जोर से कार का द्वार बन्द कर दिया।

शैलजा को लगा कि कामेश्वर ने उसके गाल पर जोर से तमाचा मार दिया है। दर्द से तिलमिलाकर वह चीख कर बोली—'प्यार का ढोंग दिखाकर मेरे शरीर से खेलना ही तुम्हारा उद्देश्य था! तुम मनुष्य के वेश मे जगली जानवर हो।"

"डोन्ट बी एन्ग्री, मिस! बीस्ट्स आर आलवेज आफ्टर ब्यूटी।" कहकर कामेश्वर विजयपूर्ण अट्टहास कर उठा। "और हॉ, तुम्हे जहर खाने की जरूरत नही है। तुम तो बडे बाप की बेटी हो। किसी भी लेडी डाक्टर के पास चली जाना। एवरी थिग विल बी ओ० के०।"

और फिर कामेश्वर शैलजा की ओर देखे बिना ही तेजी से फाटक की ओर चल दिया।

शैलजा अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती रही।

जब वह घर पहुँची तब निराशा, पीडा और चिन्ता से उसका मुख मलीन था। शकुन बरामदे मे ही थी। शैलजा लडखडाती हुई अपने कमरे मे चली गयी। शकुन ने सोचा, उसकी तबियत ज्यादा खराब है। वह भी उसके कमरे की ओर गयी। कमरे मे पहुँच कर उसने देखा कि शैलजा पलॅग पर पडी सुबक-सुबक कर रो रही है।

शैलजा मन-ही-मन किसी आग मे जल रही है, यह शकुन से छिपा न था। उसे बिलखते देखकर उसका भी मन भर आया। वह पलॅग पर बैठकर शैलजा की पीठ पर स्नेह से हाथ फेरने लगी।

शकुन के स्पर्श से शैलजा छटककर दूर हट गयी। उसने तकिये मे मुह छिपा लिया।

"क्या बात है, शैल?' शकुन ने भीगे स्वर मे पूछा।

"मै पापिन हूँ। मैने बहुत बड़ा पाप किया है। मुझे न छुओ, जीजी, मुझे न छुओ।" कहकर वह फिर बिलखने लगी।

शैलजा सदा शकुन को 'सिसी' कहकर ही सम्बोधित करती थी। उसके मुख से 'जीजी' सुनकर शैलजा ने चौककर उसकी ओर देखा।

हृदय का स्नेह उमड़ पडा और उसने शैलजा का मस्तक चूमकर साश्रु-नयनो से कहा—"शैल! तुम्हे क्या दु ख है? क्या पाप किया है तुमने? अपनी जीजी को बताओ।"

"किस मुह से बताऊँ, जीजी! मै कुल-कलकिनी हूँ। मै . मै दुनिया को अपना मुह नही दिखा सकती।" शैलजा की गोद मे अपना मुख छिपाकर शैलजा सिसकती हुई बोली।

शकुन ने अपने अचल से उसके आँसू पोछे। फिर अपने हाथ से उसका मुख ऊपर उठाकर बोली—"मेरी अच्छी शैल! अपनी जीजी से कुछ न छिपाओ? क्या बात है?"

और फिर शैलजा ने रुक-रुककर रुद्धकठ से शकुन को अपने मन की व्यथा बता दी। उसके बाद वह फिर सिसक कर बोली—"अगर डैडी को मालूम हो गया तो क्या होगा? जीजी, मुझे बचाओ! मै अंधी थी, पागल थी!"

शैलजा की बात सुनकर शकुन स्तब्ध रह गयी। शैलजा इतनी भारी भूल कर बैठी होगी इसकी वह कल्पना तक न करती थी। वह गभीर होकर विचारो के गहरे सागर मे डूबने-उतराने लगी।

शकुन के गभीर मौन का अर्थ शैलजा ने कुछ और ही समझा। आँखों से आँसू पोछकर धीमे स्वर मे बोली—"क्या तुम्हे भी मुझसे नफरत हो गयी, जीजी! होनी ही चाहिए! मै पापिन जो हूँ! अब...अब .. आत्म घात करने के अलावा और कोई रास्ता ही नही है।"

शकुन के धैर्य का बाँध टूट गया। उसकी आँखो से आँसू की धार बहने लगी। शैलजा को सीने से लगाकर रुद्धकठ से बोली—"ऐसा न कहो शैल। तुम चिन्ता न करो। सब ठीक हो जायेगा। मगर.... मगर....तुम यह कर क्या बैठीं?"

शकुन के प्रश्न का उत्तर शैलजा ने आँसुओ की मूक भाषा मे दिया।

शैलजा उसकी पीठ सहलाती रही। कुछ देर बाद धीमे स्वर में बोली—"इस अवस्था मे अधिकतर लड़कियाँ भावुकता में पडकर भूल

कर बैठती है।" फिर रुक कर कहा--"दोषी तुम नहीं, कामेश्वर है।, उसने प्यार के पवित्र अचल पर वासना की कालिख पोत दी है। खैर तुम निराश न हो। मै सब कुछ ठीक कर लूँगी।"

शैलजा ने कृतज्ञता से उसकी ओर देखा।

शकुन उठ कर गैलरी मे गयी जहाँ फोन रक्खा था।

× × ×

ललित के सामने खुली तो फायल पडी थी पर उसका ध्यान कही और था। वह सोच रहा था सरला के बारे मे, दया के बारे मे, मुन्ना-मुन्नी के बारे मे! सरला के जाने के बाद घर मे वैसे ही उदासी छा गयी थी। जब दया भी मैके चली गयी तब तो घर जैसे काटने को दौडने लगा। मील से जब वह घर जाता तब न तो मुन्ना ही आकर उससे चिपट जाता और न मुन्नी की ही किलकारी सुनाई देती। उसे लगता जैसे वह समाधि के अन्दर जीवित ही दबा दिया गया है।

वह अपने विचारों मे डूबा था। फायल मेज पर खुली पड़ी थी। जब चपरासी ने सामने आकर सलाम किया तब भी उसका ध्यान न टूटा।

हुजूर, आपका फोन है।" चपरासी ने विनम्र स्वर मे कहा।

"हूँ! क्या कहा?" चौक कर ललित बोला।

"आपका फोन है।" कहकर चपरासी चला गया।

ललित उठकर फोन के पास गया। चोगा उठाकर उसने कहा--"हलो! मै ललित बोल रहा हूँ।"

"मै शकुन बोल रही हूँ।" उधर से आवाज आयी।

"वह तो मै स्वर से ही पहचान गया। कहिये, क्या आज्ञा है?" ललित चिढ़ाते हुये बोला।

"तुमसे बहुत जरूरी काम है। शाम को मील से सीधे यहीं आना।"

"जो आज्ञा। और कुछ?"

"और बाते यही होगी। मैंने बाबू जी से कह दिया है। तुम उन्हीं के साथ कार पर चले आना।" शकुन का संगीतमय स्वर आया।

"कार न होती तब भी सिर के बल चलकर आता" ललित ने हँसकर कहा और फिर चोगा रख दिया।

अपने स्थान पर बैठकर ललित सोचने लगा कि ऐसा कौन सा आवश्यक काम आ गया है जो शकुन ने बुलाया है। वह ध्यान दौडाता रहा, पर काफी सिर खपाने के बाद भी उसकी समझ मे कुछ न आया।

जब रायबहादुर के अर्दली ने आकर सलाम की तब उसकी विचार-धारा भग हुई।

"क्या है ?" उसने दृष्टि उठाकर पूछा।

"साहब जा रहे है। उन्होने आपको सलाम भेजा है।" अर्दली ने कहा।

"ओह! मै तो भूल ही गया था।" कहकर ललित ने अपना झोला उठाया और वह तेजी से चल दिया।

मार्ग मे रायबहादुर ने मुस्कराकर कहा—"मैने इसी महीने से तुम्हारे वेतन मे बीस रुपये बढा दिये है।"

"मेनी मेनी थैंक्स सर।" प्रसन्न होकर ललित ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की।

"थैंक्स शकुन को देना।" कहकर रायबहादुर हँस पडे।

ललित को यह समझते देर न लगी कि शकुन ने ही रायबहादुर से कहकर उसका वेतन बढवाया है।

कार जब कोठी पर पहुँची तब शकुन बरामदे मे टहल रही थी। जैसे ही कार पोर्टिको मे जाकर रुकी वैसे ही शकुन ने आकर द्वार खोल दिया।

"क्या बात है, बेटी? आज बहुत सेवा कर रही हो!" कार से उतर कर रायबहादुर हँसते हुये बोले।

शकुन लजा गयी।

"जाइये, बाबूजी! आप समझते है कि मै स्वार्थिन हूँ।" रूठकर शकुन बोली।

"अरे, मै तो हँस रहा था! पगली कही की।" कहकर रायबहादुर

अपने निजी कक्ष की ओर बढ गये।

"पहले तो मै हुजूर को धन्यवाद देता हूँ।" कार से उतर कर ललित बोला। "क्योकि हुजूर ने मेरी तनख्वाह बढवा दी है।"

"मै कौन होती हूँ बढवाने वाली। धन्यवाद देना है तो बाबूजी को दो।" कृत्रिम गभीरता से शकुन बोली और वह बरामदे मे पडी आराम कुर्सी पर बैठ गयी।

"उन्होने हुजूर को धन्यवाद देने के लिये कहा है।" शकुन के पास पहुँचकर ललित बोला। "खैर, हाँ, हुजूर ने किसलिए याद फरमाया है ?"

"तुम्हे मेरे साथ बम्बई चलना है।" कहकर शकुन खडी हो गयी।

ललित समझा, शकुन परिहास कर रही है। हँसकर बोला—"बस बम्बई ! मै तो समझा था विलायत चलना होगा।"

"मै हँसी नही कर रही हूँ, ललित ! शैल भी चलेगी।" शकुन ने गभीर स्वर मे कहा।

"कब?" ललित ने भी गभीरता से पूछा।

"कल। तुम जरा यही बैठो। मै अभी बाबूजी से तय किये लेती हूँ।" कहकर वह रायबहादुर के कमरे की ओर चल दी।

ललित बरामदे मे टहलता रहा और सामने की क्यारियों मे खिले रग-बिरगे फूलो को देखता रहा।

शकुन रायबहादुर के पास जाकर लाड भरे स्वर मे बोली—"बाबूजी ! हमारा यहाँ मन नही लगता।"

"तुमसे कहता हूँ कि सुबह-शाम घूम आया करो, मगर तुम सुनती ही नहीं।" रायबहादुर स्नेह सिक्त स्वर मे बोले।

"कहाँ घूम आया करूँ, बाबूजी ?" शकुन तुनक कर बोली। "कानपुर में घूमने की कोई जगह है भी। हर तरफ धूल और धुआ।"

"गर्मियो मे काश्मीर या मसूरी चली जाना।"

"गर्मी तो अभी दूर है। तो तब तक यहाँ मेरा दम घुट जायेगा।" और शकुन की मुख मुद्रा देखकर रायबहादुर को भय हुआ कि सचमुच

ही उसका दम घुटा जा रहा है।

"तो फिर... ।" घबराहट के मारे उनका वाक्य अधूरा ही रह गया।

"मै बम्बई जाऊँगी, बाबूजी ! शैल की भी तबियत ठीक नही रहती है। उसका भी मन बहल जायेगा।"

प्राणो सी प्रिय पुत्री के आग्रह को टालने का साहस रायबहादुर मे मे न था। वे शकुन के सिर पर स्नेह से हाथ फेरते हुए बोले—"चली जाना, बेटी !" फिर रुककर झिझकते हुए कहा—"मगर जाओगी किसके साथ ? मुझे तो.....।"

"आप उसकी चिन्ता न करे, बाबूजी।" रायबहादुर के वाक्य को बीच मे ही काट कर शकुन बोली। "हम लोग ललित के साथ चली जायेंगी मैंने उससे बात कर ली है।"

"अच्छा, तो इसीलिए उसे बुलाया था।" जोर से हँसकर रायबहादुर बोले। "कब जा रही हो ?"

"कल रात की गाडी से।"

"मगर इतनी जल्दी सीटे रिजर्व कैसे हो सकेगी ? दो-चार दिन बाद चली जाना।" रायबहादुर ने धीमे स्वर मे सुझाव दिया।

"आप बस हाँ कह दीजिये। बाकी सब मै कर लूँगी, बाबूजी।" शकुन ने दुलार भरे मीठे स्वर मे कहा।

"अच्छा बाबा, चली जाना ! बस, अब तो खुश हो ?"

और किलकारियाँ भरती हुई शकुन ललित के पास आ गयी। उसकी प्रसन्नता देखकर ही ललित समझ गया कि रायबहादुर ने आज्ञा दे दी है।

"मैंने बाबूजी को राजी कर लिया है। कल रात की गाडी से चलना है। तुम तैयारी कर रखना।" प्रसन्न स्वर मे शकुन बोली।

"मुझे क्या तैयारी करनी है ? जो दो-चार फटे-पुराने कपड़े है उन्हें एक झोले मे डाल लूँगा।" हँसकर ललित बोला।

"कपड़ों की चिन्ता न करो। बम्बई मे सिले-सिलाये कपड़े बहुत

मिलते हैं।" खिलखिलाकर हँसती हुई शकुन बोली।

"अच्छा, अब चलता हूँ। सोचता हूँ, जरा सरला से मिल आऊँ।" कहकर ललित अपना झोला लटकाये चल दिया।

शकुन ने फोन उठाकर 'इन्क्वायरी' से बात की। जब उसे ज्ञात हुआ कि कल रात की गाड़ी मे तीन सीटे रिजर्व हो सकती है तब वह हर्ष से झूम उठी।

ड्रायवर को रुपये देकर तथा प्रथम श्रेणी के तीन टिकट लाने और सीटें सुरक्षित करवाने का आदेश देकर वह शैलजा को सूचित करने के लिये उसके कमरे मे गयी।

शैलजा ने अनुभव किया कि उसकी साँस की घुटन बहुत कुछ कम हो गयी है। आनन्द विभोर होकर वह शकुन के गले से लिपट गयी।

रात को सरला का फोन आया।

"भैया को बम्बई ले जा रही हो ?" उसने शरारत के स्वर मे पूछा।

"हाँ ! मगर तुम चिन्ता न करना। उन्हे हमारे साथ कोई कष्ट न होगा।" शकुन ने भी मजाक मे कहा।

"जब आपके साथ जा रहे है तब चिन्ता कैसी ?" सरला का स्वर आया। "उन्हे आपके हाथों मे सौपकर मै एकदम निश्चिन्त हूँ।" और फिर सरला की हँसी की आवाज शकुन के कानों मे गूँज गयी।

काश ! शकुन की आँखों की लाज और चेहरे की लाली को सरला देख पाती !

"शायद आप मेरी बात का बुरा मान गयी है।" जब शकुन कुछ देर मौन रही तब सरला ने कहा।

इस बार शकुन मौन न रह सकी। हँसकर बोली—"जब तुम्हे मुझ पर इतना विश्वास है तब भला तुम्हारी बात का बुरा कैसे मान सकती हूँ।'

"अच्छा, अगर आप मुह मीठा कराये तो एक शुभ समाचार सुनाऊँ !" सरला का स्वर याआ।

"क्या समाचार है?" शकुन ने उत्सुकता से पूछा।

"कमल का संग्रह छप गया है।"

"सच?" शकुन ने प्रसन्नता से पूछा।

"हाँ! एक प्रति मैंने भैया को दे दी है ताकि आप लोगों की यात्रा सुगम हो जाये।" सरला ने कहा और इससे पहले कि शकुन धन्यवाद दे सके उसने चोंगा रख दिया।

शकुन हर्षातिरेक से फूली जा रही थी। उसने सोचा कि शैलजा को भी यह शुभ समाचार सुना दे। वह तत्काल शैलजा के कमरे में गयी। वह समझती थी कि इस समाचार से शैलजा भी प्रसन्न होगी क्योंकि बाबू श्यामसुन्दर को संग्रह देने का प्रस्ताव कमल के सामने सर्वप्रथम उसी ने रक्खा था।

किन्तु, उसकी आशा के विपरीत, जब शैलजा प्रसन्न होने के बजाय उदासीन रही तब शकुन आश्चर्य में पड गयी।

"मानव-हृदय भी एक विचित्र पहेली है।" उसने मन-ही-मन कहा।

बीस

कमरे की दीवार-घडी न दस बजाये।

सरला ने करवट बदली और फिर कमल का काव्य-सग्रह पढने मे लीन हो गयी। उसकी आँखों मे नीद का नाम तक न था।

पिछले दिन बूँदा-बाँदी हुई थी। अब बादल तो छट गये थे पर दिन भर तेज और सूखी हवा चलती रही थी। इसीलिए ठड बढ़ गयी थी। मसूरी और नैनीताल की पहाडियों पर हिमपात भी हुआ था। फलस्वरूप गलन भी काफी थी। नौकर-चाकर अपने क्वार्टरों मे दुबके पड़े थे। गोमती भी खा-पीकर अपने कमरे मे चली गयी थी। कामेश्वर अभी क्लब से लौटा नही था। उसकी प्रतीक्षा करते-करते महराजिन चौके मे ही चूल्हे की गर्मी पाकर ऊँघ गयी थी। बाबू श्यामसुन्दर आवश्यक कार्य से लखनऊ गये हुये थे।

सरला कमल की पुस्तक कई बार पढ चुकी थी। उसे उसके गीतों से शक्ति मिलती थी, प्रेरणा मिलती थी। उस रात को भी वह जब-खा-पीकर अपने कमरे मे गयी तब एकान्त घडियों को काटने के लिए उसने कमल की पुस्तक उठा ली।

साढे दस बजे उसे कामेश्वर की आवाज सुनाई दी। वह भारी स्वर

मे महराजिन से कह रहा था—"मुझे भूख नही है। तुम सोओ जाकर।"

कामेश्वर महीने मे बीस दिन रात का भोजन बाहर ही करता था। सरला उसके स्वभाव से परिचित हो चुकी थी। उसने कामेश्वर की बात पर कोई विशेष ध्यान नही दिया। वह फिर पढने मे तल्लीन हो गयी।

कुछ देर बाद जब कामेश्वर ने उसके कमरे का द्वार थपथपाया तब उसकी तल्लीनता भग हुई।

"कौन है?" उसने चौककर पूछा।

"मै हूँ कामेश्वर। जरा दरवाजा खोलिये।" कामेश्वर ने भर्राये स्वर मे बाहर से कहा। सरला को उसका स्वर विचित्र सा लगा।

"क्या काम है?" पुस्तक मेज पर रखकर पलँग से उठते हुये पूछा।

"खोलिये तो!" कामेश्वर के स्वर मे तेजी आ गयी।

सरला के मन मे आया कि सुबह बात करने के लिए कह दे, किन्तु फिर सोचा न जाने क्या काम हो! वह धीरे-धीरे द्वार की ओर बढी। तभी उसके मन ने कहा—कामेश्वर नीच प्रकृति का आदमी है। इतनी रात को उसे कमरे मे आने देना ठीक नहीं। न जाने क्या धृष्टता कर बैठे। चलते-चलते उसके पैर रुक गये।

"जल्दी खोलिये। बहुत जरूरी काम है।" बाहर से कामेश्वर ने उतावली के साथ कहा और फिर उसने द्वार पर दस्तक दी।

सरला की बुद्धि ने कहा—अपनी कायरता दिखाना ठीक नही। क्या तुम अपनी रक्षा स्वयं नही कर सकतीं? और फिर घर में और लोग तो है ही। एक ऊँची आवाज ही सब को बुलाने के लिए काफी होगी।

और तब सरला ने काँपते हाथ से द्वार खोल दिया।

कामेश्वर अन्दर आकर कुर्सी पर बैठ गया।

उसके कमरे मे आते ही सरला को अजीब सी दुर्गन्ध लगी। उसने नाक मे साडी का अंचल लगाकर खड़े-खड़े ही पूछा—"क्या काम है?"

"बताता हूँ। ऐसी जल्दी भी क्या है। आप बैठ तो जाइये।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी।

कामेश्वर मदिरा-पान करके आया था, पर उसने इतनी नही पी थी कि होश-हवास न हो। उसकी आँखो के डोरे लाल थे और चेहरा भी तमतमा रहा था।

मदिरा की दुर्गन्ध और धूँएँ के कारण सरला का दम घुटने लगा। वह जरा तेज स्वर मे बोली—"बताओ, क्या काम है ! मुझे नीद लगी है।"

"मेरी आँखो की नीद मुझसे रूठ गयी है।" कहकर कामेश्वर उठा और उसने कमरे का द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

सरला का दिल जोर से धडकने लगा। वह सिहर कर द्वार की ओर बढ़ती हुई बोली—"द्वार क्यों बन्द कर दिया ?"

कामेश्वर द्वार और उसके बीच मे आ गया। हँसकर बोला—"ठडी हवा चल रही है ! आप क्या डर गयी ?"

सरला वास्तव मे डर गयी थी पर अपने भय को छिपाने की चेष्टा करती हुई बोली—"मै क्यो डरूँगी ! कमरे मे धूँआ भर रहा है इसीलिये. . .।"

"यह लीजिये। सिगरेट बुझाये देता हूँ।" कहकर कामेश्वर ने सिग-रेट बुझा कर बाहर फेंक दी। और फिर सीने पर हाथ रखकर बोला। "काश ! इसी तरह मेरे दिल की आग भी बुझ सकती।"

सरला काँप कर पीछे हट गयी। उस भयकर शीत मे भी उसके पसीना आ गया। भय के कारण उसका कठ सूख गया।

"न जाने क्यों मै कभी भी आपको मामी के रूप मे न देख सका।" कामेश्वर आगे बढ कर बोला। "और न जाने क्या सोचकर आपने एक अधेड़ से शादी की।"

सरला का भय क्रोध मे परिवर्तित हो गया। उसकी आँखे लाल हो गयीं, चेहरा तमतमा गया और नथुने फड़कने लगे वह दाँतों से होंठ काटती हुई तेज स्वर में बोली—"निकल जाओ मेरे कमरे से अभी। मै नहीं जानती थी तुम इतने नीच हो।"

"आप तो नाराज हो गयी।" कामेश्वर कोमल स्वर में बोला। "मै तो आपकी भलाई चाहने वाला हूँ। बुढ़ापे के साथ रहकर जवानी भी

बूढी हो जाती है। जवानी के फूल को खिलने के लिए जवानी का ही खून चाहिए !"

अपनी बात पूरी करके कामेश्वर आगे बढा।

"अगर एक कदम भी आगे बढाया तो अच्छा नही होगा। निकल जाओ यहाँ से। नही तो मै अभी चीखती हूँ।" कहकर सरला ने चीखने के लिए मुह खोला।

कामेश्वर डर कर पीछे हट गया। उसे विश्वास हो गया कि यदि वह कमरे के बाहर तुरन्त नही गया तो सरला सचमुच ही सबको इकट्ठा कर लेगी।

"जाता हूँ।" द्वार की ओर बढकर वह धीमे स्वर मे बोला। "मगर एक बार फिर सोच लीजिये। जवानी बार-बार नही आती।"

"तुम जानवर से भी गये बीते हो। तुम्हे यह तक मालूम नही कि मामी माँ के समान होती है।" सरला ने कठोर स्वर मे कहा। "भलाई इसी मे है कि फौरन यहाँ से चले जाओ। अगर फिर कभी ऐसी धृष्टता की तो अच्छा न होगा।"

कामेश्वर समझ गया कि सरला साधारण मिट्टी की नही है; उसमें फौलाद की दृढ़ता है। यहाँ दाल गलना मुश्किल ही नही असम्भव है। वह द्वार खोलने के लिए चुपचाप आगे बढा।

द्वार खोलकर वह घूमकर खडा हो गया और धीमे स्वर मे बोला—"आज की सभ्यता सिर्फ ऊपरी अच्छाई की माँग करती है। आप बाहर से अच्छी होने के साथ-साथ अन्दर से भी अच्छी बनने की कोशिश करती हैं। यही आपकी भूल है। मुझे आपके हाल पर तरस आता है। आपने तो भाई के लिए इतना बडा त्याग किया और वह मालिको की बेटियों के साथ गुलछर्रे उडाता फिरता है।"

"क्या बक रहे हो ?" सरला फुकार कर बोली।

"सत्य कड़ुवा होता ही है। और अगर मै आपको उन लोगो के बम्बई जाने का सही कारण बता दूँ तब तो शायद आपको चक्कर आ

जाए। बताऊँ ?" कामेश्वर कुटिल स्वर में बोला।

"मैं कुछ नहीं सुनना चाहती।" सरला ने चीखकर कहा।

"मगर मैं तो बताना अपना धर्म समझता हूँ।" कामेश्वर आगे बढ़कर धीमे स्वर में बोला। "वे लोग शैलजा का गर्भपात कराने गये हैं। समझी ? अबारशन ! ए, बी, ओ, आर, टी, आई, ओ, एन !" और कामेश्वर तेजी से बाहर चला गया।

सरला ने दौड़कर अन्दर से द्वार बन्द कर लिया।

फिर वह न तो पुस्तक ही पढ़ सकी और न सो ही सकी। रात भर वह पलँग पर करवटें बदलती रही और रह-रहकर कमेश्वर के अन्तिम शब्द उसके कानों में गूँजते रहे। और वह बार-बार यह कहकर अपने मन को समझाने की चेष्टा करती रही कि यह असत्य है, यह असम्भव है, कामेश्वर झूठ बोलता है !

× × ×

सुबह जब कामेश्वर सो ही रहा था तभी गोमती चाय लेकर उसके कमरे में पहुँच गयी। चाय की ट्रे मेज पर रखकर उसने कामेश्वर को जगाया।

कामेश्वर ने आँखें खोलकर एक बार गोमती की ओर देखा और फिर करवट बदल कर सो गया। गोमती झुंझला गयी। उसने रजाई हटाकर तेज स्वर में कहा—"नौ बज गये हैं, तेरी नींद अभी तक पूरी नहीं हुई ?"

रजाई हट जाने पर वह उठकर बैठ गया। आँखे मल कर लाड से बोला—"क्या है, माँ ! तुम तो मुझे सोने भी नहीं देती।"

"हाथ-मुह धोकर चाय पी ले।" गोमती ने आदेश दिया।

कामेश्वर ने उसकी आज्ञा का पालन किया।

जब गोमती चाय की ट्रे लेकर जाने लगी तब कामेश्वर धीमे स्वर में बोला—"बैठ जाओ, माँ ! मुझे तुमसे जरूरी बात करनी है।"

ट्रे मेज पर रखकर गोमती कामेश्वर के पास ही बैठ गयी।

"माँ, मुझे तो सरला का चरित्र अच्छा नहीं लगता" कहकर कामेश्वर

ने घृणा से मुह बिगाड लिया।

"क्या बात है ?" कामेश्वर के पास खिसककर गोमती ने उत्सुकता से पूछा।

"यह शक तो मुझे पहले ही था कि कमल और उनके बीच मे कोई बात है। मगर कल कल तो मुझे एकदम निश्चय हो गया।"

कामेश्वर की बात ने गोमती की जिज्ञासा जगा दी। वह तो यह चाहती ही थी कि सरला के विरुद्ध बाबू श्यामसुन्दर के कान भरने के लिए कोई मसाला मिले। उसने दबे स्वर मे कामेश्वर से पूछा—"क्या बात हुई, कुछ बता तो।"

"क्लब से लौटकर कल रात को मै उनके कमरे मे गया तो देखा वे कमल की किताब अपने सीने से लगाये बैठी लेटी है और धीमे स्वर मे कुछ बुदबुदा रही है।" कामेश्वर ने सिर झुका कर कहा।

"तू क्यो गया था उनके कमरे मे ?" गोमती ने कामेश्वर की ओर गूढ़ दृष्टि से देखकर पूछा।

"तुम तो बाल की खाल निकालती हो माँ।" कामेश्वर रूठकर बोला। एक क्षण रुककर फिर अत्यन्त धीमे स्वर मे कहा—"मुझे देखकर वे उठ बैठी। उन्होने कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया। फिर... फिर उन्होंने मुझसे ऐसी बाते की जिन्हें मै अपने मुह से नही कह सकता, माँ। मेरा तो दम घुटने लगा। बडी मुश्किल से जान बचा कर भाग पाया। मै उन्हे माँ के रूप मे देखता था और वे.. वे.... मुझसे अनुचित . .।" और फिर कामेश्वर ने निश्वास छोडकर अपना वाक्य अपूर्ण ही छोड दिया।

गोमती की आँखे हर्ष से चमक उठीं। विश्वास के स्वर मे बोली—"मै तो पहले दिन ही समझ गयी थी कि वह कुलटा है। उसने पैसे के लिए भैया से ब्याह किया है। आने दो लखनऊ से भैया को। एक-एक बात न कहूँ तो मेरा नाम गोमती नही।" और फिर गोमती चाय की ट्रे उठाकर तेजी से बाहर चली गयी।

कामेश्वर के अधरो पर कुटिल मुस्कान खेल गयी।

गोमती उत्सुकता से बाबू श्यामसुन्दर के लौटने की प्रतीक्षा करती रही और जैसे ही दोपहर को वे आये, वह उनका हाथ पकडकर अपने कमरे मे ले गयी। सरला ने देखा, पर वह कुछ समझ न सकी।

गोमती ने अन्दर पहुँच कर द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

"क्या बात है ?" बाबू श्यामसुन्दर परेशानी से बोले।

"भैया! अब तो मुझे इस जजाल से मुक्त कर दो।" आँखों मे आँसू भर कर गोमती बोली। "मुझसे अब इस घर मे नही रहा जायेगा। मुझे काशी भेज दो, भैया।"

बाबू श्यामसुन्दर समझे शायद सरला से कुछ कहा-सुनी हो गयी होगी इसीलिए गोमती खिन्न और दुखी है। वे धीमे स्वर में बोले—"क्या बात हुई .? क्या. ..क्या सरला ने कुछ कह दिया है ?"

और गोमती उत्तर देने के बजाय फूट-फूटकर रोने लगी।

बाबू श्यामसुन्दर घबरा गये। समझाते हुये बोले—"मै सरला को समझा दूँगा। रोना बन्द करो।"

"मै अपने लिए नही, आपके लिए रो रही हूँ।" गोमती सिसक कर बोली। "भैया! न जाने किस कुघडी मे आप उसे ब्याह कर लाये। वह एक दिन कुल के नाम पर बट्टा लगा देगी।"

बाबू श्यामसुन्दर की छाती पर जोर का मुक्का पड़ा। वे फटी आँखों से गोमती की ओर देखने लगे।

गोमती ने समझ लिया कि चोट ठीक जगह पर हुई है। "भैया! सरला कुलटा है, पापिन है। उसे आपसे नही, आपके पैसे से प्यार है।" गोमगी ने फिर कठोर आघात किया।

इस आघात से बाबू श्यामसुन्दर तिलमिला उठे। वे चीखकर बोले—"गोमती! यह क्या कह रही हो तुम ?"

"अभी आपको विश्वास नही होता मगर जब एक दिन रुपया-पैसा लेकर किसी के साथ भाग जायेगी तब आप समझेगे कि गोमती ठीक कहती

थी। मालूम है कल उसने क्या किया?" कहकर गोमती ने अजीब दृष्टि से बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखा और फिर घृणा से बोली—"कामेश्वर के साथ मुह काला करना चाहती थी। जो अपने भान्जे के साथ . ।"

"चुप रहो।" बाबू श्यामसुन्दर गरज कर बोले। "मै जानता हूँ तुम लोग उसे क्यो बदनाम करने पर तुले हो। मगर मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है।"

बाबू श्यामसुन्दर ने झटके के साथ द्वार खोला और वे बाहर चले गये गोमती अवाक होकर खुले हुये द्वार की ओर देखती रही।

"उसका जादू पूरी तरह चढ़ गया है।" गोमती बुदबुदायी।

बाबू श्यामसुन्दर जिस विश्वास के साथ गोमती के कमरे से बाहर निकले वह स्थिर न रह सका। दिन भर वे बेचैन रहे। गोमती का स्वर उनके कानों मे गूँजता रहा; सरला और कामेश्वर के चित्र उनकी आँखों के सामने घूमते रहे। उनकी दृढता धीरे-धीरे कम होने लगी। उन्हे याद आया—वे एक दिन सरला के साथ माल रोड पर जा रहे थे। पास से दो विद्यार्थी निकले। एक ने कहा—"खूसट को छोकरी तो बढ़िया मिली है।" दूसरे ने उत्तर दिया—"अबे चुप! उसकी बेटी मालूम होती है।" बाबू श्यामसुन्दर के कानों मे दूसरे विद्यार्थी की आवाज फिर गूँजने लगी। उस दिन उसकी बात पर वे मन-ही-मन हँसे थे पर अब वे कुछ और ही सोच रहे थे। सचमुच सरला और उनका क्या जोड है? कहाँ अठारह साल की युवती और कहाँ पैंतालीस साल का प्रौढ! वह तो उनकी पुत्री या पुत्रवधू की अवस्था की है। उसको पत्नी बनाकर जीवन की सबसे बडी भूल की है; उसके साथ भयकर अन्याय किया है। माना, वह उन्हे सच्चे मन से प्यार करता है, गोमती का लॉछन भी झूठा है पर इससे क्या होता है? यौवन और बुढापे का क्या साथ है? एक सुबह का उदय होता हुआ रवि तो दूसरा शाम का अस्त होता हुआ सूरज!

और रात को जब वे घर पहुँचे तब सरला को लगा कि वे काफी थके

हुये हैं। वे ठीक से भोजन भी न कर सके।

खा-पीकर सरला जब कमरे मे पहुँची तब उसने देखा कि बाबू श्यामसुन्दर पलँग पर लेटे हुये निर्निमेष दृष्टि से छत की ओर देख रहे हैं।

"तबियत ठीक नही है क्या।" बाबू श्यामसुन्दर के पास बैठकर उनके मस्तक पर हाथ फेरती हुई सरला ने मीठे स्वर मे पूछा।

"हाँ, हाँ, बहुत थक गया हूँ। बत्ती बुझा दो मुझे नींद आ रही है।" बाबू श्यामसुन्दर ने जमुहाई लेकर कहा। फिर मुह दीवार की ओर करके उन्होंने आँखे बन्द कर ली।

सरला बत्ती बुझाकर जब अपने पलँग पर लेटी तब वह भी बेचैन थी। वह आँसू भरी आँखो से उस अँधेरे मे भी पतिको करवटे बदलते देखती रही। वह सोच रही थी, गोमती ही उनकी परेशानी का कारण है। जब वे लखनऊ से आये थे तब तो प्रसन्न थे। गोमती से बात होने के बाद से ही वे गभीर हैं, उदास हैं, चिन्तित है। न जाने क्या कह दिया है गोमती ने ?

फिर उसने सोचा कि रात को कामेश्वर ने जो धृष्टता की है उससे उन्हे अवगत करा देना चाहिये, नहीं तो सम्भव है उसका साहस बढता जाये। तभी उसकी बुद्धी ने शका की—कही ऐसा न हो कि वे समझे कि मै झूठी शिकायत कर रही हूँ जिससे घर मे फूट पड जाये! उसके मन ने कहा—वे ऐसा कभी नही सोच सकते। उन्हे मुझपर विश्वास है, पूरा विश्वास है।

"मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है। गोमती झूठी है, कामेश्वर झूठा है, सब झूठे है।" उसे बाबू श्यामसुन्दर का धीमा स्वर सुनाई दिया। विद्युत-वेग से उठकर उसने बत्ती जला दी। बाबू श्यामसुन्दर पसीने से तर थे। उनकी आँखे बन्द थी और वे सोते-सोते बडबड़ा रहे थे।

अपने प्रति पति का दृढ़ विश्वास देखकर सरला का हृदय गर्व और हर्ष से भर गया। वह बाबू श्यामसुन्दर के पैरो के पास बैठ गयी भावावेश मे आकर उसने उनके चरणो पर अपना मस्तक नवा दिया और उसकी आँखों से हर्ष के आँसू बहने लगे।

बाबू श्यामसुन्दर ने चौक कर आँखें खोल दीं। सरला को अपने पैरों

पर सिर रखकर रोते देख वे उठकर बैठ गये।

"अरे, रो क्यो रही हो? क्या.... क्या तुम्हे कुछ कष्ट पहुँचा है!" बाबू श्यामसुन्दर ने सरला का मुह ऊपर उठाकर पूछा।

सरला ने उनके पैर कसकर छाती से लगा लिये और वह फूट फूट कर रोती रही।

बाबू श्यामसुन्दर धीरे से अपने पैर खीचने की चेष्टा करते हुये बोले—"तुम्हे क्या हो गया है, सरला?"

"भगवान से प्रार्थना कर रही हूँ कि इन्ही चरणों की छाया मे मेरे प्राण निकले।" सरला ने पैरो को आँखो से लगाकर सिसकते हुये कहा।

बाबू श्यामसुन्दर ने सरला का हाथ पकडकर अपने निकट खीच लिया। अपने हाथ से उसके आँसू पोछे और फिर आर्द्र कठ से बोले—"सच बताना, सरला, तुम्हे यहाँ कोई कष्ट तो नही है? जो...जो कुछ तुमने अपने भाई के लिए किया है उसपर कभी पछताने का अवसर तो नही आया है?"

"नहीं!" सरला ने दृढ़ता से कहा।" विश्वास करिये, मैने जो कुछ किया है उसपर मुझे गर्व है। हाँ, अगर आपको मुझसे कोई शिकायत हो तो बता दीजिये।"

"नही, मुझे तुमसे कोई शिकायत नही है।" बाबू श्यामसुन्दर ने प्यार भरे कठ से कहा।

"आपको न हो, पर मै अपने को अपराधिनी मानती हूँ।" सरला गंभीर स्वर मे बोली। "मैने आपको अधकार में रखकर भारी अपराध किया है।"

बाबू श्यामसुन्दर के हृदय के कोने से आवाज आयी—तब क्या गोमती सच कहती थी? क्या......

"मुझे आपको पहले ही बता देना चाहिए था। बात यह है कि...कि मुझे कामेश्वर का चरित्र अच्छा नही लगता।" तभी सरला बोल पड़ी।

"मुझे पहले से ही मालूम है। अगर वही ठीक होता तो....तो...।"

और वे प्रयत्न करके भी अपनी बात पूरी न कर सके।

"पहले भी कई बार उसने मुझसे हँसी-मजाक करने की चेष्टा की पर मै टालती रही। मगर कल... कल रात को उसका साहस सीमा को पार कर गया। मेरे कमरे मे आकर उसने ...।" सरला ने बाबू श्यामसुन्दर को पूरी बात बता दी। हाँ, कामेश्वर ने शैलजा पर जो लाछन लगाया था उसे उसने गुप्त ही रक्खा।

"ओह! उसकी नीचता यहाँ तक बढ गयी है! अब समझ मे आया।" बाबू श्यामसुन्दर ने धीमे और गभीर स्वर मे कहा। एक क्षण रुककर वे फिर बोले—"जानती हो, गोमती ने मुझसे क्या कहा? उसने तस्वीर का रुख ही बदल दिया। वह तुम्हे दोषी बता रही थी, तुम्हारे चरित्र पर लाछन लगा रही थी।"

"तभी आप चिन्तित थे। शायद आपको मुझ पर सन्देह हो गया था।" सरला ने बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखकर कहा।

"नही! मैने गोमती से कहा कि मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है।" बाबू श्यामसुन्दर ने प्यार से सरला की पीठ पर हाथ फेरते हुये कहा।

"यही आप अभी सपने मे भी कह रहे थे।" कहकर सरला मुस्करा पड़ी।

"अगर तुम पहले ही बता देती कि कामेश्वर तुमसे धृष्टता करता है तो मैने कभी का उसे घर से निकाल दिया होता। कोई बात नही! कल से गोमती और कामेश्वर के लिए इस घर मे जगह नही रहेगी।" बाबू श्यामसुन्दर के स्वर मे निश्चय की दृढता थी।

"इसीलिए तो मै कहना नही चाहती थी। मै नही चाहती कि लोग मुझे परिवार में फूट डालने और कलह करवाने का कलक लगाये।" दुखी स्वर मे सरला बोली।

"और इस घर में रहकर वे लोग न जाने कब क्या कलंक लगा बैठें। नही, उनका यहाँ रहना ठीक नही है। अब सो जाओ! मै भी अब चैन से सो सकूँगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने स्वय बत्ती बुझा दी।

इक्कीस

बम्बई पहुँचकर शकुन, शैलजा और ललित मैरिन ड्राइव पर स्थित एक प्रसिद्ध होटल मे ठहरे। जो फ्लेट उन्होंने किराये पर लिया उसमे दो सोने के कमरे, एक गोल कमरा तथा शौचालय और स्नानगृह था। कमरे खुले हुये और हवादार थे। गोल कमरे की खिडकी से समुद्र की चचल तरगो का मनोहर दृश्य दिखाई देता था। फर्श पर कीमती कालीन बिछे थे, फरनीचर भी कलात्मक था और कमरे मे रेडियो और फोन भी लगा था। ललित तो होटल की शान-शौकत देखकर दग रह गया।

बम्बई की जलवायु भी ललित को बहुत पसन्द आयी। वहाँ कानपुर की तरह भयकर सर्दी न थी। दिन में एक स्वेटर और रात मे एक कम्बल ही काफी था। ललित बम्बई पहली बार ही गया था, इसलिए वहाँ की हर चीज उसके लिए नयी थी।

शैलजा को होटल मे छोडकर शकुन ललित को लेकर नीचे आयी। टैक्सी पर वे एक ऐसी दूकान पर पहुँचे जहाँ सिले-सिलाये कपडे बिकते थे। शकुन ने दूकानदार से ललित के नाप की छः कमीजे और छः पतलूने देने के लिए कहा।

"यह क्या कर रही हो तुम ? मुझे नही चाहिए कपड़े !" ललित ने

धीमे स्वर मे विरोध किया।

"तुम चुप रहो। यह बम्बई है। यहाँ वही मनुष्य समझा जाता है जो अच्छे कपडे पहनता है।" शकुन मन्द स्वर मे बोली। "अगर अच्छे कपड़े नही पहनोगे तो होटल वाले . .. ।"

"समझेगे कि मै नौकर हूँ। ठीक तो है।"

"मगर यहाँ तुम हमारे नौकर नही, साथी हो।" शकुन ने जल्दी से कहा।

दूकानदार ने मर्सरायज्ड पापलेन की छ कमीजे काउन्टर पर रखकर पूछा—"पतलूने समर की दूँ या मक्खनजीन की?"

शकुन ने सोचा मक्खनजीन की अपेक्षा समर की पतलूने ही ठीक रहेगी। उनकी क्रीज भी खराब नही होगी और वे गन्दी भी नही होगी। उसने दूकानदार से कहा—"समर की ही निकाल दीजिये। और हाँ, चार ही काफी होगी।"

एक क्षण बाद ही पतलूने भी काउन्टर पर आ गयी। दूकानदार विनम्रता से ललित की ओर मुडकर बोला—"अन्दर ड्रेसिंग रूम है। आप एक शर्ट और पेन्ट ट्राई कर ले।"

ललित एक कमीज और पतलून लेकर अन्दर चला गया।

"कितना हुआ?" शकुन ने अपना पर्स खोलते हुये पूछा।

दूकानदार ने बिल बनाकर सामने रख दिया। शकुन ने रुपये दे दिये।

ललित जब बाहर आया तो वह नयी कमीज और पतलून पहने था। फिटिंग इतनी अच्छी थी कि कोई भी यह नही कह सकता था कि यह वस्त्र सिले सिलाये लिए गए है। ललित ने पुरानी कमीज और पतलून काउन्टर पर रखकर शकुन से पूछा—"ठीक है?"

"एकदम फिट है। अब यही पहने रहो।" कहकर शकुन वस्त्रो का बंडल उठाने लगी, परन्तु तभी ललित ने मुस्कराते हुये आगे बढ़कर बन्डल उठा लिया।

शकुन ने देखा कि नये वस्त्रो पर ललित के पुराने जूते फब नही रहे है।

उसने ललित के लिए नये जूते भी ले लिये।

टैक्सी जब होटल की ओर चली तब शकुन ने हँसकर कहा—"अब मालूम होता है कि आदमी हो।"

"और अभी तक क्या जानवर था?" ललित ने कृत्रिम रोष और गंभीरता से पूछा।

"शी . .! आदमी को क्रोध नहीं करना चाहिए।"

और फिर दोनो खिलखिला कर हँस पड़े।

शैलजा ने जब ललित को नये वस्त्रो मे देखा तब वह मुस्करा कर बोली—"तुमने तो ललित का काया-कल्प ही कर दिया, जीजी।"

साधारणतया ललित शैलजा की बात का उत्तर नही देता था क्योकि वह उससे डरता था। पर उस दिन वह प्रसन्न मुद्रा मे था और उसकी अभ्यस्त दृष्टि ने यह भी देख लिया था कि शैलजा के स्वभाव मे पहले सी गर्मी नही रही है। इसलिए, इससे पहले कि शकुन कुछ कहे, वह बोल पड़ा—"केवल काया-कल्प ही नही, मन का कल्प भी कर दिया है।"

शैलजा खिलखिला कर हँस पड़ी। ललित ने उसका साथ दिया। बिचारी शकुन संकुचित होकर दूसरे कमरे मे भाग गयी।

रात को भोजन के उपरान्त शैलजा तो सोने के कमरे में चली गयी परन्तु शकुन और ललित गोल कमरे में ही बैठे रहे। खिड़की खुली हुई थी और समुद्री हवा के ठंडे झोंके ललित को बहुत भले लग रहे थे। रेडियो से कोई नाटक प्रसारित हो रहा था। ललित आँखें बन्द किये नाटक को ध्यान से सुन रहा था।

"जीजी, रेडियो बन्द कर दो। मुझे नीद लगी है।" दूसरे कमरे शैलजा का स्वर आया।

शकुन ने रेडियो बन्द कर दिया ललित ने आखें खोल दीं। "आओ बालकनी मे बैठ कर समुद्र को देखे।" शकुन ने उठकर कहा।

दोनों बालकनी मे कुर्सियाँ डाल कर बैठ गये। उस चाँदनी रात में ललित को समुद्र का दृश्य अत्यन्त रोमाचकारी लगा।

"ललित, तुम जानते हो मुझे तुमपर पूरा भरोसा है शकुन ने ललित की ओर देखे बिना ही धीमे स्वर मे कहा। मुझे विश्वास है तुम मुसीबत मे हमारी सहायता करोगे।"

शकुन की अटपटी बात सुनकर ललित ने अपनी दृष्टि समुद्र की लहरों से हटाकर शकुन के चेहरे पर जमा दी और फिर कृत्रिम गभीरता से पूछा—"कौन सी मुसीबत आ पड़ी है तुम पर ?"

"मै बम्बई क्यों आयी हूँ, जानते हो ?" शकुन ने अपनी दृष्टि समुद्र की ओर ही रक्खी।

"मन बहलाने और पेसा बहाने के लिए।"

"नही, यह बात नही है।" इस बार शकुन ने अपनी दृष्टि ललित की ओर करके कहा।" हम मुसीबत मे फँस गयी है और उससे छुटकारा पाने के लिये हमे तुम्हारी मदद की जरूरत है। मदद करोगे न ?"

"अगर विश्वास न था तो मुझे लायी ही क्यों ?" ललित ने अपनी आँखे समुद्र की ओर करके पूछा।

"तुम ठीक कहते हो ! मुझे तुम पर पूरा विश्वास था तभी तो तुम्हें लायी हूँ। बात यह है.... ! ओह, कैसे कहूँ, कुछ समझ मे नही आता !". शकुन परेशानी के स्वर मे बोली। "ललित, शैलजा बहुत भारी भूल कर बैठी है। नहीं, इसमे दोष उसका नही है, दोष कामेश्वर का है। पुरुष के पाप का फल नारी को भोगना पड़ रहा है।"

शकुन की बात सुनकर ललित हड़बडा गया। वह धीमे स्वर मे बोला—"यह क्या कह रही हो तुम ?"

"ललित, अगर यह बात खुल गयी तो हमारे वश और नाम पर धब्बा लग जायेगा। इसीलिए मै उसे यहाँ ले आयी हूँ।" अपनी कुर्सी ललित की कुर्सी के निकट खीचकर शकुन बोली। यहाँ उसका अबारशन...।"

"लेकिन....लेकिन यह तो पाप है....।" ललित बीच में ही बोला।

"एकपाप को छिपाने के लिए दूसरा पाप करना ही पड़ेगा। और कोई चारा ही नही है। हमारी प्रतिष्ठा, हमारा सामाजिक मान दाँव पर है।"

शकुन व्यग्रता से बोली।

"प्रतिष्ठा सामाजिक मान।" ललित व्यग्य से बोला। "अगर पहले ही इनका ध्यान रक्खा होता तो . ।"

"बहस करने से काम नही चलेगा। तुम्हे मदद करनी ही पडेगी, मेरे लिए!" शकुन का स्वर अवरुद्ध हो गया।

ललित कुछ देर तक शकुन की ओर देखता रहा और फिर धीमे स्वर मे बोला--"जो कुछ करूँगा, तुम्हारे लिए ही करूँगा। शैलजा जैसी गर्वीली लडकी .. ।"

"उसका गर्व चूर-चूर हो गया है, ललित।" शकुन बीच मे ही बोली। उसे इस समय क्रोध नही, दया चाहिए; घृणा नही, सहानुभूति चाहिए। अगर तुमने मेरी मदद न की तो वह जहर खा लेगी।

"बोलो, क्या करना है मुझे ?" कुछ देर मौन रह कर ललित ने मन्द स्वर मे पूछा।

"अभिनय।" कहकर शकुन ने अपनी योजना उसे बता दी।

"परन्तु.....।" पूरी बात सुनकर ललित ने शका की।

"तुम वचन दे चुके हो।" शकुन ने मुस्करा कर कहा।

× × ×

दूसरे दिन सुबह जब सब लोग चाय पी चुके तब वेटर ने सूचित किया कि टैक्सी आ गयी है। सूचना देकर वेटर चला गया।

"जाओ, ललित!" शकुन ने कहा और फिर शैलजा की ओर मुड़कर बोली, "मैने ललित को समझा दिया है। जाओ। सब ठीक हो जायेगा।"

शैलजा पानी-पानी हो गयी। जिस ललित का उसने सदा अपमान किया, जिसे उसने कभी नौकर के अतिरिक्त और कुछ नही समझा, उसी ललित के सामने उसकी दृष्टि झुक गयी।

"जीजी, तुम नही....।" शैलजा ने मन्द स्वर मे कहा।

"मेरा जाना ठीक नही। तुम जाओ ललित के साथ। घबराओ मत। चलो, नीचे तक छोड़ आऊँ तुम लोगों को।" कहकर शकुन ने शैलजा

का हाथ पकड़ लिया।

पिछली सीट पर शैलजा और ललित बैठ गये। टैक्सी चल दी। शकुन फिर कमरे मे आ गयी।

"आपको जीजी ने सब कुछ....।" जब टैक्सी कुछ दूर निकल गयी तब शैलजा ने रुँआसे स्वर मे कहा, पर वह अपना वाक्य पूरा न कर पायी।

ललित ने धीरे से सिर हिला दिया।

"आपको मुझसे नफरत हो गयी होगी।" आँखो मे आँसू भरकर शैलजा बोली।

"मै पापी से नही, पाप से घृणा करता हूँ।" ललित धीमे स्वर मे बोला।

शैलजा सडक की ओर देखने लगी।

टैक्सी लेडी डाक्टर मिस दमयन्ती दामले की क्लीनिक के सामने रुक गयी। ललित ने टैक्सी का मीटर देखकर पैसे दे दिये। दोनो दवाखाने मे पहुँचे।

दैवात् उस समय क्लीनिक मे लेडी डाक्टर तथा उसकी नर्स के अतरिक्त और कोई न था। ललित ने मन-ही-मन भगवान को धन्यवाद दिया।

"डाक्टर, मुझे आपसे कुछ राय लेनी है।" ललित ने शैलजा को अपने पास बिठाकर कहा।

"वेल! माई कन्सल्टेशन फी इज टेन रुपीज।" लेडी डाक्टर ने ललित को सूचित किया और फिर उसने नर्स की ओर देखा। नर्स दूसरे कमरे मे चली गयी।

"ठीक है। लेकिन कन्सलटेशन के अलावा मुझे आपसे और भी काम लेना है।" ललित मुस्कराकर बोला, "आप तो जानती है कि हमारे देश को आजकल फेमिली प्लैनिंग की कितनी जरूरत है।"

"यस, यस! आप फेमिली प्लैनिग के बारे मे राय लेना चाहते है?"

"वह तो बाद की बात है, डाक्टर! अभी तो. ..।" बोलते-बोलते ललित रुक गया और फिर धीमे स्वर मे बोला। "हम लोगो की शादी तीन महीने पहले हुई है। शी इज माई वायफ।"

ललित की बात सुनकर शैलजा चौक पडी। शकुन ने उसे यह तो बताया नही था कि उन्हे पति-पत्नी का अभिनय करना पडेगा। उसने ललित की ओर अजीब दृष्टि से देखा। ललित ने लेडी डाक्टर की दृष्टि बचाकर उसका हाथ दबा दिया। शैलजा उसके सकेत को समझ गयी। उसने दृष्टि झुका ली।

"यू हैव अ चार्मिग वायफ।" लेडी डाक्टर ने शैलजा और ललित को प्रसन्न करने के लिए कहा।

"थैंक्स!" ललित ने उत्तर दिया। "हम सोच ही रहे थे कि किसी फेमिली प्लेनिग सेन्टर मे जाये मगर.... मगर.... यू नो, मैन प्रपोजेज, गाड डिस्पोजेज।"

"ओह, समझी!" हँसकर लेडी डाक्टर बोली।

"अब आपही बताइये, इतनी जल्दी माँ-बाप बनना कहाँ तक ठीक है? मै कई दिनो से इनसे कह रहा था कि डाक्टर के यहाँ चलो, वे सब ठीक कर देगी। मगर आप तो जानती है कि माँ का दिल कैसा होता है। बहुत मुश्किल से आज राजी हुई है आने के लिए। अब आप हमारी मदद कीजिये।"

"डाक्टर का काम ही मदद करना है। लेकिन आप जानते है, यह काम खतरे का है। अगर जरा भी बात लीक हुई तो आप भी थाने मे जायेगे और हमारा लायसेन्स भी कैन्सिल हो जायेगा।" लेडी डाक्टर ने आगे झुककर धीमे स्वर मे कहा।

"मै तो आपके पास बहुत आशा लेकर आया था, डाक्टर!" ललित ने उदास होकर कहा और उसके चेहरे पर भारी निराशा का भाव उभर आया।

"लेकिन फिर भी तुम्हारी मदद करना चाहती हूँ। यू आर अ यग

कपुल।" लेडी डाक्टर कुछ सोचती हुई बोली। "मै तुम्हारी मदद करूँगी। मगर.... मगर मै पाँच सौ रुपया लूँगी।"

"पाँच सौ!" ललित आश्चर्य से बोला। 'दिस इज टू मच, डाक्टर।"

"सौ रुपया नर्स को देना पडेगा। यू सी, टु क्लोज हर माउथ। मुझे सिर्फ चार सौ बचेगा। ऐन्ड दिस इज नथिंग फार सच अ बिग रिस्क! बोलो, तैयार हो?" लेडी डाक्टर ने उत्सुकता से पूछा।

"और कोई चारा भी नही है।" कहकर ललित ने सौ-सौ के पाँच नोट जेब से निकालकर लेडी डाक्टर की ओर बढ़ा दिये।

लेडी डाक्टर ने रुपये लेकर अपने बैग मे रख लिये और फिर मुस्कराकर बोली—"तुम्हारी वायफ की माँग भी सूनी है और पैर भी।"

ललित काँप गया। शैलजा भी डर गयी। अगर उसे पहले ही शकुन ने बता दिया होता तो वह माँग मे सिन्दूर लगा लेती! अब क्या हो?

"हम लोग काश्मीरी ब्राह्मण है।" ललित ने स्वर को स्वाभाविक रखने की चेष्टा करते हुये उत्तर दिया। "हमारे यहाँ सिन्दूर और बिछुये का चलन नही है।"

ललित की बात सुनकर लेडी डाक्टर फिर मुस्करायी। उसने ललित की घबराहट देखकर हँसते हुये कहा—"डोन्ट फियर! हमे पैसे से मतलब है।"

ललित ने उसकी बात का कोई उत्तर नही दिया।

"नर्स!" लेडी डाक्टर ने ऊँचे स्वर मे पुकारा। और जब नर्स आ गयी तब बोली—"इन्हे अन्दर ले चलो।"

नर्स शैलजा के पास आकर खड़ी हो गयी। शैलजा ने कातर और भीत दृष्टि से ललित की ओर देखा।

"अन्दर जाओ, शैल! घबराओ मत! डाक्टर पर भरोसा रक्खो? मै यही रहूँगा।" ललित ने शैलजा की पीठ थपथपा कर कहा।

शैलजा जब खडी हुई तब वह काँप रही थी।

"बी ब्रेव, माई गर्ल।" लेडी डाक्टर ने मीठे स्वर में कहा। "तीन-

चार घंटे बाद तुम मजे से घर चली जाना।" फिर ललित की ओर मुड़कर बोली—"आप तब तक यहीं वेट करेंगे, मिस्टर... ! अरे, मैंने आपका नाम तो पूछा ही नहीं।"

"प्रकाश। और वायफ का नाम है किरण।" ललित बहुत सफाई से स्वाभाविक स्वर में झूठ बोल गया।

"लवली नेम्स।" कहकर लेडी डाक्टर शैलजा को अन्दर ले गयीं।

नर्स ने ललित की ओर मदभरी, मुस्कराती हुई आँखो से देखा और फिर वह भी अन्दर चली गयी।

ललित बेचैनी से बाहर के कमरे मे प्रतीक्षा करता रहा।

और जब दोपहर के बाद ललित और शैलजा होटल पहुँचे तब थोड़ी दुर्बलता के अतिरिक्त शैलजा पूर्णतया स्वस्थ थी। शैलजा को देखकर ही शकुन समझ गयी कि उनके बम्बई आने का उद्देश्य पूरा हो गया है। वह प्रसन्न हो उठी और उसने आँखों के द्वारा ललित को धन्यवाद देकर अपनी हार्दिक कृतज्ञता जता दी।

तीन-चार दिन मे शैलजा की दुर्बलता भी दूर हो गयी। उसके चेहरे पर फिर गुलाबी पन आ गया। उसकी आँखों में फिर उत्साह और उमगो की ज्योति आ गयी।

शकुन ने सोचा कि इतनी जल्दी लौटकर जाना ठीक नही। जब बम्बई आये हैं तो अच्छी तरह घूम ही लिया जाये। तब तक शैलजा और भी ठीक हो जायेगी।

बम्बई मे घूमने-फिरने के स्थानों की क्या कमी ? वे लोग कभी चौपाटी की सैर करते, कभी जुहू-तट का आनन्द लेते; कभी हैंगिंग गार्डेन से; कभी कमलानेहरू पार्क से; बम्बई नगरी की छटा निहारते, और कभी मैरिनड्राइव पर ही चहल कदमी करते।

ललित के लिए सभी स्थान नये थे। उसे घूमने-फिरने मे बहुत आनन्द आता। शैलजा के प्रति उसके हृदय में जो मैल था वह धीरे-धीरे धुल गया। वह सोचता शकुन ठीक ही कहती है। शैलजा को क्रोध और घृणा नही,

दया और सहानुभूति चाहिए। जिस शैलजा से वह घबराता था, उसी से वह घुल-मिल गया।

एक दिन शैलजा हँसी-हँसी मे बोली—"मैने आपको बहुत भला-बुरा कहा है। कई बार अपमान कर चुकी हूँ आपका। और आपने मुझे क्षमा कर दिया। मै तो समझती थी आप जीवन भर क्षमा नही करेगे।"

शकुन उस दिन अकेले ही घूमने चली गयी थी।

"मै यह सिद्ध करना चाहता हूं कि पुरुष मे नारी की अपेक्षा अधिक क्षमाशीलता होती है। मै यह भूल गया हूँ कि आपने मेरे साथ क्या-क्या किया है, पर पर आपके साथ जो व्यवहार हुआ है क्या आप उसे भूल सकती है?"

ललित की बात से शैलजा का घाव हरा हो गया। उदासी की घटा उसके मुख पर छा गयी। दृष्टि फर्श पर गडाकर वह धीमे स्वर मे बोली—"शायद कभी नही।" और फिर वह उठकर दूसरे कमरे मे चली गयी।

ललित ने सोचा कि बेकार ही शैलजा के दिल को दुखाया। आत्म-ग्लानि से उसका मन भर गया। शैलजा से क्षमा माँगने के लिए वह उसके कमरे मे गया। उसने देखा, वह पलँग पर पडी, तकिये मे मुह छिपाये सिसक सिसक कर रो रही है।

"मुझे माफ कर दीजिये।" कुर्सी पर बैठकर दुखी स्वर मे ललित बोला।

शैलजा उठकर बैठ गयी। आचल से आँसू पोंछकर सिसकती हुई बोली—"आप भी पुरुष है, इसलिए नारी के मन की व्यथा नही समझ सकते। मेरे साथ जो कुछ हुआ है उसने मेरे मन मे पुरुष जाति के प्रति अविश्वास, भय और घृणा भर दी है।"

"सारी पुरुष जाति के प्रति?" ललित के स्वर में शरारत थी।

"डैडी और आपको छोडकर।"

ललित खिखिलाकर हँस पडा। शैलजा की आँसू भरी आँखों को भी हँसना पड़ा।

"और कमल?" ललित ने गूढ दृष्टि से शैलजा की ओर देखकर पूछा।

"कवि का हृदय पुरुष का नही, नारी का होता है।" शैलजा का उत्तर था।

उसी समय आ गयी शकुन। उसके हाथ मे एक साप्ताहिक पत्र की प्रति थी। आते ही वह आवेश से बोली—"प्रोफेसर इन्द्र तो कमल के जानी दुश्मन बन गये है।"

"क्या हुआ?" ललित और शैलजा के मुख से एक साथ निकल गया।

"उसके सग्रह की आलोचना की है। सिवाय गालियो के और कुछ है ही नही। लो, पढ लो।" कहकर उसने पत्र की प्रति ललित की ओर बढा दी।

ललित जोर-जोर से पढने लगा। आलोचना काव्य की कम और व्यक्ति की अधिक थी। शैलजा और ललित को भी बुरा लगा।

"जीजी, हमें घर चलना चाहिए।" शैलजा ने गभीर होकर कहा।

"हम आज रात की गाड़ी से चल देंगे। बिचारे कमल की क्या दशा हुई होगी आलोचना पढकर?" शकुन बोली।

"कमल इन छोटी-छोटी बातो से घबराने वाला नही ह। मै जानता हूँ, उसने हँसकर टाल दिया होगा।" ललित ने विश्वासपूर्वक कहा।

"मुझे प्रोफेसर इन्द्र से घृणा हो गयी है।" शैलजा ने मुह बिगाडकर कहा।

"होनी ही चाहिए। आखिर वे भी है तो पुरुष ही।" ललित ने शरारत भरे स्वर में कहा और फिर सामान बाँधने के लिए वेटर को बुलाने के उद्देश्य से उसने कमरे मे लगी हुई बिजली की घटी का बटन दबा दिया।

बाइस

जिस जगली पशु की दाढ़ मे मनुष्य के रक्त की एक बूंद भो लग जाती है वह धीरे-धीरे नरभक्षी बन जाता है। फिर वह मनुष्य का शिकार केवल भूख मिटाने के लिए ही नही करता वरन् शौक के लिए भी करने लगता है। उसे मनुष्य को मारने मे अतीव आनन्द का अनुभव होने लगता है और स्थिति यहाँ तक पहुँच जाती है कि उसे मनुष्य दिखाई भर दिया कि उसने झपटकर उस पर आक्रमण कर दिया।

कामेश्वर की दशा भी एक नरभक्षी जगली जानवर की तरह ही थी। नारी के माँस का स्वाद उसकी जीभ पर चढ गया था। जब वह बाबू श्यामसुन्दर के साथ रहता था तब खर्चे की छूट थी और इसलिए वह छल और धन के बल से अपनी भूख मिटाने की चेष्टा करता रहता था। पर जब से वह गोमती के साथ अलग रहने लगा तब से स्थिति बदल गयो। बाबू श्यामसुन्दर गोमती को दो सौ रुपये मासिक देते थे। कामेश्वर को जेब खर्च के लिए केवल पन्द्रह रुपये मिल पाते थे। पन्द्रह रुपयों मे वह न तो बोतल मे बन्द आग से अपनी प्यास बुझा सकता था और न इतने साधन ही जुटा सकता था कि नारी के माँस से अपनी भूख मिटा सके। जो लड़कियाँ उससे प्यार का दावा करती थी, वे आँखे फेरने लगी।

जिन नर्सो को उसने पिक्चर दिखाये थे, अमूल्य उपहार दिये थे और जिनका वह 'डार्लिंग' था वे ही उससे कतराने लगी। कामेश्वर के हृदय पर इन बातो का बहुत दुखद प्रभाव पड़ा। वह अर्ध विक्षिप्त सा हो गया।

एक दिन वह घर मे अकेला ही था। गोमती फूल बाग मे होनेवाले कीर्तन मे सम्मिलित होने गयी थी। लेटा-लेटा कामेश्वर अपने अतीत और वर्तमान के विषय मे सोच रहा था। उसी समय किसी ने बाहर से द्वार खटखटाया। कामेश्वर ने उठकर द्वार खोल दिया। महरी एक साँवली सी युवती के साथ अन्दर आ गयी।

"आज बहुत जल्दी आ गयी।" कामेश्वर ने महरी से कहा।

"हाँ बाबू, आज एक ज्योनार माँ जाये का है। याही से जल्दी है। हम दूसर घर माँ काम करै जाइत है। हमार बिटिया इहाँ कर दिहै।" कहकर महरी बाहर चली गयी।

महरी की बेटी नल के नीचे बैठकर बर्तन माँजने लगी।

कामेश्वर कमरे मे आ गया। उसका दिल बेचैन हो रहा था। उसकी प्यास जाग गयी थी, भूख अँगडाई ले रही थी। महरी की लडकी थी तो साँवली, पर जवान थी और शरीर की गठन भी अच्छी थी। कामेश्वर का शरीर काँपने लगा, उसकी आँखो से वासना की जलती चिनगारियाँ निकलने लगी।

"अरे, दरवाजा बन्द कर दे। तू बर्तन माँजती रहेगी और कोई घुसकर सामान ले जायेगा।" कामेश्वर ने अन्दर से ही ऊँचे स्वरमे कहा।

कामेश्वर ने द्वार बन्द होने और कुडी लगने की आवाज सुनी। उसके हृदय की गति बहुत तेज हो गयी।

"एक गिलास पानी दे जा।" कामेश्वर ने भर्राये स्वर में कहा और फिर वह पलँग पर बैठ गया।

एक क्षण बाद ही लडकी जल लेकर आ गयी। दृष्टि नीची करके उसने गिलास मेज पर रख दिया और फिर जाने लगी।

"तुझे यह भी नही मालूम कि पानी हाथ मे देना चाहिए ।" कामेश्वर बोला ।

वह बिचारी लौट आयी और उसने गिलास उठाकर कमेश्वर की ओर बढा दिया ।

कामेश्वर ने गिलास न लेकर उसका हाथ पकड लिया। गिलास छूटकर फर्श पर गिर पडा और पानी से फर्श भीग गया।

भूखे मकडे के जाल मे फँसकर यदि मक्खी निकल जाये तो ससार का आठवाँ आश्चर्य होगा।

भूखे पुरुष से दुर्बलनारी भी अपनी रक्षा न कर सकी और जब पुरुष न नारी के हाथ मे जबरदती दो रुपये का लाल नोट ठूँस दिया तब वह समझा कि नारी अपने अस्पमान की बात भूल जायेगी, अपने लुटने की व्यथा अपने तक ही सीमित रक्खेगी।

पर ऐसा हुआ नही। कामेश्वर शायद यह नही जानता था कि छोटे लोगो की इज्जत पर डाका डालने का युग अब नही रहा है। लडकी ने लपने लुटने की करुण कहानी सिसक-सिसक कर अपनी माँ से कही। माँ की आँखों से अगार निकलने लगे। हम गरीब है इससे क्या ? हमारी भी इज्जत है, आबरू है ! और फिर वह अपनी अभागिन बेटी को लेकर पुलिस चौकी पहुँची। रिपोर्ट दर्ज कर ली गयी।

लडकी की डाक्टरी जाँच हुई और जब जाँच से यह सिद्ध हो गया कि उसके साथ बलात्कार हुआ है तब पुलिस कामेश्वर को बन्दी बनाने के लिये चल दी।

जिस समय पुलिस कामेश्वर को बन्दी करके लिये जा रही थी उसी समय गोमती फूलबाग से वापस आ गयी। कामेश्वर को पुलिस की हिरासत मे देखकर चीखती हुई बोली—"कहाँ लिये जा रहे हो मेरे बेटे को ? क्या किया है उसने ?"

"महरी की बेटी के साथ मुह काला किया है।" एक सिपाही ने कडे स्वर में कहा।

गोमती ने साश्रु नयनो से कामेश्वर की ओर देखा। उसने दृष्टि झुका ली। माँ से दृष्टि मिलाने का साहस उस समय बेटे मे नही था।

पुलिस कामेश्वर को लेकर चली गयी।

गोमती ने घर का ताला बन्द किया और फिर रिक्शा करके बाबू श्यामसुन्दर के बँगले की ओर चल दी।

बाबू श्यामसुन्दर लेटे हुये थे। सरला उन्ही के पास बैठी थी। वह उन्हें प्रोफेसर इन्द्र की आलोचना पढकर सुना रही थी। गोमती को देखकर बाबू श्यामसुन्दर उठकर बैठ गये। गोमती की घबराहट सरला से भी छिपी न रही क्योकि वह बुरी तरह हाँफ रही थी और आँखों में आँसू की बूँदे थीं।

"क्या बात है ?" बाबू श्यामसुन्दर ने घबरा कर पूछा।

"भैया, कामेश्वर को पुलिस ले गयी है। उसे छुडा लो, भैया, उसे छुड़ा लो।" गोमती रोती हुई बोली।

"पुलिस ले गयी है ?" बाबू श्यामसुन्दर की त्योरी चढ़ गयी। "क्यों ?"

"क्या कहूँ, भैया! मै तो इस कपूत से तंग आ गयी हूँ। अगर होते ही मर गया होता तो अच्छा था।" कहकर गोमती फिर सिसकने लगी।

"कुछ बताइये तो! क्या बात हुई ?" सरला ने व्यग्रता से पूछा।

"मै तो फूल बाग गयी थी। उसने महरी की लड़की....।" और गोमती अपना वाक्य अधूरा छोड़कर सुबकती रही।

बाबू श्यामसुन्दर चिन्तित हो उठे। सरला गंभीर हो गयी।

"जैसा किया है वैसा भोगे।" बाबू श्यामसुन्दर के स्वर में घृणा थी। "वह आदमी नहीं, जानवर है। मै कुछ नही कर सकता।"

गोमती दहाड मारकर रोने लगी।

सरला का नारी-हृदय पिघल गया। वह धीमे स्वर मे बोली—"कामेश्वर अच्छा है या बुरा, पर है तो अपना ही। आप अभी जाकर उसे छुडा लाइये।"

"नहीं मैं कुछ नहीं कर सकता। पापी को पाप की सजा मिलनी ही चाहिए।" बाबू श्यामसुन्दर दृढ स्वर मे बोले।

"मगर इसमे बदनामी आपकी भी होगी।" सरला ने समझाते हुये कहा। "समाचार-पत्र वाले साथ मे आपका नाम भी सानेगे।"

बाबू श्यामसुन्दर को सरला की बात ठीक जँची। अखबार को तो मसाला चाहिए। वे उन पर छीटाकशी करने मे कभी नही चूकेंगे। बाबू श्यामसुन्दर ने सरला की ओर देखा। उनका विरोध ढीला पड़ गया था।

"देर न कीजिये। अभी कामेश्वर पुलिस चौकी में ही होगा।" कहकर सरला ने बाबू श्यामसुन्दर की ओर आग्रह भरी दृष्टि डाली।

बाबू श्यामसुन्दर ने वस्त्र बदले। नोटों की एक मोटी गड्डी जेब मे डालकर वे कार पर बैठकर रवाना हो गये।

उनके जाने के बाद गोमती कृतज्ञ स्वर में बोली—'भाभी! मैं तुम्हारा उपकार सदा याद रक्खूंगी।"

सरला ने ऊँचे स्वर मे महराजिन से चाय दे जाने के लिए कहा।

"मुझसे चाय-वाय नही पी जायेगी, भाभी।"

"आप घबराये नही। सब ठीक हो जायेगा।" सरला ने सान्त्वना देते हुये कहा।

"मेरा तो भाग्य ही खोटा है। आज वे होते तो......।" गोमती की आँखों मे स्वर्गीय पति की स्मृति आँसू बनकर छा गयी। "एक लडका है वह भी कपूत निकला।"

गोमती रोने लगी और सरला उसे समझाती रही।

× × ×

बाबू श्यामसुन्दर की कार जब पुलिस चौकी के सामने रुकी तब एक सिपाही ने आगे बढकर द्वार खोला। बाबू श्यामसुन्दर उतर पडे।

"हुजूर, कैसे तकलीफ की?" सिपाही ने आदर से पूछा।

"ऐसे ही इन्सपेक्टर साहब से मिलने चला आया।" कहकर वे आगे बढ गये।

पुलिस इन्सपेक्टर ने उन्हे आदर से कुर्सी दी और कष्ट करने का कारण पूछा।

"क्या बताऊँ, भाई।" बाबू श्यामसुन्दर निश्वास छोडकर बोले। "कामेश्वर के बारे मे बात करने आया हूँ। वह मेरा भान्जा है।"

"अच्छा! मुझे मालूम नही था वरना रिपोर्ट ही दर्ज न करता। मगर वह तो दूसरे घर मे रहता है।" इन्सपेक्टर ने गूढ दृष्टि बाबू श्यामसुन्दर की ओर डालकर कहा।

"कुछ दिन पहले हमारे साथ ही रहता था। खैर, मै चहाता हूँ वह बे दाग छूट जाये।" कहकर उन्हो ने नोटो की गड्डी मेज पर रख दी।

इन्सपेक्टर ने ललचायी आँखो से गड्डी की ओर देखा और फिर हाथ मलकर बोला—"मै तो आप लोगो का सेवक हूँ। आप कामेश्वर को ले जाइये। मै डाक्टर को भी साध लूँगा और यहाँ की रिपोर्ट भी नष्ट कर दूँगा।"

"बहुत बहुत धन्यवाद! मगर केस यही दब जाना चाहिए।"

"आप विश्वास रक्खे।" कहकर इन्सपेक्टर ने नोटों की गड्डी जेब मे रख ली। और फिर ऊँचे स्वर मे कहा—"कामेश्वर बाबू को ले आओ।"

"अगर महरी ने चिल्ल पो मचायी तो... ..।"

"आप किसी बात की फिक्र न करे। उस साली को मैं ठीक कर दूँगा।" इन्सपेक्टर ने निश्चय पूर्वक कहा।

कुछ देर बाद जब कार पुलिस चौकी से रवाना हुई तो बाबू श्यामसुन्दर के साथ कामेश्वर भी बैठा था। वह बहुत लज्जित मालूम होता था। उसकी दृष्टि झुकी हुई थी और आँखो मे आँसू की बूँदे थी।

"मै तो चाहता था कि तुम्हे अपने कर्मो का फल मिले, पर सरला के जोर देने पर आना पड़ा।" बाबू श्यामसुन्दर ने बहुत धीमे स्वर में कहा।

कामेश्वर ने न तो दृष्टि ही उठायी और न कुछ बोला ही।

बाबू श्यामसुन्दर ने कार पोर्टिको मे रोक दी। वे नीचे उतर कर

कामेश्वर से बोले—"अन्दर गोमती तुम्हारी राह देख रही है। आओ मेरे साथ।"

कामेश्वर उतर कर उनके साथ चल दिया। कमरे मे पहुँचते ही उसकी दृष्टि सरला पर पडी। दौडकर उसने सरला के पैर पकड़ लिये और आँखो से आँसू की धार बहाता हुआ बोला—"मामीजी, आप देवी है। मै पापी हूँ, जानवर हूँ। मुझे क्षमा नही, दड दीजिये, कठोर से कठोर दड दीजिये।"

उसका हाथ पकड कर सरला ने उसे अपने पास बिठाया। वह ममता भरे स्वर मे बोली—"तुम्हें अपने किये पर प्रायश्चित हो रहा है, यही क्या कम है? बीती बातो को भूल जाओ, भाई। अब आदमी बनने की कोशिश करो।"

"मैने आप पर झूठा लॉछन लगाया। मै आपको मुह दिखाने लायक नहीं हूँ।" कहकर कामेश्वर दोनों हाथों से मुह छिपाकर रोने लगा।

बाबू श्यामसुन्दर दूसरे कमरे में चले गये।

"चलो बेटा, घर चलो।" गोमती ने उठकर भीगे स्वर मे कहा।

कामेश्वर उठकर खडा हो गया। उसने झुक कर सरला के पैर छुये और फिर दुखी स्वर मे बोला—"शैलजा के बारे मे आपसे जो कुछ मैंने कहा था वह भी झूठ था, मामी जी। मै आप लोगो की क्षमा का नहीं, घृणा का पात्र हूँ।"

कामेश्वर अपनी बात पूरी करके तेजी से बाहर निकल गया। गोमती उसके पीछे चल दी।

सरला उठकर बाबू श्यामसुन्दर के पास गयीं। उसे देखकर वे बोले—"कामेश्वर गया? मै तो डरता था कि कही तुम उसे फिर यही न बुला लो।"

"मैं आपसे यही कहने आयी हूँ। वह अपने किये पर पछता रहा है। अब उन लोगो को यही बुला लीजिये।" सरला मीठे और अनुरोध भरे स्वर में बोली।

"साँप को दूध पिलाना ठीक नही। वह अपना स्वभाव नही छोड़ सकता।" बाबू श्यामसुन्दर ने विरोध किया।

सरला उदास हो गयी।

दूसरे दिन सुबह गोमती फिर आयी। वह घबरायी हुई थी। उसने बाबू श्यामसुन्दर को बताया कि कामेश्वर उसके आभूषण और रुपये लेकर कही चला गया है।

"उसका यहाँ से चला जाना ही ठीक था। कही जाकर वह नया जीवन शुरू करेगा।" बाबू श्यामसुन्दर सन्तोष की साँस लेकर बोले।

"हाय, मै तो लुट गयी, भैया!" गोमती बिलख कर बोली।

"अब तुम्हें अलग रहने की जरूरत नही है, गोमती। नौकरों को ले जाकर अपना सामान यही उठवा लाओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"भैया, अब मै यहाँ रहकर क्या करूँगी? मुझे काशी भेज दो। बाबा विश्वनाथ के चरणों मे पड़ी रहूँगी।" गोमती ने आँखों के आँसू पोछते हुये कहा।

"जैसी तुम्हारी इच्छा। मै काशी मे रहने का प्रबन्ध कर दूँगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर बाहर चले गये।

सरला बाबू श्यामसुन्दर और गोमती की बाते मौन रहकर सुन रही थी। जब बाबू श्यामसुन्दर चले गये तब वह गोमती का हाथ पकड़ कर बोली—"आप मुझे ऐसे समय मे छोड़कर जा रही है जब मुझे आपकी सबसे ज्यादा जरूरत है।"

गोमती पहले तो सरला की बात समझ न सकी। उसने गूढ़ दृष्टि सरला के मुख पर डाली और फिर उसके पेट की ओर देखकर बोली—"क्या कुछ...।"

सरला ने लजाकर सिर झुका लिया।

"तब तो मै अभी नहीं जाऊँगी।" गोमती प्रसन्न होकर बोली। "मै जाती हूँ अपना सामान लाने। लेकिन भाभी, एक शर्त है!"

गोमती ने उठकर मुस्कराते हुये सरला की ओर देखा।

"क्या ?" धीमे स्वर मे सरला ने पूछा।

"मुझे भतीजी नहीं, भतीजा चाहिए।" कहकर गोमती बाहर चली गयी।

सरला के कपोलों पर किसी अदृश्य तूलिका ने गुलाबी रग पोत दिया।

तेइस

बम्बई से प्रस्थान करने से पहले शकुन ने तार द्वारा रायबहादुर को अपने पहुंचने की सूचना दे दी थी। जब वे लोग कानपुर पहुचे तब स्टेशन के बाहर कार उनकी प्रतीक्षा कर रही थी।

रास्ते में शकुन ने कहा—"क्यों न पहले कमल के घर ही चला जाये!"

ललित को शकुन का प्रस्ताव पसन्द आया। वह भी कमल से मिलने के लिए आकुल हो रहा था। उसने ड्रायवर को आदेश दिया कि कार राममोहन के हाते की ओर ले चले! कुछ देर बाद ही कार राममोहन के हाते के फाटक के सामने पहुंच कर रुक गयी।

शकुन और ललित कार से उतर पड़े। शैलजा अन्दर ही बैठी रही।

"तुम नहीं चलोगी, शैल?" शकुन ने पूछा।

"मैं यहीं बैठी हूं। तुम हो आओ।" शैलजा बोली।

"आओ भी।" ललित ने आग्रह किया।

शैलजा कार से उतर पडी। तीनों फाटक के अन्दर घुसे।

कमल के मकान के सामने पहुचर ललित ने आवाज दी। अन्दर से एक अधेड़ व्यक्ति बाहर आया।

"कमल जी हैं क्या?" ललित ने पूछा।

"कौन कमल जी?" अधेड़ व्यक्ति ने प्रश्न किया।

"आपके यहाँ रहते थे न! कवि है।" ललित ने आगे बढकर कहा।

"हम लोग तो इस मकान मे इसी हफ्ते आये है।" कहकर वह व्यक्ति अन्दर जाने लगा।

"सुनिये तो। पहले वाले किरायेदार कहाँ गये?" शकुन ने अधीरता से पूछा।

"उनका तबादला हो गया। वे बरेली चले गये है।" कहकर उस व्यक्ति ने द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

निराश होकर तीनों कार पर आकर बैठ गये। कार न्यू सिविल लायन्स की ओर चल दी।

"कमल अपने मित्र के साथ बरेली तो जा नही सकता।" मार्ग में ललित बोला।

"कुछ समझ मे नही आता। सामान घर छोडकर सरला के पास चलेगे। शायद उन लोगों को पता हो।" शकुन बोली।

शैलजा ने वार्ता मे कोई भाग नही लिया।

शकुन और शैलजा को देखकर रायबहादुर प्रसन्न हो उठे। उनके बिना उन्हें घर सूना सा लगता था। आनन्द विभोर होकर बोले—"आ गयीं तुम लोग! मेरा तो मन ही नहीं लगता था।"

नौकरो ने कार से सामान उतारा।

"कामेश्वर को तो बाबू श्यामसुन्दर ने अलग कर दिया है।" राय बहादुर ने ललित की ओर मुडकर कहा।

"अच्छा! क्या बात हुई?" ललित ने आश्चर्य से पूछा।

"यह तो मालूम नही।" कहकर वे शैलजा की ओर मुडकर बोले—"अब तबियत तो ठीक रहती है, बेटी?"

"हाँ, बाबू जी।" शैलजा धीमे स्वर मे बोली।

"वाह! डैडी से बाबू जी बन गया।" ठहाका मारकर रायबहादुर बोले।

"बाबू जी, हमे अभी बाबू श्यामसुन्दर के यहाँ जाना है।" शकुन ने कार की ओर बढ़कर कहा।

"सफर की थकान होगी। आराम करो अब। कल चली जाना।" रायबहादुर ने समझाते हुये कहा।

"बहुत जरूरी काम है, बाबू जी।" कहकर शकुन ड्रायवर के स्थान पर बैठ गयी। "आओ, ललित! तुम भी चलोगी, शैल?"

ललित पिछली सीट पर बैठ गया। शैलजा शकुन के पास बैठ गयी। कार तेजी से सरला के बंगले की ओर चल दी।

सरला उन लोगों को देखकर प्रसन्न हो उठी। बाबू श्यामसुन्दर भी मुस्करा कर उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़ आये।

"बम्बई से कब आये भैया?" सरला ने पूछा।

"अभी-अभी आ रहे है। बम्बई मे हमने प्रोफेसर इन्द्र की आलोचना पढी थी। सोचा, पहले कमल से ही मिलते चलें। मगर वहाँ जाकर मालूम हुआ कि उसके मित्र का तबादला बरेली हो गया है। उस मकान मे नये किरायेदार आ गये है। कमल का कही पता नही है।" ललित ने चन्तित स्वर मे कहा।

ललित की सूचना ने सरला और बाबू श्यामसुन्दर को चिन्ता में डाल दिया। सरला व्यग्रता से बोली—"हमें तो कोई सूचना ही नही मिली।"

"क्या कमल यहाँ नही आया।" ललित ने आकुल स्वर में पूछा।

"यहाँ तो नही आये। न जाने कहाँ होगे, क्या खाते-पीते होंगे, कहाँ सोते होगे? कुछ समझ मे नहीं आता!" सरला व्यथित स्वर में बोली। वह सोचने लगी कि कमल सकोच के कारण यहाँ नहीं आया। इस भयंकर शीत मे न जाने कहाँ रहता होगा। अगर कहीं उसे कुछ हो गया.... और आगे वह न सोच सकी। उसका हृदय भर आया।

"अगर आपको कष्ट न हो तो चलिए और कवियों से पूछें। शायद कुछ पता लग जाये।" ललित ने बाबू श्यामसुन्दर से कहा।

बाबू श्यामसुन्दर सहर्ष तैयार हो गये। वे दोनो कमल की खोज में चल दिये। शैलजा और शकुन सरला के पास रुक गयी।

"बम्बई की यात्रा कैसी रही?" सरला ने शकुन से पूछा।

"ठीक ही रही।" शकुन ने उदास स्वर मे कहा।

"कहाँ-कहाँ घूमी कुछ मुझे भी बताइये।"

शकुन उसे बम्बई के दर्शनीय स्थानों के विषय मे बताने लगी।

"आप चुपचाप बैठी है।" बीच मे ही सरला ने शैलजा से कहा। "कुछ आप भी बोलिये।"

"मै क्या बोलूँ? यहाँ तो टू इज अ कम्पनी थ्रिी इज अ क्राउड। मुझे कमल जी का सग्रह दे दीजिये, और फिर आप लोग मजे से बाते कीजिये।" हसकर शैलजा बोली।

सरला ने उसे सग्रह दे दिया। वह पढ़ने मे लीन हो गयी। शकुन और सरला फिर बातों मे खो गयी।

शकुन ने न तो कामेश्वर के बारे मे कुछ पूछा और न सरला ने ही उसके बारे मे कोई बात चलायी। वे बम्बई के बारे मे बाते करती रही; प्रोफेसर इन्द्र की कड़ी आलोचना की बुराई करती रही।

प्रोफेसर इन्द्र का नाम शैलजा के कान मे जैसे ही पडा, वह मुडकर बोली—"मै कल ही प्रोफेसर इन्द्र को आलोचना का उत्तर लिखूँगी। मुझे इस सग्रह की कविताए बहुत अच्छी लग रही है।"

"गीत लिखना छोडकर आलोचनाएं लिखना शुरू करोगी?" सरला ने हंसकर पूछा।

"क्या कवि आलोचक नही बन सकता?" कहकर वह फिर पढने में लग गयी।

जब ललित और बाबू श्यामसुन्दर लौटकर आये तब उनके चेहरे देखकर ही शकुन और सरला समझ गयीं कि कमल का कोई पता नही लग सका है। फिर भी सरला ने ललित से पूछा—"कोई पता चला, भैया?"

"नही।" ललित ने थके हुये स्वर मे कहा। "तीन-चार दिन पहले अखिलेश जी से उसकी भेट हुई थी . . . ।"

"कौन अखिलेश जी ?" शकुन ने उतावले स्वर मे पूछा।

"जिन्होने गोष्ठी मे ब्रज भाषा के छन्द सुनाये थे। उन्हे कमल बाजार मे मिला था। उन्होने कमल को बताया कि उनकी पत्नी काफी दिनों से क्षयरोग से पीडित है। कमल ने उन्हे दो सौ रुपये दिये। अखिलेश जी ने मना किया पर उसने जबरदस्ती रुपये उनकी जेब मे डाल दिये। उसके बाद वह कहाँ गया, कुछ मालूम नही।" ललित के स्वर मे पीड़ा उभर आयी।

और उसके बाद वातारण मे घोर उदासी छा गयी। सब चुपचाप बैठे रहे।

कुछ देर बाद शकुन ने जाने की आज्ञा माँगी। सरला ने भोजन करके जाने के लिए कहा, पर शकुन ने फिर कभी भोजन करने का वचन देकर विदा ली। शैलजा और शकुन चली गयी। ललित को सरला ने भोजन के लिए रोक लिया।

शकुन और शैलजा जब घर पहुँची तब उन्होंने प्रोफेसर इन्द्र को रायबहादुर के साथ बाते करते हुये पाया। उन दोनों को देखकर वे प्रसन्न होकर बोले—"आओ, आओ! बम्बई घूम आयी ? मेरी आलोचना पढी ? कैसी धज्जियाँ उड़ायी है कमल की ?"

शकुन ने तो अपने को सयत रक्खा पर शैलजा उबल पडी। वह व्यग्य से बोली—"आप उसे आलोचना कहते है ? व्यक्तिगत आक्षेप और गालियों के अलावा और क्या है उसमे ? मै आपकी उस आलो चना का उत्तर दूँगी और आप की ही भाषा और शैली का प्रयोग करूँगी जिससे आपको भी पता लग जाये कि उसका स्वाद पढ़ने वाले को कैसा लगता है।" और फिर वह तेजी से अपने कमरे की ओर चल दी।

"बहुत क्रुद्ध मालूम होती है शैलजा।" प्रोफेसर इन्द्र बेशर्मी से बोले।

"कई दिनों से कमल लापता है।" शकुन ने धीमे स्वर में कहा।

"तो यह बात है।" प्रोफेसर इन्द्र भयकर अट्टहास करके बोले। मेरी आलोचना पढकर मुह दिखाने की हिम्मत नही रही। भाग गया। कानपुर से। अभी तो शुरुआत है। हर हफ्ते एक लेख लिखूँगा। उसके विरुद्ध।" और वे फिर अट्टहास कर उठे।

शैलजा को लगा कि उसके कानो के पर्दे फट जायेगे। वह तेजी से अपने कमरे की ओर दौडी।

"राक्षस... ।" वह कमरे मे पहुँचकर बड बडाई।

चौबीस

कमल का अंग-अंग टूट रहा था। वह बहुत थका हुआ था। तीन दिन से पेट में अन्न का एक दाना भी नहीं गया था। आँतें सूखी जा रही थीं। पैर काँप रहे थे और आँखों के सामने अँधेरा छा रहा था। वह मन्द गति से नल के पास गया। पानी पीने के बाद वह तीसरे दर्जे के मुसाफिर खाने की एक खाली बेंच पर बैठ गया।

मुसाफिरखाने में काफी चहल-पहल थी। पर उसे लग रहा था कि वह अकेला है, एकदम अकेला है। संसार में उसका कोई नहीं—कोई नहीं। आँखें बन्द करके वह बेंच पर लेट गया।

बाबू श्यामसुन्दर ने जो चार सौ रुपये उसे दिये थे वे उसने अपने मित्रों को दे दिये थे। जब मित्र कानपुर छोडकर बरेली जाने लगा तब उसने उसके हाथ पर दो सौ रुपये रख दिये थे। कुछ दिन पहले एक पत्रिका से दस रुपये आये थे जिनमें से सात रुपये तो खर्च हो गये थे पर शेष तीन उसके पास थे। उसने सोचा था कि दो सौ तीन रुपयों में तीन-चार महीने कट जायेंगे।

जब उसका मित्र चला गया तब कमल एकदम निराधार रह गया था। कहीं सोने तक की सुविधा न थी। और उस समय उसे ललित का

ध्यान आया था। पर जब वह उसके यहाँ गया तब घर मे ताला बन्द था। परोसी से उसे यह भी ज्ञात हुआ था कि ललित बम्बई गया है। निराश होकर वह लौट आया था और उसे इसी मुसाफिर खाने की बेन्चपर अपना पुराना ओवरकोट ओढकर वह रात काटनी पडी थी।

और आज वह भूखा था—तीन दिन का भूखा। दो सौ रुपये उसने अखिलेश को दे दिये थे। वह उसे एक दिन सडक पर मिल गया था। उसकी पत्नी क्षय रोग मे घुल रही थी। उसने अनुभव किया था कि अखिलेश की आवश्यकता उसकी आवश्यकता से बडी है—बहुत बड़ी है। और इसी प्रकार उसने एक नगे भिखारी को ओवरकोट दे दिया था। अब उसकी जेब भी खाली थी और राते भी ठिठुर कर काटनी पडती थी।

कमल उठकर बैठ गया। मुसाफिरखाने मे बैठे और लेटे हुये यात्रियों पर उसने उदास दृष्टि डाली। उसे लगा कि उसी की तरह सब भूखे है—नंगे है। वह फिर बेच पर लेट गया।

कमल के वस्त्र बहुत गन्दे हो गये थे। टूटी चप्पल धूल से सनी थी। बढी हुई दाढ़ी और रूखे बाल, कीचड़ भरी आँखे और फटे हुये ओंठ देखकर यही अनुमान होता था कि वह कोई भिखारी है।

कमल को लगा, कोई उसे लकडी से कोच रहा है। उसने आँखें खोलकर देखा। एक भारी-भरकम शरीर वाला यात्री उसे अपनी छडी से जगाने की कोशिश कर रहा था।

"क्या है?" उठकर बैठते हुये कमल ने पूछा।

"उधर जमीन पर लेटो।" वह यात्री कडे स्वर मे बोला। "बेच मुसाफिरों के लिए है, भिखमंगो के लिए नही।"

कमल का शरीर क्रोध से कॉपने लगा। उसकी इच्छा हुई कि वह उस असभ्य यात्री की तोंद मे एक मुक्का मार कर कहे कि भिखारी मै नही, तू है! मगर फिर उसने अपने क्रोध को दाब लिया। बेच के कोने मे खिसक-कर दुर्बल और विनम्र स्वर मे बोला—"बिगडते क्यों हो, भाई? काफी जगह है। आप भी बैठ जाइये।"

उस यात्री ने कमल के गन्दे वस्त्रो की ओर दृष्टि डालकर फिर अपने स्वच्छ वस्त्रो की ओर देखा। कमल के पास बैठना उसने पसन्द न किया वह मुह बनाकर व्यग्य से बोला—"मै तुम्हारे पास बैठूँगा। जल्दी नीचे उतरो नही तो अभी बुलाता हूँ पुलिस को।"

पुलिस बुलाने की धमकी सुनकर कमल भड़क उठा। उसने तेज स्वर मे कहा—"जाओ बुला लाओ पुलिस को। मुझे चोर-उचक्का समझ रक्खा है क्या ? मै इसी बेच पर बैठूँगा।"

कमल पैर फैलाकर बैठ गया। आस-पास बैठे हुये यात्री हँस पड़े।

कमल की बात और यात्रियो की हँसी से चिढ़कर वह हाँफता हुआ चाय के स्टॉल की ओर गया और वहाँ खडे हुये सिपाही को बुला लाया।

"यह मुझे बेच पर नही बैठने देता।" वह छडी से कमल की ओर संकेत करके सिपाही से बोला—"मुझे गाली देता है।"

"क्यों बे, बेंच से उतरता है या नहीं ?" सिपाही कडककर बोला। "साले दुनिया भर के लुच्चे-लफगे यहीं इकट्ठा होते है। जा, भाग यहाँ से नही तो खाल उधेड दूँगा।"

कमल का रक्त खौल उठा। खड़ा होकर बोला—"मुह सँभाल कर बात करो।"

"अच्छा बच्चू, होश ठिकाने नही है क्या ?" सिपाही आगे बढ़कर बोला। "कई दिनों से तुम्हें यहाँ देख रहा हूँ। कितनी जेबे साफ की है अब तक ?"

"मै जेब काटने वाला नही, शरीफ आदमी हूँ।" कमल तेज स्वर मे बोला।

"वह तो जनाब की हुलिया ही बता रही है।" ठहाका मारकर हँसता हुआ सिपाही बोला। आस-पास के यात्री भी हँस पडे।

मोटा यात्री बेच पर बैठ गया। वह सिपाही से बोला—"आओ जमादार जी ! जरा पान-तमाखू खा लो। दिन भर खडे-खड़े थक जाते होगे।"

सिपाही भी बेच पर बैठ गया। कमल उसी प्रकार खडा रहा।

"अबे जाता है या नहीं।" सिपाही कड़कर बोला। "आज से यहाँ आया तो खैर नहीं है। यह मुसाफिर खाना है। चोर-उचक्को का अड्डा नहीं।"

अपमान की तिलमिलाहट कमल की आँखो में आँसू ले आयी। वह भूख भूल गया, शीत भूल गया। उसे याद रही अपमान की आग— दहकती हुई गर्म ज्वाला।

धीरे-धीरे वह मुसाफिरखाने के बाहर आ गया। मोटे यात्री और सिपाही का अट्टहास उसके कानो मे गूँज रहा था। वह चलता रहा, चलता रहा। उसे मालूम न था कि वह कहाँ जा रहा है, किधर जा रहा है।

और जब एक पालतू कुत्ता भौंकता हुआ उसकी ओर झपटा तब उसे होश आया।

उसने देखा, वह सरला के बँगले के फाटक पर खड़ा है।

और फिर उसे लगा कि फाटक घूम रहा है, बँगला घूम रहा है, जमीन घूम रही है। हल्की सी झलक उसे पास आती हुई सरला की दिखाई दी और फिर अंधकार . . . गहन अंधकार !

पच्चीस

कमल का कोई समाचार न मिलने से सरला बहुत चिन्तित थी। वह रात को न तो ठीक से भोजन ही कर सकी थी और न सो ही सकी थी। उसकी व्याकुलता प्रतिपल बढती जा रही थी। वह बेचैनी से काश्मीरी शाल ओढ़े बरामदे में टहल रही थी। तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क में उठ रहे थे।

सहसा जोर से कुत्ता भौंका। उसकी विचार-धारा भंग हो गयी। चौंककर उसने फाटक की ओर देखा। मलीन वस्त्र पहने क्लान्त कमल को देखकर वह तेजी से फाटक की ओर बढ़ी। उसे देखकर कुत्ता मौन हो गया। तभी उसने देखा कि कमल झूम रहा है। वह जोर से दौडी और इससे पहले कि कमल अचेत होकर भूमि पर गिरे, उसने उसे सँभाल लिया। कमल का शिथिल शरीर सरला का सहारा पाकर गिरने से बच गया।

सरला की तेज पुकार सुनकर नौकर दौड़े आये।

"इन्हें सँभालकर उठा लो।" वह नौकरों से बोली। "देखो, चोट न लगे। अरे जल्दी करो।"

नौकरो ने कमल को उठाकर सरला के पलँग पर लिटा दिया। सरला ने रजाई उढ़ा दी। फिर वह गोमती को कमल के पास छोड़कर डाक्टर

को फोन करने गयी। डाक्टर के बाद उसने बाबू श्यामसुन्दर और शकुन को भी सूचना दे दी।

सरला जब कमरे मे पहुँची तब भी कमल मूर्छित पड़ा था। उसने गोमती से रुद्धकठ मे कहा—"इन्हे क्या हो गया है ? मेरा.... मेरा दिल बैठा जा रहा है।"

"घबराओ मत, भाभी ! कमजोरी के मारे अचेत हो गया है। अभी ठीक हो जायेगा। मै अभी आती हूँ गरम दूध लेकर।" कहकर गोमती उठकर बाहर चली गयी।

सरला पलँग के पास कुर्सी डालकर बैठ गयी। लाख रोकने की चेष्टा करने पर भी उसकी आँखे भीग गयीं।

तभी कमल ने कराह कर धीरे-धीरे आँखे खोली। वह आश्चर्य से चारो ओर देखने लगा। फिर उसकी दृष्टि सरला के चेहरे पर जम गयी। सरला की रोती हुई आँखे हँस पड़ी।

"मै ...मै....कहाँ.,..हूँ ?" उठकर बैठने की चेष्टा करता हुआ कमल दुर्बल स्वर मे बोला।

"अरे, उठिये मत !" सरला ने उठकर उसे लिटाते हुये कहा। "आप अपने ही घर मे है।"

"पानी.....!"

"पानी नही मिलेगा। यह लो गरम दूध।" कहती हुई गोमती आ गयी। उसने सहारा देकर कमल को बिठाया और दूध का गिलास उसके मुह से लगा दिया।

दूध पीकर कमल फिर लेट गया। उसकी दुर्बलता कुछ कम हुई! शरीर मे गर्मी का सचार हुआ। उसने धीमे स्वर में कहा—"मै यहाँ कैसे आ गया ?"

गोमती गिलास लेकर चली गयी।

"आप फाटक पर खडे थे। तभी आपको मूर्च्छा आ गयी। मै आपको यहाँ ले आयी।" सरला ने उत्तर दिया।

कमल मुस्कराया। धीरे-धीरे उसे सब कुछ याद आने लगा। मुसा-फिर खाना, मोटा यात्री, सिपाही, और फिर भौंकता हुआ कुत्ता!

"मै भिखारी नही हूँ; चोर नही हूँ; मै शरीफ आदमी हूँ।" कमल मन्द स्वर में बडबडाया।

सरला की समझ मे उसकी बात न आयी। वह परेशानी से उसकी ओर देखने लगी।

"सेठ मुझे भिखमंगा समझता है; सिपाही चोर समझता है; कुत्ता लफंगा समझता है। मगर मै शरीफ अदमी हूँ। हूँ न?" कहकर कमल ने सरला की ओर देखा। उसकी आँखो मे आँसू थे।

सरला के हृदय मे एक तूफान सा उठा। उसकी आँखों मे आँसू आ गये।

उसी समय डाक्टर की कार पोर्टिको में आकर रुकी। एक क्षण बाद ही गोमती के साथ डाक्टर ने कमरे मे प्रवेश किया।

"क्या होश आ गया?" कमल को आँखे खोले देखकर डाक्टर ने पूछा।

सरला ने सिर हिला दिया।

डाक्टर जब नाडी देखने लगा तब कमल विरोध के स्वर मे बोला—"मै ठीक हूँ, एकदम ठीक हूँ। मुझे कुछ नहीं हुआ है।"

"आप चुपचाप लेटे रहिये।" डाक्टर ने कहा और नाड़ी, पेट और सीने की जाँच करके बोला—"कमजोरी काफी है। हजरत कई दिनों के भूखे मालूम होते है। ठंड का भी असर है। बहुत सावधानी की जरूरत है।"

उसके बाद उसने पेन्सिलिन का एक इंजेक्शन दिया। फिर गोमती को बाहर ले जाकर कहा—"इनको गर्म दूध और ब्राडी दीजिये। सीने की सिकाई करती रहिये। सुबह फिर आऊँगा।"

डाक्टर चला गया। गोमती रसोई घर में चली गयी।

"यह क्या किया आपने?" सरला सिसकती हुई कमल से बोली। "आप यहाँ क्यों नही आये? भूखे रहकर ठंड खाने की क्या जरूरत थी?"

कमल ने कोई उत्तर न दिया। उसकी आँखो की कोरो से दो आँसू निकलकर तकिये पर लुढक गये।

"आप मुझे गैर समझते है। क्या....क्या मै आपकी कोई नही? क्या आप अपने मित्र की बहन को पराया समझते है?" और फिर सरला दुखी हो कर फूट-फूट कर रोने लगी।

"रोओ मत, सरला! मै कहता हूँ रोओ मत!" कमल टूटे और दुखी स्वर में बोला। "मै इस योग्य नहीं कि मेरे लिए कोई रोये। रोने के लिए तो मै बना हूँ। रोना मेरे भाग्य मे है—अपनी माँ के लिए, पिता के लिए और उन सबके लिए जो दुखी है; दीन है, दरिद्र है, अभागे है।" बोलते-बोलते उसकी आँखो से आँसुओ की अविरल धार बहने लगी।

सरला ने अपनी साडी के अंचल से उसके आँसू पोछते हुये कहा—"आँसू व्यर्थ नही जायेगे। हर आँसू क्रान्ति के बीज को सीचेगा।"

सरला का वाक्य समाप्त भी न हो पाया था कि कमरे मे बाबू श्यामसुन्दर आ गये। उनके पीछे ही ललित, शकुन और शैलजा ने भी प्रवेश किया। गोमती भी रबर के थैले मे गर्म पानी भरकर ले आयी। थैला कमल के सीने पर रखकर गोमती ने रजाई ठीक से उढ़ा दी। फिर वह चली गयी।

उन सबको देखकर कमल ने उठने की फिर चेष्टा की मगर सरला ने उठने नही दिया।

"कहाँ गायब हो गये थे?" ललित ने पास बैठकर धीमे स्वर में पूछा।

"तुम बम्बई से कब आये?" कमल का प्रश्न था।

"कल आया हूँ। मगर तुम्हें.....!"

"तुम्हारे घर गया था। ताला बन्द था। फिर मुसाफिरखाने को घर बनाया। आज सिपाही ने चोर कहकर निकाल दिया।"

"और तब आपको यहाँ आने का होश आया।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले। "अगर पहले ही आ गये होते तो यह दशा क्यों होती?"

"मै यहाँ होश में नहीं, बेहोशी में आया हूँ। होश तो तब आया जब कुत्ता भौंका।" कमल रुक-रुक कर धीमे स्वर मे बोला—"आदमी तो

आदमी, जानवर भी मुझसे घृणा करते हैं।"

"भौकने वाले कुत्ते ही होते है, आदमी नही। प्रोफेसर इन्द्र का भौकना आपने सुना ही होगा।" इस बार शैलजा बोली।

कमल मुस्कराया। एक क्षण बाद धीमे स्वर मे बोला—"उनका मैंने लेख पढ़ा था। वे विद्वान है, पर उनका दृष्टिकोण गलत है। समय की गति को वे नही पहचानते।"

"मैंने उनके लेख का उत्तर लिखा है। कल 'विश्वमित्र' मे छप जायेगा।" शैलजा ने कहा। "और मैंने अपने लेख मे उन्ही की भाषा और शैली का प्रयोग किया है।"

उसकी बात सुनकर सभी मुस्करा पडे। शैलजा समझती थी कि कमल भी प्रसन्न होगा। पर वह व्यथित होकर बोला—"यह तो बुरी बात है। ऐसा नही होना चाहिए। अगर आप भी भौकेगी तो.....।"

और कमल की बात सुनकर शैलजा रो पडी। "कितने महान है आप? काश! प्रोफेसर इन्द्र यह जान सकते।" वह आर्द्र स्वर मे बोली। "मै अभी फोन किये देती हूँ। लेख नही छपेगा।"

कमल ने सन्तोष की साँस ली। शैलजा बाहर चली गयी।

"मुझे तो शायद पहचाना नही होगा?" शकुन शरारत से बोली।

"जिस दिन आपको न पहचानूँ उस दिन समझूँगा कि अपने आपको भूल गया।" कमल ने मुस्करा कर कहा।

'अब आराम करने दो।" कहती हुई गोमती आयी। उसके हाथ में दूध का गिलास था। दूध में दस बूँदें ब्रांडी की भी डाल दी थीं। कमल के पास जाकर उसे उठाती हुई स्नेह से बोली—"लो बेटा, दूध पी लो।"

"अभी तो पिया है।" कमल ने अनिच्छा प्रकट की।

"पी लो, बेटा!" कहकर उसने गिलास उसके मुह से लगा दिया।

कमल ने दूध पी लिया।

"अब सो जाओ।" कहकर गोमती ने रजाई ठीक की और फिर सब की ओर मुडकर बोली—"बाहर आओ सब लोग।"

सब बाहर चले गये।

कमल थका तो था ही। उसकी आँखे झपने लगी। पाँच मिनट बाद ही उसे गहरी नींद आ गयी।

× × ×

धीरे-धीरे कमल का स्वास्थ्य सुधरने लगा।

प्रोफेसर इन्द्र कमल के विरुद्ध जहर उगलते रहे; उनकी लेखनी निन्दा की आग बरसाती रही। उनकी आलोचनाओ ने हिन्दी-ससार का ध्यान कमल के काव्य-सग्रह की ओर आकृष्ट कर दिया: आलोचक गण दो वर्गो में बँट गये। दकियानूसी आलोचको ने उसके सग्रह को पागल के प्रलाप की सजा दी, नयी मान्यताओं मे आस्था रखने वाले आलोचकों ने उसे पिछले दस वर्षों मे प्रकाशित होने वाले काव्य-सग्रह में सर्वश्रेष्ठ कहा।

कमल निन्दा से न तो दुखी हुआ और न प्रशसा से फूला। वह एक तटस्थ पाठक की तरह सबकी आलोचनाये पढता रहा।

एक दिन वह सरला से बोला—"मुझे कब तक बीमार बनाये रहोगी? अब मै अच्छा हो गया हूँ। मुझे जाने दो।"

"कहाँ जायेगे?" सरला ने मन्द स्वर में पूछा।

"दुनिया बहुत बडी है।"

"यह घर दुनिया के बाहर है क्या! आप अब कहीं नही जा सकने।' सरला ने दृढता से कहा।

लेटे-लेटे मै ऊब गया हूँ।"

"आप लान में टहल सकते है।"

"मै जाना चाहता हूँ।" कमल का स्वर रूखा था।

"क्यों? क्या यहाँ कोई असुविधा है?" सरला ने दुखी स्वर में पूछा।

"मै असुविधाओं का आदी हूँ। यहाँ हर सुविधा है। इसीलिए मुझे लगता है।" कमल अपनी दृष्टि दीवार की ओर करके बोला। फिर

रुककर धीमे स्वर मे कहा—"सच बात तो यह है कि मै बिना कुछ किये तुम्हारी करुणा का अनुचित लाभ उठाना नही चाहता। मुझे जाना ही चाहिए।"

"अगर आप यहाँ अपना अधिकार नही समझते तो ..तो ..आप जा सकते हैं। मै नही रोकूँगी। मै होती ही कौन हूँ रोकने वाली?" सरला अवरुद्ध कठ से बोली। उसकी आँखो मे आँसू आ गये। वह उठकर तेजी से बाहर चली गयी।

कमल सोच मे पड गया। सरला के दिल को दुखाने की कठोरता उसमें न थी। फिर भी कब तक इस प्रकार उसके यहाँ टुकडे तोडता रहे। अब वह स्वस्थ है; परिश्रम कर सकता है। नही, उसे जाना ही चाहिए, जाना ही चाहिए।

उठकर उसने वे वस्त्र उतार दिये जो सरला ने उसे दिये थे। अपने गन्दे और फटे वस्त्र पहन कर उसने चप्पल पहनी और बँगले से बाहर चला गया।

और जब चौकीदार ने सरला को सूचना दी कि कमल बाबू चले गये हैं तब वह चुपचाप अपने कमरे मे जाकर लेट गयी। उसकी आँखों से आँसू बहते रहे।

आकाश बादलों से घिरा था। अचानक पानी बरसने लगा मानों बादल भी सरला के प्रति सहानुभूति दिखा रहे हों। हवा में भी तेजी आ गयी। सरला ठंड से थरथर काँपने लगी। उसने रजाई ओढ़ ली।

घटे भर बाद ही कमल लौट आया। उसके वस्त्र भीगे थे और वह शीत के कारण पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा था।

"मैंने जाने की कोशिश की, मगर मैं जा न सका। मैं लौट आया हूँ, सरला।" उसने कम्पित स्वर में कठिनाई से कहा।

सरला विद्युत वेग से उठकर बैठ गयी। कमल को भीगा देखकर वह घबरा गयी।

"आप जल्दी से वस्त्र बदल लीजिये। मै गर्म दूध और ब्राडी लाती

हूँ।" कहकर सरला तेजी से बाहर चली गयी।

गोमती के साथ जब वह लौटकर आयी तब कमल वस्त्र बदल कर पलँग पर रजाई ओढे लेटा था। फिर भी वह काँप रहा था।

सरला ने उसे उठाकर दूध पिलाया। खाली गिलास मेज पर रखकर उसने पूछा—"अब भी ठड लग रही है ?"

कमल ने सिर हिलाया।

सरला ने रजाई के ऊपर दो कम्बल डाल दिये। कमल फिर भी काँपता रहा। घबरा कर सरला ने उसके मस्तक को छूकर देखा। माथा गर्म तवे की तरह जल रहा था।

"अरे, आपको तो बुखार है।" कहकर वह डाक्टर को फोन करने चली गयी।

गोमती कमल के पास उदास होकर बैठी रही।

डाक्टर आया और देख-भाल कर उसने सरला को एक ओर ले जाकर कहा—"डबल निमोनिया का अटैक है। आपने इन्हे भीगने क्यों दिया ?"

सरला क्या उत्तर देती। बिचारी सिसकने लगी।

"घबराने की बात नही है। मै इजेक्शन देता हूँ। पेन्सिलिन के इजेक्शन बराबर लगेगे।" कहकर डाक्टर इजेक्शन देने की तैयारी करने लगा।

बाबू श्यामसुन्दर जब घर आये तब कमल की दशा देखकर घबरा गये। कमल का ज्वर बढता जा रहा था। उन्होने शकुन को फोन किया।

ज्वर की तेजी मे कमल बकने लगा। रह रह कर वह चौक पडता और चीखकर कहता—"मैं चोर नही हूं। मै शरीफ आदमी हूँ—शरीफ आदमी हूँ।"

शकुन भी शैलजा और ललित को लेकर आ गयी। कमल ने आँखे खोलकर सबको देखा पर पहचान किसी को न पाया।

"मुझे नहीं पहचानते ?" शकुन कमल के पास बैठकर मीठे स्वर मे बोली।

"तुम ...? कौन हो तुम ? मुझे लेने आयी हो ? मगर मैं नहीं जाऊँगा। कभी नही जाऊँगा।" कमल बुदबुदाया।

शकुन कमरे के कोने मे जाकर रोने लगी। सरला उसे समझाने गयी पर समझाते-समझाते स्वय रोने लगी।

डाक्टर ने तीसरी सुई लगायी।

"तुम मुझे पकडने आये हो? मगर मै चोर नहीं हूँ। देखो, अब तो मेरे कपडे गन्दे नही हैं। अब तो मुझे शरीफ आदमी समझते हो?" कमल ने डाक्टर का हाथ पकड़ कर कहा।

डाक्टर ने सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

कमल ने आँखे बन्द कर ली।

सरला और शकुन उसके पास आ गयी।

दीवार पर लगी घडी की सुइयाँ आगे खिसकती रहीं।

और जब शकुन और शैलजा नहीं लौटी तो रायबहादुर भी बाबू श्यामसुन्दर के यहाँ पहुँच गये।

कमल ने आँखे खोलकर सबकी ओर देखा। उसकी दृष्टि सरला की ओर टिक गयी। वह थके स्वर में बोला—"मैं यहीं रहूँगा। यह मेरा घर है। कोई बुलाने आये तो मना कर देना।"

सरला उसके मस्तक पर हाथ फेरने लगी। न जाने क्यों कमल की आँखो मे आँसू आ गये।

सहसा कमल चीखकर बोला—"देखो, मेरा सपना पूरा हो रहा है। वह देखो, दीवारें गिर रही हैं! खाइयाँ पट रही है!! और मुद रही हैं दरारें!!! मै जा रहा हूँ। मुझे रोको मत, मुझे कोई मत रोको।"

और कमल ने रजाई-कम्बल फेंककर उठने की कोशिश की। डाक्टर ने उसे फिर लिटा दिया।

डाक्टर भी परेशान था। वह फिर सुई लगाने की तैयारी करने लगा।

"मैं अब तक अपने को छलता रहा। मैंने घृणा से प्यार किया और प्यार से घृणा।" कहकर कमल रोने लगा।

उसे रोता देखकर सभी की आँखों में आंसू आ गये।

"तुम लोग क्यों रोते हो। रोना मेरा काम है। मगर अब मैं भी हँसूगा। मेरी माँ मुझे बुला रही है। अरे, उधर देखो। वह खड़ी है उस कोने में।" और इससे पहले कि डाक्टर उसकी बाँह में इंजेक्शन लगा सके, कमल का शरीर शिथिल पड़ गया।

हवा का एक झोंका आया और जीवन-शिखा कांपकर बुझ गयी।

घर में कोहराम मच गया।

और दूसरे दिन जब कमल की अर्थी उठी तो प्रोफेसर इन्द्र ने सबसे पहले अपना कन्धा आगे बढ़ा दिया। शायद वे अपने पाप का प्रायश्चित इस प्रकार करना चाहते थे।

'रामनाम सत्य है' की ध्वनि पास से दूर होती गयी।

सरला, शकुन, शैलजा और गोमती की सिसकियां हवा में गूंजती रहीं, गूंज रही हैं और शायद तब तक गूंजती रहेंगी जब तक कमल का सपना पूरा नहीं होता, जब तक दीवार नहीं टूटती, खाइयां नहीं पटतीं और मुंदती नहीं दरारें।

इति